*** दोहा ***

लेहु अभयपद भक्तमम, सुनौं लुप्तद आदेश।
प्रियाचरणपंकजशरण, गहौ कहैं मथुरेश॥

प्रियतम मम तन मन धनी, यहि मम जीवनप्रान।
इन्हें भजौ भवभय तजौ, लेहु अभय वरदान॥

* श्रीमथुरेशहरिः *

॥ मथुरेश प्रेमसंहिताकी भूमिका ॥

वेद भगवान् का वचन है कि परमात्मा न वेदों के पढ़ने से प्राप्त होता है न बुद्धि और पठन पाठनादिक से न किसी और साधन से मिलता है, जिसपर वो स्वयं कृपा करता है उसी को प्राप्त होता है, यमेवैष वृणुते तेनलभ्यः परन्तु उसके मिलने की अभिलाषा सत्संग से पैदा होती है और सत्संग उसी को मिलता है जिसपर भगवत् कृपा हो।

इस अधम शरीर को बाल्यावस्था मेंही सुखसागर, भक्तमाल, रामायन आदि के पठन का अधिक औसर मिला वोभी सत्संग ही के प्रताप से उसी समय में भगवान् का ये वचन कि जहां मेरे भक्त प्रेमसे मेरे गुणगाते हैं वहां मैं ज़रूर हाज़िर रहता हूं वैकुंठ धाम या योगीलोगों के दिल में मेरा निवास नहीं, दिल में निहायत असर करगया।

नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदयेनच।
मद्भक्ता यत्र गायंति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

॥ दोहा ॥

नहीं बसूं वैकुंठ में, ना योगिन हिय माँहि।
भक्त जहां गावें तहां, रहोंमें संशय नांहि ॥

इस भगवत् वाक्य पर विश्वास करके प्रायः भजन कीर्तन और सत्संग के समाजों में जाया करता था, उधर श्रीयुगल सरकार के परम भक्त अपने पूज्य पाद पिताजी जनाव मुन्शी भोलानाथ साहब गोलोकवासी बदायूनी वकील अदालतहाय रियासत ज़यपुर को हरवक्त भगवत् स्मरण और विष्णु पद भजन की रचना में तत्पर देखताथा, जिनकी रचना में से पुस्तक चिदानन्दप्रकाश मुद्रित होकर प्रायः हरिजनों के अवलोकन में आचुकी है, उन्ही के चरणों की कृपासे इस दासानुदास को यह लाभ हुवा कि कुछ दिनों के अनन्तर दिल में यह उत्साह उत्पन्न हुवा कि गानेकी बहुतसी चालें सुनने में बहुत प्यारी मालूम होती हैं, परन्तु विषय उनका मानुषीय प्रेम अर्थात् पुरुष का प्रेम स्त्री के साथ या स्त्री का पुरुष के साथ होता है, उसके स्थान में वोही गाने भगवत् संबन्धी हों तो क्या अच्छी बात है, इस कारण से कुछभजन ग़ज़लें ठुमरियां मांड आदिक रचना करके एक पुस्तक मुद्रित कराई गई जिसका

नाम विनयपत्रिका रक्खागया (याने मथुरेश विनय पत्रिका) वो ऐसी लोकप्रिय हुई कि एकबार की छपाई हुई पुस्तकें हाथों हाथ बटगई, फिर दोहज़ार कापी उसकी बालचन्द्र प्रेस ने स्वयं छापकर बेचदीं तौभी लोगों को तृप्तिनहीं हुई इसी अर्से में दूसरी पुस्तक मथुरेश प्रेमपत्रिका और उस के बाद तीसरी पोथी मथुरेशप्रिय संगीत विनोद छपाई गई उनका भी वही परिणाम हुवा भगवत् कृपासे इन तीनों पुस्तकों की चीजें दूर दूर तक फैलगई तब एक पुस्तक मथुरेश भजनमाला एकसो आठ पदोंकी और मुद्रित कराई गई वोभी लोकप्रिय हुई, फिर प्रेमचन्द्रोदयनाटक और अजामिलनाटक संपन्न होकर छपाये गये और विनयसुधाकर और प्रेमप्रभाकर और वर्षमहोत्सव ये पुस्तकें इसी अर्से में और तय्यार होगई, फिर नरसी नाटक भी बम्बई में छपगया और कतिपय रासलीला मंडलियों ने इन नाटकों को थियेटर की तरज़ पर तैय्यार करके उनके द्वारा भगवत् भक्तिका प्रचार किया और लाभ उठाया।

ऊपर लिखीहुई पुस्तकों में नानाप्रकार और विविध भांतके गाने राग रागनियों में आचुके थे इसलिये इच्छा और पदरचना की सर्वथा नथी परन्तु प्लेग के ज़माने में जब स्थिति मोतीडूंगरी पर कुछ समय के लिये रही उस अवसर पर सरकारने प्रेरणा करी कि गीताजी की गायन में रचना कर उस समय विचार आया कि इस आज्ञाका पालन अवश्य सर और आंखों से करना उचित है, परन्तु चित्तकी दुर्बलता से कईदिन इस व्यग्रता में रहा कि गीताजी जैसा वेदान्त फ़िलासफ़ि का ग्रन्थ और उसमें अठारा अध्याय हैं इन का उल्था देसभाषा में विशेषतः गाने में होना इस शरीर की सामर्थ से बाहिर है, यद्यपि देशभाषा में बहुत से तर्जुमें इस के मौजूद हैं, तथापि राग रागनियों में इसका बांधना और श्लोकका अर्थ भजनके अंतरेमें पूरा आजाना निहायत कठिन है, अन्त में फिर जो कृपाहुई वो लिखने में नहीं आसकती है जिसका परिणाम यह हुवा कि भगवद्गीता के अठारा अध्याय अठारा तरहके गायन में ऐसी फ़ुर्तिके साथ तय्यार होगये कि इस तुच्छजीव को हर हिस्सा उसका जिसक़दर तय्यार होताजाताथा देख देख कर आश्चर्य होताथा और दिल को जिसक़दर आनन्द प्राप्त होताथा वर्णन में नहीं आसक्ता ये पूरा सबूत इस बातका है कि इस शरीर का कोई करतब या परिश्रम या योग्यता

इस कार्य में नहीं हुई जो कुछ हुआ सरकारकी कृपासे हुवा निमित्त मात्र इस शरीर को कर्ता बनाकर खुद श्रीजी ने इस कार्यको पूर्ण करादिया ।

जब भगवद्गीता गायन में तय्यार होकर छपगई और उसका गायन में प्रचार होने लगा तो सरकार की ओर से फिर प्रेरणा हुई कि अंतिमकार्य एक और तेरे शरीर से लिया जायगा जिसकी बहुत बड़ी आवश्यकता है ।

इस तुच्छ जीवकी समझ में न आया कि वो कोनसा काम बाकी रहगया है जिसके लिये प्रेरणा होरही है अंतमें इसका भेदभी उन्ही दयालू कृपालू भक्तवत्सल महाराजने खोलदिया कि एक ऐसा संग्रह और लाभप्रदग्रन्थ और तय्यार होना चाहिये कि जिसमें श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीमद्भागवत और भक्तमाल और रामायण आदि सब ग्रन्थोंका सिद्धान्त बहुत सुगम और साधारण भाषामें आजावे और वो गद्य पद्य दोनों में हो और महात्माओं की बानी भी उसमें संयुक्त रहै और रचनाभी मनोहर हो, रामायण में लिखा है कि **(उमा दारु योषितकी नाईं, सबै नचावत रामगुसाईं)** यानी जिसप्रकार बाज़ीगर काठकी पुतली को नचाता है वैसेही परमात्मा सब जीवों को नचारहा है भगवद्गीता में भगवान् ने आज्ञा की है ।

ईश्वरः सर्व भूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रा रूढानिमायया ॥

कि ईश्वर परमात्मा तमाम प्राणियों के हृदय में विराजकर अपनी माया से उन जीवों को घुमारहा है ।

प्रयोजन इसका भी वोही है जो रामायण की चोपाइका है । और इसी गीता में दूसरा भगवत् वचन येहै कि **सर्वस्य चाँहं हृदि सन्निविष्टो** यानी सब प्राणियों के हृदय में मैंही विराजमान हूं इसकी पुष्टि इस वचन से होती है जिसको फ़ारसी में यों कहागया है कि **बेरज़ाये तो यके बर्गन ज़ुम्बद्ज़िदरख़्त,** दूसरें उस परमात्मा का नाम अन्तर्यामी है जिसके माने हैं अन्दर दिल में प्रेरणा करने वाला तो इससेभी वोही बात साबित होती है कि शरीर और इन्द्रियाँ और मन बुद्धि ये सब जड़पदार्थ हैं और इनको चेष्टा देनेवाला वोही चैतन्यदेव परमात्मा है सिद्धान्त ये निकला कि हरएक शरीर में मन बुद्धि आदिक जितने कल पुर्जे हैं वो मेशीन के समान हैं इस्टीम के

अंजन या बिजली की ताकत से जैसे मेशीन चलती और वगैर उसके चेष्टा रहित रहती है इसीप्रकार चैतन्यदेव के बिदून सारी इंद्रियां मन बुद्धि आदिक सब निकम्मे हैं तो ऐसी स्थिति में हरएक संकल्प जो ज्ञानवान मनुष्य के हृदय में उठता है वो परमात्मा काही हुक्म समझना चाहिये इसी को आकाश वानी कहते हैं जब ये जीव अपनें स्वरूप को भूलकर अहंकार के आधीन होजाता है और प्रत्येक कर्मका कर्त्ता अपने को मानकर ऐसा निश्चय करलेता है कि मैंने अमुक कार्यकिया मैं चलता फिरता खाता पीता ऐशो आराम को भोगता हूं तो अपने आप शुभाशुभकर्म फलके बन्धन में फंसजाता है, यदि अहंकार को मिटाकर परमात्मा को ही कर्त्ता धरता मानले तो बन्धन से मुक्त होना सुगम है. इस विषयका इसी पुस्तक के सातवें सतसंग में बहुत विस्तार के साथ दृष्टांतों के सहित बयान होनेवाला है यहां प्रयोजन इतना ही है कि इस शरीर से जो कुछ होरहा है और होचुका यानी पदोंकी रचना या भगवद्गीता का गायन मे तर्जुमा या इसग्रन्थ की रचना का काम ये सब परमात्मा काही कृत्य है और एकादशी के सत्संग से जो लाभ सत्संगी भाइयों को पहुंच रहा है वो सब उसी अंतर्यामी का करतब है निमित्त मात्र वो चाहे जिस शरीर को लोगों की नज़र में किसी कार्यका कर्त्ता बनादे ।

नितान्त ये अधम शरीर किसी धन्यवाद और प्रशंसा के योग्य नहीं है प्रत्युत ये शरीर उस कृपालु परमदयालु दीनबन्धु करुणासिंधु भगवान् सर्व शक्तिमान् का धन्यवाद करता है कि उसने ये सेवा इससे ली ।

मैं सेवा प्रभुकी करत, अस मत कर अभिमान ।
प्रभु सौंपी सेवा तुझे, धन्य भाग निज जान ॥

जब ये सेवा मिली तो येबात ध्यान में आई कि आज कल नई रोशनी के लोग नाविल और ड्रामा के बहुत उत्सुक हैं और हिन्दी भाषाकी सैकड़ों पुस्तकें मौजूद हैं जिनसे हिन्दी ज़ुबान के जानने वाले लाभ उठारहे हैं, परंतु उरदूभाषा में कोई ऐसा संग्रह नज़र नही आता जिसके अवलोकन से उरदूजानने वाले लाभ उठासकें अतः उरदूभाषा और उन्हीं अक्षरों में इसका लिखना नाटक की रीतिपर नियत हुवा और प्रेरक इसका स्वयं सर्वज्ञ परमत्मा है इसकारण से जितना हिस्सा इस पुस्तक का कलमसे निकलता गया आश्चर्य जनक और आत्मा को सुखदायक प्रतीत हुवा अचरज इस बात का कि इस शरीर ने पहले

कुछ सोचा विचारा नहीं परमात्माका ध्यान करके लिखने को बैठा और अपने आप वो चमत्कृत लेख लेखनी से निकलते गये कि समाप्ति पर जब उसका अवलोकन किया तो अचम्बाहुवा कि ये विषय बिना सोचे विचारे क्योंकर और कहांसे आगये, पहले जो एकादशी का जलसा इस स्थानपर होताथा उसमें केवल भजन गायेजातेथे और कतिपय सज्जन भक्त लोग एकत्र होजाते थे, बादको प्रेरणा हुई कि चारपांच घन्टे तक केवल भजनकीर्तन ही होता है, इसकी जगह कुछ व्याख्यान भी हुवाकरै तो अधिक लाभदायक होगा, तबसे भक्तमाल में से किसी एक भक्त की कथाभी हरजलसे में होनेलगी, बादको जब भगवद्गीता गायन में तैयार होगई तो एक अध्याय का गानभी होनेलगा और सत्संगियों की वृद्धि होने लगी, फिर जब कि इस ग्रन्थका आरंभ होगया और पंदरह रोज़में जिसक़दर हिस्सा इसका तैयार होकर एकादशी के जलसे में सुनाया जाने लगा, उसवक्त से सत्संग को दिन प्रतिदिन उन्नति होनेलगी, यहां तक कि जो जगह सत्संग के लिये नियत है, अब संकुचित प्रतीत होती है, और केवल इसग्रन्थ के सुनने के लिये बहुधा हरिभक्त सज्जन लोग एकत्र होजाते हैं और उस के समाप्त होते ही विदा होजाते हैं।

इन कारणों से सिद्ध होता है कि यह प्रेमसंहिता अतिही लोकप्रिय और रुचिकर हैं, उपदेश तीन तरह का होता है, एक प्रभुसम्मित, दूसरा मित्रसम्मित, तीसरा कान्तासम्मित, प्रभु सम्मित उसे कहते हैं कि राजा महाराजा या हाकिम जो हुक्म दे उसमें किसी दलील को औसर नहीं होता आज्ञा पालन ही करना पड़ता है जैसे राजा महाराजा के जारी किये हुये क़ानून और वेद और शास्त्रों की आज्ञा संध्यावन्धन वग़ैरा की पालना आवश्यक होती है, दूसरा मित्र सम्मित उपदेश वो है कि एक मित्र अपने मित्रको समझाता है और उसके हृदुगत करने को दलीलें भी साथ साथ पेश करता है और प्रश्नोंका उत्तर भी देकर उसका समाधान करदेता है।

तीसरा कान्ता सम्मित उपदेश वो है कि स्त्री अपने पतिको समझाती और इस प्रकार वर्णन करती है कि उसके सुनने से चित्त न हटे उसमें दृष्टान्त को अधिक काम में लाती है कि अमुक स्थानपर ऐसा हुवा और ऐसा न करने से ये परिणाम हुवा।

इसीभांत ये नग़मय प्रेम दूसरे और तीसरे प्रकारका उपदेश है पहली प्रकारका नहीं है अर्थात् युक्ति और दृष्टान्तों के साथ हरएक बात समझाई

गई है येही कारण इसके अधिक लोकप्रिय होने का है, केवल प्रमाणों पर इसका निर्भर नहीं युक्ति संवलित भी है।

एकादशी के सत्सङ्ग में जो लोग शरीक होकर इसको सुनते हैं उनके दिलोंपर इसका जो कुछ असर होता है वहही जानते हैं।

यानी योगसाधन के ज़रिये से समाधि का आनन्द वरसों के अभ्यास के वाद दो चार मिनट के लिये मुश्किल से हासिल हो सकता है वह इसके श्रोताओं को हर एकादशी के जलसे में तीन २ और चार ४ घंटे तक प्राप्त होजाता है और प्रेमके आँसू तो किसी वज्रहृदय की आँखों से जारी न होते होंगे।

एकादशी के असली माने ये हैं कि दश इन्द्रियां और ग्यारवां मन एकाग्र होजावें, दीन और दुनिया की कुछ भी खबर न रहै शरीरकी सुध भूलकर परमात्माकी तरफ़ सारी इन्द्रियां और मन झुकजावें, यह वात न भूखों मरने से प्राप्त होसकती है, न और किसी साधन से इसी को पातंजलि महर्षि ने योग कहाहै। (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः)

पस इस आनन्द का कारण यह पुस्तक और महत् पुरुषों का एकत्र होना है यह ही असली सत्संग है जिसकी महिमा महात्मा लोगों ने जप तप वग़ैरा सबसे ज़ियादा वर्णन की है।

तात वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इकअंग।
तुलेन तासों सकल मिल, जो फल लव सत्संग॥

इस में कोई सन्देह नही होसकता कि सत्संग के द्वारा वडे वडे कठोर चित्त और विमुख लोग निहायत नर्म और भगवत् परायण होजाते हैं जैसा कि वर्त्त मान काल में एकादशी के सत्संग के द्वारा प्रगट हो रहा है।

इस संग्रह को सात सत्संग में विभक्त किया गया है क्यों कि नग़मा राग को कहते हैं और गाने में सात सुरही होते है पहला हिस्सा जो मुद्रित हो चुका है चार सत्संगों पर विभक्त है पहला सत्संग वैराग उपदेश (१) दूसरे में कर्मयोग ज्ञानयोग, भक्तियोग की व्याख्या और प्रेम शब्द का अर्थ है (२) तीसरे सत्संग में हठयोग और राजयोग और उनके साधन बयान होकर प्रेमकी श्रेष्ठता साबित कीगई हैं (३) चौथे में प्रेमलक्षणाभक्ति और महात्माओं की वानी है (४) इसके आगे पांचवां और छटा सत्संग तैयार होकर सुनाया जा चुका है और उर्दू में छपभी चुका है, लेकिन पांचवां और छटा सत्संग प्रथम भागसे अधिक होगया है इसलिये उन दो सत्संगों की जिल्द अलहदा रक्खीगई, जो प्रथम भाग से अधिक है अंतिम सातवां सत्संग तीसरी जिल्द में प्रकाशित होगा, और उसमें विशेष करके प्रश्नोत्तर भगवद् भक्ति और अवतारादि संबंधी लिखेगये हैं

पाठकगणों से निवेदन है कि प्रथम भागको अवलोकनकर के दत्तचित्त होकर इस के विषय में अपनी संमति प्रकाशितकरें और जोकुछ संदेह उत्पन्नहो उनको भी प्रगटकरदे वें आयन्दा सत्संगो में उनके उत्तर निवेदन करादियेजावेंगे।

यह निवेदन भी आवश्यकहै कि इस तुच्छप्राणी में न कोई विद्यावलहै न पूर्णयोग्यता किसी भाषा में रखता है और केवल हिन्दीभाषा के रसिक आरंभ से हां प्रेरणाकर रहे हैं कि देव नागरी अक्षरों में ये किताबलिखी और छपाईजावे उन के हुक्म की तामील में नोवत इसकी देवनागरी में लिखेजाने और छपने की पहुंचगई और हिन्दी में नाम इसका प्रेमसंहिता रक्खागया।

आशा है कि इस मन्दमति की अयोग्यता पर दृष्टि न देकर तात्पर्य को ग्रहण करें, और परमात्मा में प्रीति पैदा होना येही मुख्य प्रयोजन इसका है, जो जिज्ञासु हैं उनको तो यह संग्रह प्राणोंसे भी अधिकप्रिय होगाही, परन्तु नई रोशनी वाले, जेन्टिलमेन महाशय भी यदि थोडासा अपना अमूल्य समय इसके अवलोकन में व्यय करेंगे तो अवश्य अध्यात्म विद्या और जीवनमुक्ति का लाभ प्राप्तकरेंगे, पूर्ण विश्वास है।

॥ पद्य ॥

यों फ़िक्र गर्चे दिल में तेरे सौ लगींरहै * लेकिन यह शर्त है कि उधर लौलगीरहै
मिलने या नमिलने के वो मुख़्तार आपहैं * पर तुझको चाहिये कि तगोदौ लगीरहै

॥ दोहा ॥

अति मतिमंद गँवार मैं, विद्या धन से हीन।
अधम पतित अतिनीचजन, पामर बुद्धि मलीन॥
श्री मथुरेश चरण शरण, गही ओट भरपूर।
अधम उधारन विरद निज, पालन करत हुज़ूर॥
सखसेने कायस्थ कुल, जनम्यो ये मतिमंद।
राखत आस भरोस दृढ, द्रवें अवशि व्रजचंद॥
तोतिल बानी बाल की, सुनि रीझत पितुमात।
प्रेमसंहिता को अवश, बांच रीझिये तात॥
कृपाकरें निज दास पर, स्वामी नित्य हमेश।
मथुरादास ग़रीब पर, द्रवौ प्रभू मथुरेश॥

निवेदक, हरिदासानुदास मथुराप्रसाद.

श्रीमथुरेश प्रेमसंहिता के विषयों का

सूचीपत्र।

॥ गानेकी चीजों की सूची ॥

पुस्तक मिलनेका पता—

महन्त. वृद्धिचन्द्रजी जगतूचन्द्रजी.

सनातन जैन का उपासरा,

सांगानेर दरवाजा,

जयपुर, (राजपूताना)

* श्रीगोपीजनवल्लभोजयति *

॥ श्रीमथुरेश प्रेम संहिता ॥

(प्रथम भाग)

मथुरेश नगमय प्रेम उर्दूका भाषानुवाद,

अहा !!! कैसी सुहावनी मनभावनी ऋतु वसन्त वहार है, व्रज भूमिकी महिमा और शोभा अपरम्पार है, हर वन और उपवन सघन सुहावन है, जिसे देखकर मन सबका मगन है, श्यामढाक कैर करीर कदम्ब केसू हारशृंगार फूले हुये कैसे सुन्दर मनोहर प्रतीत होते हैं, मानो प्रेममें मगन तन वदनकी सुध भूलेहुये हैं ॥

जमनाजी लहराती हुई प्रेमकी तरंगें फैलाती कोसोंतक व्रजभूमि को सींच जंगलको मंगलमय बनाती हैं उमंगसे भरी तनमें नहीं समाती हैं । वेला, चमेली, मोतिया, गुलाव, रायवेल आदि सघन और प्रफुल्लित नाना सुगंधित फूलो से लदीहुई लतायें और फूले फलें वृक्ष सुमनमय बनेहुये उपवनों का जोवन बढ़ारहे हैं श्यामतमालादिक अतिही हरित उमंग से हिलमिलके कुंजरूपमें श्यामछटाका आनंद दिखारहे हैं ॥

अहो कैसी मनोहर गिरिराजकी तरेटी है मानो सारे पृथ्वीतल और स्वर्गस्थलकी सोभा इसी जगह विश्राम लेती है ऐसा रमणीक व मनोहर और वहारदार वास्तवमें कोई स्थान नहीं और इस पवित्र भूमिके सबसे श्रेष्ठ मानने में किसीको संशयस्थान नहीं ॥

॥ ग़ज़ल ॥

प्रेमही सार है संसार में कुछ सार नहीं ।
जीना बेकार है महबूबसे गर प्यार नहीं ॥
जोग जप तपभी करो ज्ञानी बनो मुक्तभीहो ।
प्रेमबिन होता है दिलदारका दीदार नहीं ॥
गर ज़रासा भी हरि प्रेमका हो दिलमें सरूर ।
लुत्फ़े शाहीकी वहां कुछभी तो मिक़दार नहीं ॥
दिलमें पैदा हो तड़प दर्द बिरहकी गर आग ।
कबहै मुमकिन कि करै प्यार वो दिलदार नहीं ॥
प्रेमियों पर है वो कुर्बान दयालू मथुरेश ।
क्या किया जी के कियां ऐसे को गर यार नहीं ॥

उधर एक मुसाफ़िर व्योपारी जिसका नाम सेठ जीवाराम है अपनी नई व्याहीहुई दुलहन के द्विरागमन की विदा कराकर उसके साथ एक सुशोभित रथमें सवार बसन्तकी बहार देखता और अपनी चन्द्रबदनी सुकुमारी प्यारी पत्नी को दिखलाता हुवा मकान को जारहा है । उस ने सन्तकी ज़बानी सुरीली तान सुनकर अपनी प्यारी स्त्रीसे कहाकि प्रानप्यारी ध्यान देकर सुनो ! और देखो !! वो साधू कैसी अच्छी धुनमें गाताहुवा इधर आरहा है अपनी मनोहारी सुखकारी आवाज़ से चेतन मात्रको लुभारहा है । सेठानी सुमति जिसका नाम है कान लगाकर उस तानको सुनकर और साधू को दूरसे देखकर कहती है ॥

सुमति-प्राणनाथ ! यह साधू कोई बडा महत्मा मालूम होता है और इसके रागमें अजब तरहका वैराग्य

रमाहुवा है । रथसे उतरकर इसको दण्डवत प्रणाम कीजिये और इस रागका मतलब ध्यानदेकर समझ लीजिये ॥

सेठ—प्यारी तुम ठीक कहती हो । मेरा दिलभी यही चाहता है । दोनो रथसे उतरकर महात्माकी तरफ़ बढकर दंडवत प्रणाम करते हैं महात्मा आशीर्वाद हाथके इशारे से देकर गाताहुवा आगे बढता है । सेठ सेठानी कुछ दूर महात्माजी की गाईहुई चीजको गौरसे सुनते हुये उनके साथ चलेजाते हैं महात्माजी उनकी तरफ़ देखकर फ़रमाते हैं ।

महात्मा—तुमलोग क्यों हमारे पीछे चले आरहे हो अपने रस्ते क्यों नहीं जाते ॥

सेठ—(हाथजोडकर) महाराज संसारी जीव आपके दर्शनों से अपने पातक मिटाते और आनन्द पाते हैं इसलिये साथ चलेआते हैं । कृपाकरके जो राग आप गाते हैं उसका अर्थ समझाकर हमारा भी कल्यान करदीजिये । यह बिनती हमारी मान लीजिये ॥

महात्मा—भाई तुम मुसाफ़िर दिखाई देते हो अपना रस्ता लो इन बातों में क्या हाथ आयेगा तुम्हारा समय वृथा जायेगा चले जाओ हमारे ध्यानमें विघ्न न डालो गृहस्थी आदमी का साधुवों से अधिक प्रसंग अच्छा नहीं । जाओ हमारी आज्ञा पालो ॥

सेठ—महाराज ! आपकी आज्ञा हमारे सर आँखों पर है परन्तु चलते फिरते किसीका कल्यान करदेने में क्या डर है । दासका निवेदन एतावन्मात्र है कि जो कुछ आपने

॥ कवित्त ॥

पैसे बिन मात कहै पूत तो कपूत भयो, पैसें बिन भ्रात कहै मेरो नहीं भाई है। पैसे बिन त्रिया निज पतिहूं को त्यागेन, पैसें बिन लोग कहै मेरी ना लुगाई हैं ॥ पैसे बिन राजामहल फटक न पावे कोई, पैसे बिन जोगी जती करै निठुराई है । पैसाही हैं करामात पैसाही है तात मात, पैसाहीं की दिनरात सार सिवकाई है ॥

(और महाराज मैंने कलदार रुपयेकी महिमा सुनरखी है वोभी निवेदन करताहूं)

भज कलदारं भज कलदारं कलदारं भज मूढमते ॥

आज कलदार लियो अवतारा, कलजुग में याही को सारा । तुरत रेल अरु तार उतारा, एक करन सबको आधारा ॥ भज कलदार मू० ॥ भजन करे याको बड़भागी, भजे नही सो परम अभागी । लेवन लगन परमपदलागी, रातदिवस रहिये अनुरागी ॥ भज कलदार मू० ॥ जोगी जंगम जोवत जती, साध सेवड़ा सेवत सती । ज्ञानी गिनत इसीको गती, भगवत यही यही भगवती ॥ भज कलदारं मू० ॥ जब कलदार पास होजावे, दीन होय नहि दांत दिखावे । चीनी चावल घी चलआवे, खूब खाय आनंद उडावे ॥ भज कलदारं मू० ॥

महाराज महात्माजी जगत में जोकुछ चिमतकारी है धनकी है । यारी है तो धनकी नारी है तो धनकी और तो क्या मनुष्य जन्मही धनके निमित्त है इसलिये आप यों गीत गावें तो उचित है ।

सार दौलतही है संसार में कुछ सार नहीं ।
जीना बेकार है उसका कि जो ज़रदार नहीं ॥

महात्मा—अच्छा बाबा! तू कहता है वोही ठीक होगा, हमको क्यों रोकता है जानेदे तू अपने ख्याल में मस्त, हम अपने हालमें मस्त ॥

इतना कहकर महात्मा क़दम आगे बढ़ाते हैं। सेठ आगे बढकर क़दमों में गिरता है और चरण पकडकर अर्ज़ करता है ॥

सेठ—नहीं हजूर यह बात कदापि न होगी, आप मालूम होते हैं बडे योगी, या तो आप मुझे समझा दीजिये, या मेरा कहना मान लीजिये, मुझे अपना दास मानकर सच्चा सेवक जानकर ज़रूर कृपा कीजिये ॥

महात्मा—अच्छा सेठ! तू हटही करे है। और यथार्थ बातका निश्चय किया चाहे है तो कहीं एकान्तमें बैठकर सत्संग कर। परन्तु अपनी स्त्रीको कहीं ठिकाने बैठाकर आजा। हम उस वृक्षके नीचे मिलेंगे तू इसको कहीं पहुं-चाकर या रथमें बिठलाकर चलाआ ॥

सुमति—(हाथजोडकर) महात्माजी महाराज! दासीने कोनसा अपराध किया जो आपने दूर जानेका हुक्मदिया। क्या परमात्मा ने पुरुषों कोही उपदेश सुनने का अधिकारी बनाया है। स्त्रीके कल्यान का मारग नहीं बताया है।

महात्मा—पुत्री! तू एकतो स्त्रीकी ज़ात है। दूसरे अवस्था तेरी अभी एसी बातों के सीखने योग्य नहीं। तू बुरा न मान तेरे पतिके उपदेश सेही होगा तेरा कल्यान। सुहागन स्त्रीका गुरु और देव जो कुछ है उसका पतिही है तुझे और उपदेश सुनने की आवश्यकता नहीं है ॥

सुमति–महाराज ! आपकी आज्ञा जो कुछभी हो सरपर है । परन्तु ज्ञानकी बात सुनने में क्या डर है । जब स्त्रीकी ज़ात अज्ञान से भरी है तो उसको ज्ञान चरचा सुनने की ज़रूरत बडी है । और स्त्रियों की अविद्या पहले भी महात्मा लोगो ने उपदेश सुनाकर दूर करी है । देवहुति स्त्रीको कपिलदेव महाराज ने सांख्य शास्त्रका उपदेश किया । गार्गी और मैत्रेयी स्त्रियोंको याज्ञवल्क्यजी मुनि ने ज्ञान दिया । यह बातें मैंने सुनी हैं सो क्या सत्य नहीं हैं । और पांच बरसकी अवस्था में ध्रुवजी को नारदजी ने ज्ञानशिक्षा दीथी तो दासीकी अवस्था उसकी अपेक्षा से कम नहीं है । इसलिये कृपा करके दासीको सत्संगमें बैठकर सुनने की आज्ञा ज़रूर होनी चाहिये । दूसरे मेरे स्वामि भोले भाले सीधे सुभाव वाले हैं । दुनिया के प्रपंच से निराले हैं । न जाने आपके उपदेशका कैसा असर हो । इसलिये भी दासीको आपके उपदेश सुनने की ज़रूरत है । मेरी स्त्रियों वाली मत है क्षमा कीजिये और सत्संग में बैठकर सुनने की आज्ञा दीजिये ॥

महात्मा–अच्छो बेटी ! तू समझदार प्रतीत होती है । इसलिये तुझे भी सुनने की आज्ञा देताहूं । परन्तु यह कहे देताहूं कि चुपचाप ज्ञान चरचा सुनती रहना । बीचमें कोई ऐसी बात न कहना जिससे सत्संग में भंग होजावे ॥

यह तीनों गिरिराज की तलेटी के एक एकान्तस्थान में चलेजाते हैं वहां बैठकर दोनो बडे प्रेमसे महात्माजी के उपदेश पर कान लगाते और ध्यान जमाते हैं (सत्संग शुरू होता है)

॥ पहिला सत्सङ्ग, वैराग्य उपदेश ॥

महात्मा—सुनो सेठ ! धन दौलतकी बडाई तुमने की हमने भी सुनली परन्तु ज़रा इसबात को विचारो कि दौलत के पैदाकरने में कितना कष्ट और रक्षा में कैसी आपत्ति है। धन कमाने में मनुष्य कैसी आपदाओं को सरपर लेता है मर पचकर जान तक खोदेता है धर्म ईमान का कुछभी विचार मालके लालच में नहीं रहता है । मालदारों के नख़रे क्या धक्के तक सहता है । जब कुछ रुपया जमा करलेता है तो निन्यान्वे के फेरमें पडकर उसके बढाने की चिन्ता में दिनरात व्याकुल बना रहता है और जब बडी कठिनाई भोगकर दश बीस हज़ार जमा कर पाता है तो उसकी रक्षा करना कठिन होजाता है । चोर, डाकू, ठग आदि के पंजों से निकलना और दौलतको स्थिर रखना कठिन नज़र आता है । कभी खोटी संगतमें फँसकर पूंजी खोबैठता है । कभी कपूत सन्तान के हाथसे धनका नाश देखकर रोबैठता है ॥

॥ दोहा ॥

छिन भंगुर धनमाल है, कभू देत नहीं साथ ।
एक हाथमें कालतौ, आज दूसरे हाथ ॥

इस परभी अधिक यह कि एक दिन अपने सारे जनम की कमाई छोडकर दुनियां से चलदेना पडता है ॥

॥ पद्य ॥

चंचल मायामें चित्त लगाया, यही इस कायाका कर्तव जाना ।
आवतमें अतिही दुखदाई, रखावत में बहु संकट माना ॥

त्यागके साथ पराये के हाथमें, यह धन जात नहीं सकुचाना ।
अन्तमें सोचत रीतो चलो, कर मींडत मायामें क्यों भरमाना ॥

किसी के साथ आजतक न लक्ष्मी गई न जावेगी, मौत पलभरमें लेजावेगी, मान प्रतिष्ठा सामग्री सब यहां ही धरी रहजावेगी, केवल तृष्णा और अपनी करतूत साथ जावेगी।

शेर—छोड़ना दुनियाका इकदिन है जरूर ।
चार दिनको रंज हो या हो सरूर ॥
पांऊ धरीते थे जिनके रोवरू जाते हुये ।
कासये सर उनके देखे ठोकरें खाते हुये ॥

देखो कैसे कैसे नामी राजा पादशाह गुज़र चुके हैं किसरा अफ़रासियाव वगैरा २ और उनके महलात पर अब मकड़ी के जाले पर्देदारी कर रहे हैं । और बजाय नौबत नक्कारों के उल्लू बोलते हैं । येही अर्थ नाचे लिखी हुई फ़ारसी भाषा के पद्यका है ॥

॥ पद्य ॥

चश्मे इबरत से कुशाओ हाले शाहांरा निगर ।
ता चसां अज़ गर्दिशे गरदूने गरदां शुद ख़राब ॥
पर्दादारी मेकुनद वर ताक़े किसरा अनकबूत ।
बुम्द नोवत मेज़नद वरगुंवदे अफ़रासियाब ॥

अरे भाई क्षणिक जीवन का कुछ भरोसा नहीं ।

ज़िन्दगी का कुछ भरोसा दारे फ़ानी में नहीं ।
बुल बुले को एक दमकी आस पानी में नहीं ॥

आदमी हज़ारों सालके सामान करता है यह भारी नादानी है, मौत की ख़बर नहीं कब आजाती है ।

आगाह अपनी मौतसे कोई बशर नहीं ।
सामान सौवरसका है कलकी ख़बर नहीं ॥

दुनिया को सराय या मुसाफ़िर ख़ाना के समान समझना चाहिये । दिलको इस में हरगिज़ न लगाना चाहिये ॥

किसीका कन्दा नगीने पे नाम होता है ।
किसी की उम्रका लबरेज़ जाम होता है ॥
अजब सरा है यह दुनिया कि जिसमें शामोसहर ।
किसीका कूच किसीका मुक़ाम होता है ॥

और भी कहा है ।

न जहां मे किसीका क़याम रहा
यह दुरोज़ा मुसाफ़िर ख़ाना है ।
जो अदमसे वजूद में आयाथा क़ल
वही आज अदमको रवाना है ॥
पये गुल न खिज़ां है न है गुलचीं
पये सैद नदाम न दाना है ।
जिसे ज़िन्दगी कहते हैं लोग उफ़क़
वो कज़ाका खुद एक बहाना है ॥

जिस समय मौत आती है सारी तदबीर निसफल हो जाती है । बुद्धि और चतुराई खाकमें मिलजाती है ॥

बनाओ लाख तदबीरों से कोई ढालहिकमत की ।
नहीं टलने का हरगिज़ वार शमशीरे क़ज़ाका है ॥

जब ज़िन्दगी का यह हाल कि मौतसे एक दमके लिये बचना मुहाल तो वृथा है यह खयाल कि हमारा है धनमाल ॥

सिकन्दर पादशाह ।

जिसके प्रतापी और वडभागी होनेका वडाभारी सबूत यह है कि अवतक लोग साधारन वातचीत में कहते हैं कि फलां शख्स तक़दीर का सिकन्दर है । उसके पास वडे २ नामी हकीम और वेशुमार दौलत और वडीभारी सेना मोजूद थी । जब मौतकी घडी आई तो उसने कुल हकीमों को बुलाकर कहा कि जो कोई किसी हिकमत से मुझे एकघन्टे के लिये ज़िन्दा रखले मैं उसे आधाराज देताहूं । परन्तु घंटा कैसा एक पलभी कोई उसको न जिलासका । उसकी बुढिया मा जिन्दा थी जिसको अपने सिकन्दर से सपूत वेटेकी जुदाई सहन नहीं होसक्ती थी सिकन्दर ने मरने से पहिले यह वसीअत की ॥

(१) जनाज़े के साथ कवरस्थान तक कुल ख़ज़ाना और सारी फ़ौज और कुल हकीमों का समूह जावै ॥

(२) दोनों हाथ कफ़नसे वाहिर जनाज़े में रखेजावें ॥

(३) एक इलाक़ा ऐसे शख्स की जागीर में दिया जावे जिसके यहां किसी अज़ीज़की मोत न हुई हो ॥

अन्तमें पहली और दूसरी वातकी तामील तो होगई परन्तु ऐसा कोई घराना सारे राज्यमें नही मिला जिसमें किसी प्यारेकी मोत न हुई हो । इस वजहसे तीसरे अम्रकी तामील न होसकी ॥

नतीजा यह निकला कि दुनियांदारों के दिलमें ऐसा पछतावा न रहजावे कि इलाज करने वाले अच्छे वैद्य हकीमों के न मिलने या रुपया पास न होने या आदमीयों

की कमी के सबबसे अमुक मनुष्य मरगया देखो सिकन्दर पादशाह इतनी सामग्री होते भी मृत्युका ग्रास बनगया और सबको छोडकर ख़ाली हाथ जाता है ॥

सिकन्दर जब चला दुनियासे, दोनो हाथ ख़ाली थे ।
मुहैया गरचे सब असबावे, मुल्की और माली थे ॥

इसके साथही यह बातभी साबित होगई कि दुनिया में कोई खानदान ऐसा नही है जिसमें किसी अज़ीज़ की मौत न हुई हो ॥

अब ग़ौर करनेकी बात है कि जब अवश्य होनहार देहका पतन है और मौतकी रोकके लिये असाध्य सारे जतन हैं । उधर संबन्ध और नातों का मानना कि अमुक मेरा भाई है अमुक स्त्री मेरी अमुक पुत्र या पुत्री या मित्र मेरा है । यह सब अविद्या रूप अंधेरा है तो केवल परमात्माही सत्य और हितू तेरा है । सच कहा है ॥

॥ सवैया ॥

कोऊन काहूको मात पिता पति, पत्नी न भ्रात ये झूठेहैं नाते ।
हंस अकेलो विदाजबहोत, कोऊ इक पैंडहु संग न जाते ॥
दौलत माल ख़ज़ाने रिसाले, बेगाने के हाथ धरे रहजाते ।
तन्त उपाय यही इक अन्तमें, श्रीमथुरेश भजे सुखपाते ॥
रावण से रणधीर महाबली, भीम से वीर कहां मदमाते ।
दारा सिकन्दर शाह महीधर, नष्टभये जो रहे इतराते ॥
देहको नेह करै नर मूरख, खेह के राखनको ललचाते ।
पंडित तो गुन मुंडित वेजन, जो मथुरेश में चित्त लगाते ॥

सुनो! भैया सेठ !! यह संसार एक मायाका सपना है; जिसमें कोई भी नहीं अपना है; माया की चाहमें व्यर्थ कायाका तपना है; सारतो प्रेमसे हरिनाम जपना है ॥

॥ मुसद्दस ॥

शक्लो सूरत जो मिली शक्ल भी सूरत भी गई ।
शक्लके साथही सब खसलतो सीरत भी गई ॥
मरते थे नाम पे हम इज्जतो हुरमत भी गई, से
मर्तबत शोहरतो तौकीर भी सौलत भी गई ॥
वहम थे वहम थे दुनियामें सभी नामो निशान ।
गौरसे देखातो बस ख्वाबका मनज़रथा जहान ॥
नींदमें सोये बने ख्वाबमें हम मुल्कके शाह ।
अरवली में थी हमारी कदरो इज्ज़तो जाह ॥
हुक्मरानी के तमाशे भी अजब थे वल्लाह ।
आंख जब खोली वही हमथे वही हसरतो आह ॥
ख्वाब में ख्वाब का अन्दाज़ो तमाशा देखा ।
ख्वाब में बहरोबरो जंगलो सहरा देखा ॥
ज़रो ज़न और ज़मीं देखलो सब धोके हैं ।
याँ मकां और मकीं देखलो सब धोके हैं ॥
ख़ातिमो मोहरो नगीं देखलो सब धोके हैं ।
इनके हां और नहीं देखलो सब धोके हैं ॥
धोके में धोके हैं और खाता है धोका इन्सां ।
धोके में जिस्मकी बरबाद हुई रूहे रवां ॥
कभी इज्ज़त कभी ज़िल्लत कभी रुसवाई है ।
कभी नादानी की हर्कत कभी दानाई है ॥

कभी बेसब्रि कभी सब्रो शकेबाई है ।
किसलिये ऐसे तमाशो का तू शैदाई है ॥
जीस्त और मौतके नज़्ज़ारे जो देखै इन्सां ।
फिर वो क्यों भूलके इन खेलोंमें खोदेता है जां ॥
राज करतेहुये सब राजे चले राजको खो ।
बन्दगी करके चले आबिदो मुर्त्ताज़े निको ॥
हुस्ने दोरोज़ापे यों ग़ाफ़िलो खुद काम न हो ।
होसके बहती हुई गङ्गामें लेजामेको धो ॥
महव कर दिलसे ख़याले ख़तो ख़ाले दिलबर ।
महव कर दिलसे ख़याले ज़रो दौलत यकसर ॥
जो है जैसा वो दिखायेगा करिश्मा वैसा ।
लाख तदबीर करो जैसेका यां है तैसा ॥
क़ाम दीनार न आताहै न रुपया पैसा ।
ऐसी तैसीमें पड़े जो नहीं माने ऐसा ॥
यह सदा देते हैं साधोंकी सदा कुछतो सुनो ।
पढके और लिखके न नादानबनो पढके गुनो ॥

और सुनो! दयाकुँवरबाई एक महात्मा स्त्रीने वैराग्य प्रकर्णमें कहा है ॥

॥ दोहा ॥

दयाकुँवर या जगत में, नहीं रह्यो थिर कोय ।
जैसो बास सरायको, तैसो यह जग होय ॥
जैसो मोती ओसको, तैसो यह संसार ।
बिनस जाय छिन एकमें, दया प्रभू उरधार ॥
भाई बन्धु कुटम्ब सब, भये इकट्ठे आय ।

दिना पांचको खेल है, क्या काल ग्रसजाय ॥
तात मात तुमरे गये, तुम भी भये तयार ।
आज कालमें तुमचलो, क्या होऊ हुशियार ॥
अश्व गज अरु कंचन क्या, जोड़े लाख किरोर ।
हाथ झाड़ रीते गये, भयो कालको ज़ोर ॥
बड़ो पेट है कालको, नेंक न कहूं अघाय ।
राजा रानी छत्रपति, सबको ले ले जाय ॥

और देखो! संसार का असार होना ज्ञानी पुरुषों ने कैसी खूबी से बयान किया है, जिसने इस उपदेश पर ध्यान दिया है, ज्ञान रूपी अनमोल रतन हाथमें लिया है ॥

॥ पद्य ॥

जहाले गुज़रांमें मेहर रहता है, किसका नामो निशान बाक़ी ।
मकीं न बाक़ी रहे यहां जब, तो क्या रहेंगे मकान बाक़ी ॥
गयेहैं क्या क़ाफ़ले अदमको, ख़याल रह रह के आया हमको ।
चलागया यां से जिसको जानाथा रहगई दासतान बाक़ी ॥
अजलकी आंखोंमें सबहैं एकसां, नज़रहै कुछशौ न इज़्ज़तोशां ।
चलेगये इज़्ज़ोशानवाले, रही न इज़्ज़त न शान बाक़ी ॥
यहां जो आया वो रफ़्तनी है, यहां है जोशै गुज़श्तनी है ।
न मैं रहूंगा न तू रहेगा, न तन रहैगा न जान बाक़ी ॥
न असलियत काही कुछ पताहै, न कुछ हक़ीक़तसे वास्ताहै ।
ख़ुदीसे भूलेहैं यों ख़ुदाको, न वहमहै न गुमान बाक़ी ॥
कहां है जलवा कहां नज़ारा, हमें तसव्वुर ने आह मारा ।
निकलगया सांप रहगई है, लकीर की आनोबान बाक़ी ॥
हमारी बातोंपे कान देना, न नामो दोलतपे जानदेना ।

जिन्हें थे शोहरतके मेहर दावे, रहा न उनका निशान बाकी ॥

यह वैराग्य उपदेश सेठ जीवाराम के अंतःकरण में समागया, एक सन्नाटासा चारों तरफ़ छागया, सच्चे उपदेश का असर बडाभारी है, सच्चे उपदेश में ऐसी ही चमत्कारी है, सेठ ने सारी सुधबुध बिसारी है, आंखों से आंसुओं की धार जारी है ॥

सेठानी सुमति के दिलपर भी वैराग्य पूरा असर तो करगया, परंतु उसने बडे धीरज से दिलको सँभाल लिया, अबतो महात्माजी के चर्णों में दंडवत् प्रणाम करके दोनों करजोर कर बिन्ती करती है ॥

सुमति—श्रीमहाराज! आप मुनियों के सरताज धर्मकी जहाज हैं, बडीकृपा आपने की, हमारी अविद्या दूरकरदी, परन्तु दासी के मनमें एक सन्देह उत्पन्न हुवा है जिसके दूरकरने के लिये प्रश्न करने की इच्छा है, क्या इस मतिमन्द तुच्छ जीव को प्रश्न करने की आज्ञा है ॥

महात्मा—हां हां जो कुछ सन्देह मनमें हो प्रकट कर देर न कर ॥

सुमति—श्रीमहाराज! यह बात तो मैं अच्छी प्रकार समझगई कि संसार असार है इस में मन लगाना वृथा है, तो अब उचित यह ही विचार है कि हम दोनों स्त्री पुरुष संसार की मोह माया को त्यागकर किसी एकान्त स्थान में आसन जमाकर हरि भजन करें और दुनिया के चक्करसे टरें, आवागमन के बखेडे में न पडें, इस विषय में आपकी क्या आज्ञा है ॥

महात्मा—नहीं नहीं पुत्री! हमारे उपदेश का यह प्रयोजन नहीं है कि गृहस्थाश्रम छोड कर विरक्त बनजाओ शरीर पर भस्मी लगाओ, बैरागी भेष बनाओ, भगवान् ने गीताजी में कर्म करनेकी आज्ञादी है, जिसका पूरा अधिकारी गृहस्थी ही है, जो लोग संसारी भोगों को भोगे बिना कची अवस्था में कपडे रंगकर सन्यासी बनजाते हैं वो अन्तमें दुःख पाते और बहुत पछताते हैं, विषय भोगमें फँसकर भ्रष्ट होजाते और मनुष्य शरीरकों वृथा गमाते हैं और जो लोग गृहस्थाश्रम में रहकर कर्मयोग का पालन करते और भगवान् को सुमरते हैं वो बडे आनन्दसे जीवन सफल करते और संसार में निर्भय विचरते हैं, इस कारन से तुम लोग गृहस्थ धर्म का भगवत् आज्ञा के अनुसार पालन करो कर्मयोग का सिद्धान्त समझ कर मनमें धरो चित्तको शांति साधुओं के भेष बनाने से नहीं होती है, ज्ञान और भक्ति की धार सारे पापों को धोती और अज्ञान खोती है ॥

॥ पद ॥

मन को विश्राम कठिन हरिके विन ध्याये ।
और जतन संतन सब न्यून ही बताये ॥
योगीजन ल्यो समाध तपसी तप लेहु साध ।
चित्त व्याध मिटत नाहि भस्म के रमाये ॥
क्षेम कुशल चाहत नर नेम करत दुख के डर ।
राधावर प्रेम बिना सुख हि कोन पाये ॥
बिधनाकी भटकन सब मिटगई लख वाकी छब ।
झांकी हरि झांकी कर मुनिन दुख मिटाये ॥

राखो मथुरेश लाज प्रकटे तुम भक्तकाज।
दर्शन दो ब्रजराज याचूं सिरनाये ॥

देखो ! विचारकरो!! कि एक मनुष्य साधुओं के भेषमें रह कर विषयवासना में फँसाहुवा और दूसरा गृहस्थाश्रम में रहकर हरिभजन में लगाहुवा है इनमें कोन उत्तम है, जरूर उस गृहस्थ को ही उत्तम कहना पड़ेगा, इसलिये तुम दोनों स्त्री पुरुष अपने घरजाकर गृहस्थधर्म को पालो और संसारी पदार्थों को असार समझकर उनमें आसक्त न हो यह ही हमारी आज्ञा है ॥

सुमति—श्रीमहाराज आपने आज्ञाकरी सो सीसपर धरी परंतु संसारमें रहकर भगवान् से प्रेमकरनो और संसारी पदार्थों में चित्तको न लगानो यह बडी ही कठिन बात है और भगवान् में प्रेमहोनो तो अति दुर्लभ विख्यात है, सो संसार में रहकर क्योंकर बनसके है ॥

हम तुच्छ जीव न तो प्रेम पदारथ के तत्वको जाने हैं, न परमात्मा के सरूपको पहिचाने हैं ॥

और भगवद्गीता में जो कर्मयोग आप वर्णन कियो बतावें हैं सो भी हम नहीं जाने हैं ॥

हमतो गृहस्थाश्रम में रहकर संसारी पदार्थों में मन न लगाने और परमात्मा में प्रेम बडाने को अत्यंत कठिन मानें हैं। आप कृपाकर के कर्मयोग को अर्थ अच्छी तरह समझा दीजिये, और भगवान में प्रेम बढाने को उपाय बता दीजिये ॥

महात्मा–(सेठ जीवाराम से) अरे सेठ! तूं क्यों मौन सांधे बैठा है। तेरा बिचार क्या है सो कहदें और हमको नित्यकर्म करने में देर हुई है सो स्थानको जानदे। यह तेरी स्त्री तो बड़ी चतुर दिखाई देवै है ॥

सेठ–महाराज! आपके वैराग्य उपदेश ने मुझे ऐसा बनादिया कि सारी सुध बुध भूलगया। इस स्त्री ने जो इस समय आपसे बातचीत की वो मुझे भी अच्छी प्रतीत हुई। और इसने जो बातें आपसे पूछी हैं उनके उत्तर के बिना मेरे मनको भी शान्ति नहीं है। मैं अपना भाग उत्तम जानता हूं कि ऐसी चतुर स्त्री मुझे प्राप्त हुई। आप कृपा करके इसके प्रश्नों का उत्तर दीजिये दास पर अनुग्रह कीजिये ॥

महात्मा–अच्छा सेठ आजतो समय नहीं रहा अति काल होगया हम अधिक ठहर नहीं सके जाते हैं। कल इसी समय इसी स्थान पर फिर आते हैं। तुम लोग यहांही बिश्राम करो मनमें धीरज धरो। कल हम तुमको पहिले कर्मयोग का सिद्धान्त सुनायेंगे उसके बाद प्रेम पदार्थ का स्वरूप बतलायेंगे। तुम दोनों उपदेश सुनने के अधिकारी हो तुम्हारा रक्षक और सहायक गिरिधारी बनवारी सर्व कलाधारी हो यह हमारा आशीर्वाद लो। यह फ़रमाकर महात्मा पधारते हैं। सेठ सेठानी उनमें दंडवत्प्रणाम करके उसी जगह डेरा करके बिश्राम करते और अगले रोज़ महात्मा के पधारने की बाट निहारते हैं ॥
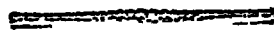
* दूसरा सत्सङ्ग *

॥ कर्मयोग तथा प्रेम शब्दार्थ वर्णन ॥

दूसरे रोज़ सेठ सेठानी इन्तज़ारही कर रहे थे कि महात्माजी प्रेम मदमाते यह चीज़ गाते आते हुये नज़र आये

॥ ग़ज़ल ॥

प्रेम भगवत् का नहीं जिसमें वो इन्सान नहीं ।
जन्म निष्फलहै भजा दिलसे जो भगवान् नहीं ॥
तेरी रक्षाको जो है हरजगह हरदम हाज़िर ।
उसको भूला अरे तुझसा कोई नादान नहीं ॥ १ ॥
डूबते गजको उबारा न करी पलभर देर ।
शेरबन थम्भसे निकला किया कुछ मान नहीं ॥ २ ॥
व्याध भिलनी से अधम और अहल्या पाषान ।
जिसने तारे अरे उसपरभी तेरा ध्यान नहीं ॥ ३ ॥
पूतना ज़हर पिलाकर भी हुई भवसे पार ।
फिरभी शक तुझको है क्या कृष्ण दयावान नहीं ॥ ४ ॥
गोपिकाओं के वो आधीन हुवा प्रेमके बस ।
जिसका वेदोंको हुवा पचके भी कुछज्ञान नहीं ॥ ५ ॥
दीन धनहीन सुदामाको किया पलमें निहाल ।
द्रोपदी लाजरखी इससे तू अनजान नहीं ॥ ६ ॥
भक्ति वस हांक है रथ जुद्ध समय अर्जुनका ।
प्रभुताका हुवा कुछभी उसे अभिमान नहीं ॥ ७ ॥
जो हरीकी हो शरण उसके वो मेटैं सब पाप ।
बांच गीताको अरे लेता क्यों वरदान नहीं ॥ ८ ॥

बहुत बीती है फ़िज़ूली में रही थोड़ीसी ।
मथुरा बेचेत है तुझसा कोई नादान नहीं ॥ ९ ॥

सेठ सेठानी दोड़कर क़दमों में गिरकर दंडवत करके महात्माजी को आसन पर विराजमान कराकर खुद हाथ-जोड़कर सामने बैठते हैं ॥

महात्मा—सुनो! हमने दोबात कहने को कहाथा । एक कर्मयोग, दूसरा प्रेम शब्दका अर्थ ॥

अब पहले हम कर्मयोग समझाते हैं, गीताजी में श्रीकृष्णचन्द्रभगवान् ने अर्जुन को जो ज्ञान दीया है वो सारे शास्त्रों उपनिषदोंका सारहै, प्रानियों पर दयाकरके महाराजने खोलदिया ज्ञानका भंडार और किया बडाभारी उपकार है उसके विरुद्ध जो कुछभी विचारहै असार और बेकार है ॥

भगवान् ने फ़रमाया है कि धर्मशास्त्र में जिस जिस कर्म करने की विधि लिखी है यानी वेद शास्त्रों का पढना पढाना, यज्ञ करना, दान देना, तप करना और गृहस्थाश्रम के धर्म का पालन करना, उन सब कर्मों को अवश्य करना चाहिये, जनक महाराज जैसे ज्ञानी भी पहले कर्म करने सेही सिद्ध हुये और मुझको त्रिलोकी में कोई कर्म करना आवश्यक नहीं है तो भी सब कर्मों को करता हूं परन्तु कर्मही बन्धन का मूल और कर्मही मुक्ति का कारन होजाता है, यदि मनुष्य इस इच्छा से यज्ञादि शुभ कर्मों को करेगा कि इस शुभ कार्यका फल मुझे स्वर्ग का सुख मिलेगा या धन संतानादिक प्राप्त होंगे तो वो कर्म उस के बंधन का क़ारण है क्योंके अच्छे कर्म के बदले में इसको

स्वर्ग में सुख भोगना या किसी राजा महाराजा सेठ साहू-कार के घरमें जन्म लेकर आनंद भोगना होगा, इसी तरह बुरे कर्म का दंड उसको अवश्य मिलेगा ॥

तो सिद्ध होगया कि फलकी इच्छासे जो कर्म किये जाते हैं वो बन्धन का कारन होते हैं और जो कर्म फलकी इच्छा न रखकर किये जावें वो बन्धन में डालने वाले नहीं होते ॥

इसी प्रकार मनुष्य जब कर्म करने के समय अहंकार को काममें लाता है यानी यह समझता है कि मैं इस कर्म का करने वालाहूं तो अवश्य उसका फल उसे उठाना होगा। और जब यह निश्चय रखकर कर्म करेगा कि मैं जीवात्मा शुभ या अशुभ कर्मों का करनेवाला नहींहूं। कर्म शरीर और इंद्रियों से होरहे हैं मैं उनका करता नहीं साक्षीमात्र उनका देखनेवाला हूं तो वो कर्मका अच्छा या बुराफल नहीं पावेगा। बस कर्मयोग इसीका नाम है कि मनुष्य फलकी इच्छा न रखकर निष्काम कर्मकरे और अपने को कर्त्ता भोक्ता न माने इसीको आसक्त न होना कहते हैं ॥

॥ पद्य ॥

खुदको इतना मिटा कि तू न रहे।
और तुझमें खुदीकी बू न रहे॥

अहंकार जबतक तुझमें है सच्चायार परमात्मा तुझको नहीं मिलसक्ता और जहां अहंकार मिटा वो पास है ॥

ता तो बाज़ी यार के शुद यारेतो।
वरनबाज़ी यार गरदद यारेतो ॥

और देखो वीरता और बहादुरी अहंकार के मिटाने में है सिंह व्याघ्रादिके शिकार करने में बहादुरी न समझना चाहिये ॥

सहल शेरे दां कि सफ़्हा बिशकनद ।
शेरे आनस्त आंकि खुदरा बिशकनद ॥

और भी किसी बुजुर्ग ने फ़रमाया है ॥

न मारा आपको जो ख़ाक हो अक्सीर बनजाता ।
अगर पारेको ऐ अक्सीर गरमारा तो क्या मारा ॥

अपने को कर्त्ता भोक्ता मानना अहंताही बन्धन का कारण है और संसारके पदार्थों को अपना समझने का नाम ममता है ।

अज्ञानी मनुष्य धन दौलत स्त्री पुत्रादि को अपना जानकर उनकी प्रीतिमें फँस जाताहै इसीसे तरह तरह के दुख और कष्ट पाता है, ज्ञानी शरीरसे सब कर्मोंको करता हुवाभी कुछ नही करता ॥

(दिल बयार व दस्त ब कार) यानी मन परमात्मा में लगारहे और तन काम करतार है ॥

रसखान गोविंदको यों भजिये ।
ज्यों नागरिको चित गागरि में ॥

जैसे पनिहारी सरपर पानीके घड़े रखकर चलती हुई अपने साथकी सहेलियों से बातें करती और हँसी मज़ाक़ उडाती है परन्तु दिल उस का सरकी मटकी से अलहदा नहीं होता इसी तरह ज्ञानीका दिल परमात्मा में और शरीर कामों में लगा रहता है ।

इसलिये गृहस्थी आदमी को उचित यहही है कि अपने २ धर्म के अनुसार यज्ञ, तप, दान, आदि कर्मों को करतारहे, फलकी कामना और अहंता को दूर रखे, शरीर मन और इन्द्रियों के द्वारा अपने कुटुम्ब परिवार के भरन पोषन के वास्ते खूब धन कमाना, प्रतिष्ठा और कीर्ति प्राप्त करना वार्जित नहीं है, परन्तु अपने स्वरूप को जुदा समझ कर उन पदार्थों में आसक्त नहो ।

अब दूसरी बात (प्रेम शब्द का अर्थ) भी कहे देते हैं उसको ध्यान देकर सुनो !!

॥ प्रेमशब्द ॥

ढाई अक्षर प्रेमका, पढेसो पंडित होय ।

प्रेम—यह प्यारा शब्द संस्कृतमें तीन अक्षरों के मेलसे बनाहै (प) (र) (म) परन्तु अक्षर (प) आधाही है इस लिये ढाई अक्षर का बोला जाता है, अक्षर (र) के ऊपर जो मात्रा (ॆ) ए, की लगीहुई हैं वोभी प्रयोजन से रिक्त नहीं है ।

अब गौरकरो और समझो!! (प) परमात्मा का और (म) मायाका है और (र) रहस्य का है, अब रही मात्रा (ए) की जो (र) के सरपर है इस तरह पर कि (रे) इस का यह अभिप्राय है कि संस्कृत में अक्षर (अ) और (इ) दोनों मिलकर (ए) बनता है, इस को सन्धी कहते हैं ।

अकार विष्णु भगवान और इकार शक्तिका वाचक है, शक्ति ताकत कुदरत, सामर्थ्य के नाम हैं; इसी को माया बोलते हैं; अब समझना चाहिये कि (प) परमात्मा का और (म) मायाका यानी परमेश्वर और उसकी शक्ति या माया से ही सारे जगत की उत्पत्ति और उसी से दुनियां के सारे काम होरहे हैं, ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानंद सरूप है, सत्, चित, आनंद, इन रूपों से ब्रह्म व्यापक और अचल है, यानी उस में क्रिया (हर्कत) नहीं माया के संबन्ध से उस में यह इच्छा उत्पन्न होती है कि मैं एक हूं बहुत होजाऊं ।

(एकोऽहं बहुस्याम्) इसी ब्रह्म के संकल्प से सारी सृष्टि होजाती है तो सिद्ध हुआ कि माया ही सृष्टि का कारन है, और बिनामाया के ब्रह्म परमात्मा कोई काम नहीं करसक्ता, मानो जगत की उत्पत्ति के लिये वो अधूराही है । इसलिये शब्द प्रेम में (प) अक्षर आधा और (म) पूरा है, इन के मध्य मे (र) जो रहस्य है वो दिखलाता है कि ब्रह्म और माया के संजोग से ही सारे संसारका प्राकट्य हुवा है, और (ए) की मात्रा दिखलारही है कि विष्णु और उन की शक्ति ही जगत् का मूल कारण है ।

अतः प्रेमशब्द क्या है—इसमें सारा वेदान्त भरा है वेदान्त का यही सिद्धान्त है कि ब्रह्म और माया दोनों का

मिलाप होनेसे संसार उत्पन्न होता है, सांख्य शास्त्रमें पुरुष और प्रकृति शब्दसे ब्रह्म और मायाको बोलते हैं।

गीताजी में भगवान्‌ने सातवें और तेरहवें अध्यायमें इसी विषयको (परा) और (अपरा) प्रकृति और (क्षेत्र) और (क्षेत्रज्ञ) इन शब्दोंसे वर्णन किया है, यानी सातवीं अध्यायमें अपराप्रकृति मिट्टी १, पानी २, आग ३, हवा ४, आकाश ५, मन ६, बुद्धि ७, अहंकार ८, इन आठ चीजों की बतलाकर परा प्रकृति जीवात्मा को कहा है, और तेरहवीं अध्याय में क्षेत्रशब्द से शरीर और क्षेत्रज्ञ से आत्मा मुरादलीगई है।

इससे साबितहुवा कि अपरा प्रकृति और क्षेत्र मायाके कार्य हैं और परप्रकृति और क्षेत्रज्ञ आत्मा वुही ब्रह्मका अंश है।

इन दोनों का संघातही सारी सृष्टि है जिसको संसार या जगत् या दुनिया कुछही कहिये।

यदि माया शक्तिको ब्रह्मसे न्यारा करलियाजावे तो जगत् की सत्ता नही रहसकती।

केवल ब्रह्म सच्चिदानन्द शक्ति मायाके बिना कोई व्योहार नहीं करसक्ता जैसे शिव महादेवका नाम है, उसमें से (इ) को दूर करदो तो शव रहजाता है, अर्थात् (इकार) शक्तिके दूर हो जानेसे शव होजाता है, शवनाम मुरदे काहै, इसी कारण से शक्तिका नाम पहले बोलाजाता है जैसे गौरी शंकर, लक्ष्मीनारायण, सीताराम, राधेश्याम, इत्यादि।

यहाँ इतनी बात और ध्यान में रहनी चाहिये कि शक्ति बिदून शक्ति मानके यानी ताकत बगैर ताकत वरके अकेली

काम नहीं दे सक्ती ।

इसी तरह ईश्वर शक्तिके बिना किसी कामका नहीं, दोनों मिलकरही कामके हैं, मानो नामके लिये यह दो २, हैं वास्तवमें एकही हैं ।

अतः प्रेमशब्दसे सारीसृष्टि अंतर्गत है, यहही संसारमें सार है यह अर्थ प्रेमशब्दका वेदान्त और सांख्य दर्शनके अनुसार वर्णन कियागया, अब एक और सुगम रीतिसे समझाते हैं कि शरीर और जीवात्मा इनमें परस्पर संबन्ध का नाम प्रेमहै, इसीको मोहब्बत, उल्फत, इश्क, प्यार, प्रीत, सनेह, आदि बहुतसे नामों से बोलते हैं, विचारकरो, शरीर और जीवात्मामें किस दर्जेका प्रेम है कि शरीर जीवात्माके बिना नहीं रहसक्ता और जीवात्मा शरीर के बिना नहीं रहता इनके आपसमें प्रेम यहांतक बढगया है कि शरीर के गुण जीवात्मा में और जीवात्मा के शरीर में प्रतीत होने लगे हैं ।

जैसे कहा जाता है कि इस शरीरसे अमुक कर्म हुये वस्तुतः शरीर अकेला कोई क्रिया नहीं करसक्ता क्रिया चैतन्य में होती है । जड पदार्थ में चलना फिरना काम करना बनता ही नहीं । इसी तरह बोलने में आता है कि जीव पैदा हुवा मरगया सुखी दुखी है इत्यादि वास्तव में तो पैदा होना मरना सुखी दुखी होना शरीर का धर्म है । इस स्थान में शरीर शब्द से सचेतन देह समझना चाहिये जैसा गीताजी की १३ वीं अध्याय में क्षेत्रका लक्षण वर्णन हुवा है (इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतनाधृतिः) जीवात्मा न पैदा होता है न सुख दुख भोगता है ।

अतः शरीर और आत्मा के आपस में प्रेम ही इस विपरीत ज्ञान का कारण है कि उसके गुण उसमें और उसके उसमें बोले जाते हैं; अब इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि शरीर और आत्मा का आपस में जो प्रेम है वोही संसार के सारे व्योहारों का कारण है। जितने काम प्राणधारियों से होते हैं सब सुख के लिये।

खाना, पीना, सोना, जागना, धन कमाना इत्यादि। सब काम क्यों किये जाते है, सुख पानेके लिये दूसरों से प्रीति क्यों की जाती हैं। अपने सुख के वास्ते, मां, बाप, बेटा, बेटी, भाई बन्धु, स्त्री, पुरुष आदिक क्यों प्यारे लगते हैं, अपने सुख के लिये; राह चलते मुसाफिर को जब डाकू लोग आ घेरते हैं और कहते हैं कि सब माल ताल सौंप दे नहीं तो जान से मारडालेंगे; तो मुसाफिर अपने प्राण बचाने के लिये कुल माल हवाले करदेता है; मानो धन माल से ज्यादे प्यारा अपना शरीर हैं, फिर यदि डाकू लोग घात कर के जान लेना चाहें और कहें कि पातो अपना लडका या भाई वगैरा (जोभी साथ हो) उसको हवाले करदे अन्यथा तुझे जान से मारते हैं तो अपनी जान बचाने को उनको भी सौंपदिया जाता है इससे साबित होगया कि दुनिया में धन माल अजीज़ रिश्तेदार आदिक जो कुछभी हैं सब में प्रेम केवल आत्मा के सुख के वास्तेही है, और आत्मा सुख का भंडार है, नतीजा यह निकला कि शरीर और आत्मा में जो आपस का प्रेम है. वोही सुख की इच्छा का कारण है, और सुख

की इच्छा ही संसार में प्रवृत्ति का कारण है इसलिये प्रेम ही संसार में सार है; सुमति आगे बढकर हाथ जोडकर खडी है ज़बान से कुछ कहना चाहती है, परन्तु कहती नहीं।

महात्मा—क्यों बेटी तू क्या चाहती है।

सुमति—महाराज! अपराध क्षमाहोय तो कुछ मनके सन्देह को निवेदन करूं।

महात्मा—हां हां अवश्य कहा क्या सन्देह है।

सुमति—बाबाजी महाराज, आप हैं धर्म और ज्ञान के जिहाज, महात्माओं के सरताज, दासी को आप से प्रश्न करने में आती है लाज, और चुप रहने में होता है अकाज, आपने जो कर्म योग वर्णन किया वो तो समझ में आया, परन्तु यह बात समझ में नहीं आई कि शरीरों से जो कर्म अपने सुख के लिये कियेजाते हैं, उनका फल कोन भोगता है शरीर तो यहां ही जलादिया जाता है या गाड दिया जाता है और आत्मा पाप पुन्य से न्यारा, अकर्त्ता और अभोक्ता कहलाता है तो फिर भले बुरे कर्मों का फल कोन उठाता है।

महात्मा—सुनो! शरीर एक नहीं हैं तीन हैं जो बाहिर में हाथ पाऊं वाला दिखाई देता है यह तो स्थूल शरीर कहलाता है और इसके अन्दर पांच ज्ञानइन्द्री, पांच कर्मइन्द्री, पांच प्रान, मन और बुद्धि, यह सत्तरह तत्व का संघात सूक्ष्म शरीर जिस को लिङ्ग शरीर भी कहते हैं वो और है।

तीसरा कारण शरीर प्रकृति या माया का है, स्थूल शरीर से जब सूक्ष्म शरीर न्यारा होजाता है इसीको मरना कहते हैं, वोही सूक्ष्म शरीर कर्मों के फलका भोगने वाला है, वोही नर्क और स्वर्ग में जाता और करनी का फल पाताहै, आत्मा तो केवल साक्षी रूप से प्रेरना करने वाला नित्य मुक्त और असंग कहलाता है, उसीको भगवान् ने गीताजी में अपना अंश और सब शरीरों में चेतना उत्पन्न करने वाला कहाहै, उसके बिना शरीर जड कुछ भी नहीं करसका, सूक्ष्म और कारण यह दोनो शरीर ही कर्ता भोक्ता हैं।

सुमति—श्रीमहाराज! यह वात भी आपकी कृपासे समझ में आगई कि इस स्थूल शरीर के अन्दर एक सूक्ष्म शरीर और भी है, वोही शुभ और अशुभ कर्मों के फल भोगता है, परंतु जीवआत्मा जो परमात्मा का अंशहै उस की प्रेरना के विना शरीरों से कोई कर्म नहीं होसक्ता तो मुख्य कर्तापना चेतन्य आत्मा में ही प्राप्त हुवा, जैसे किसी राजा का नोकर राजाके हुक्म से किसी को मारडाले तो उस नोकर वेचारे का क्या क़सूर और यदि नोकर को घातक समझकर दंड देदिया जावे तो बडे अन्यायकी वात है, इसी तरह शरीर जो कुछ करते हैं चैतन्य की प्रेरना से करते हैं, यह वात आप फ़रमा ही चुके हैं तो फिर शरीर को अपराधी क्यों बनायाजाता है।

महात्मा—पुत्री तू अति बुद्धिमती है, ज्ञानमें तेरी रती है, अव तू ज्ञानयोग का प्रश्न कर के आत्मा और

अनात्मा का भेद खोलने की इच्छा करती है, सुन अंतःकरन जो मन, बुद्धि, चित, अहंकार रूप है इनमें आत्मा का जो कि ज्ञान रूप और सबका प्रकाशक है आभास पड़े है उस से अंतःकरन में चेतना उपजे है, तब मन, बुद्धि, चित, अहंकार यह सब अपने २ कार्य में प्रवृत्त होजावें हैं और मनका संजोग इन्द्रियों से होने पर आंख कान वगैरा इन्द्रियां अपना २ काम करने लगें हैं फिर शरीर सें जो २ कृत्य बनपड़ते उसका फल सुख या दुख शरीर ही भोगै है, आत्मा उस में लिप्त नहीं होवे है जैसे सूर्य के प्रकाश से अंधकार हटजाय वैसे अन्तःकरन की जड़ता हटकर चेतना शरीर में उत्पन्न होजाय है, जिसप्रकार सूर्य का प्रकाश सब जगत् के ब्योहारों का मुख्य कारन है और कारन होने पर भी निर्लिप्त है वैसेही चेतन्य आत्मा मनआदि अन्तःकरन का प्रकाशक और प्रेरक होने पर भी असंग और निर्लिप्तहै।

शरीर से जो शुभ अशुभ कर्म होवें हैं उन में जीव अहंता बुद्धि करने से अर्थात् मैं इस कर्म का करनेवाला हूं ऐसा अहंकार करने से बन्धन में फँसरहा है यदि अपने स्वरूप को अच्छी तरह निश्चय करके अहंकार को त्याग देवे तो वो मुक्त ही है। इस तरह से आत्मा अंतःकरन का प्रेरक और प्रकाशक होने पर भी असंग और अलिप्त रहता है शरीर सब कर्मों का कर्त्ता भोगता होकर सुख दुख सहता है राजा और नोकर का जो दृष्टान्त तुमने दिया वो यहा नहीं खप सका है क्योंके अपने नोकर को किसी के बध

करने को हुक्म देता है वो राग द्वेष से संजुक्त है इस लिये राजा का ही अपने नोकर के उस कर्म का फल भागी होना जुक्त है, परंतु आत्मा को किसी से राग द्वेष नहीं, इस लिये वो प्रेरक होने पर भी अलिप्त है, जैसे वायु सुगंध और दुर्गन्ध सब पदार्थों से संयुक्त रहने पर भी आप असंग और निर्लिप्त रहे है और जैसे सूर्य की धूप और चन्द्रमा की चांदनी मल मूत्र आदि में पड़कर अशुद्ध नहीं होजाती और अमृतादि उत्तम पदार्थों में पड़ने से उस में कोई भलाई नहीं आजाती इसी तरह आत्मा की झलक अन्तःकरन में है अन्तःकरन का धर्म उस में नहीं आता, इस लिये वो कर्त्ता भोक्ता नहीं कहा जाता ।

सुमति—श्रीमहाराज! सूर्य की धूप और चांदनी का दृष्टान्त आपने दिया उस को मेरी तुच्छ बुद्धिने ग्रहण नहीं किया क्योंकि धूप और चांदनी ज़मीन पर फैली हुई नज़र आती है वो न कहीं जाती है न किसी शरीर के साथ चलती फिरती दिखलाई देती है और पशु पक्षी मनुष्य के शरीरों के अन्दर आत्मा और उस की झलक साथ रहकर सारे कर्म कराती है, इस लिये कृपाकरके कोई और दृष्टांत दीजिये दासी का समाधान कीजिये ।

महात्मा—अच्छो बेटी दूसरा दृष्टान्त आकाश का समझलेउ इस में पूरा ध्यान देउ, आकाश सब जगह व्यापक है और उस में चलनाफिरना वगैरा कोई क्रिया नहीं परंतु मिट्टी के घड़े में जो आकाश है उसी तरह शरीर के अन्दर आत्मा शरीरों की उपाधि से क्रिया करता हुवा नजर

आता है. इस के उपरांत एक और भी दृष्टान्त है ।

एक कटोरे में जलभरकर सूर्य के सामने रखने से उस में सूर्य का प्रतिबिम्ब कटोरे के साथ चलता हुवा दीखता है असल में सूर्य जहां का तहां मौजूद है परन्तु कटोरे और जल की उपाधी से उस के अन्दर और साथ चलता हुवा नज़र पड़ता है, इसी तरह शरीर को कटोरा और अन्तःकरन को जल की जगह समझो और जैसे सूर्य का प्रतिबिम्ब तैसे आत्मा की झलक खयाल करलो- बस अब तुम्हारी समझ में आगया होगा ।

सुमति—हां महाराज! आप की जय हो!! यह संदेह तो दासी का मिटगया अब आगे प्रेमशब्द की व्याख्या में जो आज्ञा आपने फ़रमाई कि सुख आत्मा में ही है और आत्मा के वास्ते ही सारे कर्म कियेजावें हैं सो यह बात मेरी समझ में नहीं आई क्योंकि संसार में अपने इष्ट मित्र भाई बन्धु नातेदार वगैरा के बिछड़ने में दुख और मिलने से सुख प्रतीत होता है, इसी तरह निर्धन को धनकी प्राप्ति और भूके प्यासे को अन्न जल के मिलने से आनंद आता है, जो आत्मामें ही सुख होय तो वो तो अपने पास ही है दूसरे पदार्थों के मिलने से सुख नहीं होना चाहिये, इस का भेद और समझा दीजिये, दासी पर कृपा कीजिये।

महात्मा—देखो! इन्द्रियों के द्वारा जो सुख प्राप्त होना प्रतीत होता है यह बडाभारी धोका है, ज्ञान इन्द्रियों का संजोग जब विषयों से होताहै यानी आंख का रूप के साथ और कानका शब्द के साथ, नाकका गन्ध के साथ, जिह्वा का रसके साथ, और त्वचाका स्पर्श के साथ, इसी तरह

कर्म इन्द्रियों हाथ पाऊंआदि का उनके बिषयों के साथ और मन जो सब इन्द्रियों का-स्वामी है उसका इन्द्रियों के साथ; तव अज्ञानी लोग समझते हैं कि बिषयों के संजोग से सुख प्राप्तहुवा परन्तु वास्तवमें सुख बिषयों में नहीं है, यदि विषय में सुख हो तो एकही पदार्थ में किसी को रुची और किसी को अरुची नहीं होंनी चाहिये।

जैसे एक मनुष्यको मधुर रस भाता है दूसरा मीठेसे अरुची करके खट्टी चीजको अच्छी मानता है तीसरा कोई इन दोनों को न पसन्द करके चरपरी तीखी चीज़ पर रुचि करता है।

यदि पदार्थों में ही सुख और आनंद हो तो हर एक वस्तु सबको सुखदाई होनी चाहिये, जब किसी को मन्दाग्नी का रोग होजाता है तो उसको ५६ छप्पन भोग ३६ छत्तीस व्यञ्जन चाहे जैसे बढ़िया पदार्थ खिलाना चाहे सबको देखकर वो अरुचि करने लगता है, इससे सिद्ध होता है कि पदार्थों और विषयों में आनन्द नहीं है, रुची यानी मनके लगाव में ही सुख और आनन्द है।

देखो एक मनुष्य किसी नवीन अवस्थाका स्त्री या बालक से प्रेम करता है फिर वो ही स्त्री या बालक शरीर जब किसी रोगमें फंसकर अति कृश और कुरूप होजाता है तो उसीसे अरुचि होने लगती है, इसी प्रकार कामीपुरुष को जब वो युवा और बलवान होता है सुन्दरी युवती स्त्री के देखतेही कामकी बाधा होकर उसमें प्यार होजाता है और जब वोही पुरुष ८० अस्सी-९० नव्वे बरसका बुड्ढा या किसी परम रोग में फंसकर अतिही दुर्बल होजाता है तो उस

सुन्दरी युवती से अरुचि करने लगता है, यह क्या बातहै ? सब मनकी रुचीकी ही करामात है, पदार्थों में सुखदाई होनेकी समझ वृथाहै, और देखो जब किसीका प्यारा मित्र या संबन्धी विदेशमें हो तौ उसके मिलने को दिल तड़पता और मन तरसता है, और उसके मिलते ही बडाभारी सुख बरसता है परन्तु पासरहते रहते जब बहुत दिन बीत जाते हैं तो न वो प्यार प्रीति रहती है न मन उसको देखकर हरषता है किन्तु किसी प्रकारसे खटपट होजाने पर झटपट मन पलट कर उस प्यारे इष्ट मित्रसे सैकड़ों कोस दूर हटजाता है ।

तौ अच्छी तरह साबित होगया कि सुख उस इष्ट मित्रके शरीर में नहीं है, यदि वो शरीर सुखका कारण होता तो उसके पास रहते हुये दुख क्यों होता, नतीजा यह निकला कि सुख संसारी पदार्थों में नहीं है मन जिस वस्तु की इच्छा करता है वो जब तक न मिले व्याकुल रहता है जहां वो वस्तु मिलगई मनकी चंचलता मिटगई और जब मन थोडी देरको भी स्थिर होगया तो आत्मा का आनन्द उस में भास्मानहुआ, अज्ञानी ने समझ लिया कि पदार्थ के मिलने से आनंद पाया, इस लिये वो पदार्थ ही सुखदायी है, ज्ञानी पुरुष ने निश्चय किया कि मनके स्थिर होने से आनन्द मिला ।

जैसे एक कुंडमें पानी भराहुवा जबतक हिलतारहे उसके पैंदेकी चीज़ नजर नहीं आती और जब कुंडका पानी हिलनेसे रुकजाता है तब उसके तलेकी चीज़ ज्यों की त्यों दिखाई देतीहै.

ऐसेही जबतक मन चंचल किसी पदार्थ की कामनामें व्याकुल रहता है आत्माका आनन्द उसको प्राप्त नही होता,

और जब वो चाहीहुई चीज़ को पाकर ठहर जाता है तब आत्मानन्द प्राप्त करलेता है ।

इसलिये पुत्री सुमति !! संसारी किसी पदार्थ में सुख, नहीं है, मनके अंतर मुख होने और स्थिर होनेमें ही आनन्द और सुख उस परमानंद रूप आत्माकी झलक का है जो एक पलमें निहाल करदेती है सारे दुख हरलेती है ।

सुमति—श्रीमहाराज ! आपने जिस सुगमरीति से मेरा अज्ञान दूरकिया और कर्मयोग और ज्ञानजोग दोनों का सार बातों ही बातों में समझा दिया ऐसा दूसरा कोन करसक्ता है, अविद्या के अन्धकार को आप जैसे महात्माओं का उपदेश रूपी सूर्य ही हरसक्ता है कहांतक आपको धन्यवाददूं मुझ अबला में ऐसी सामर्थ्य नहीं जो आप के गुण गासकूं, आपकी ग़ज़ल का पहिला मिसरा कि, **प्रेमही सारहै संसारमें कुछ सार नहीं**, यह तो समझमें अच्छी तरह आगया, अब दूसरे मिसरेका मतलब बाकी रहाकि **जीना बेकारहै महबूब से गर प्यार नहीं**। यह और समझा दीजियें ।

महात्मा—यहां महबूब से प्रयोजन परमात्मा है, वोही सच्चाहितु और सुखदाता है, उससे प्रीति न की तो जीवन वृथा है ।

सुमति—श्रीमहाराज ! इसमें भी मुझे एक सन्देह है इस नादानकी सन्देह भरी देह है ।

महात्मा—कहो ! क्या सन्देह है ?

सुमति—महाराज! आपने आत्माको परमात्माका अंश बतलाया और वो अपने शरीर अर्थात् इन्द्रियों और मन और बुद्धिका प्रेरक अन्तरयामी है यह भी फ़रमाया, तो फिर संसारी पदार्थों में मन क्यों लगता है! और वो अन्तरयामी ऐसी प्रेरना क्यों करता है?

महात्मा—यह बाततौ हम पहिले समझा चुके हैं कि वो प्रेरक मन बुद्धिका राग और द्वेषसे रहित है, मन और बुद्धि को प्रेरना करने परभी, वो धूप और चांदनी के तुल्य अलिप्त रहता है, मन और इन्द्रियां अपने विषयों की ओर दोडने का स्वभाव प्रकृति के अनुकूल रखती हैं, इसी लिये विषयों की तरफ़ झपटती हैं। परन्तु जो लोग असली तत्वको समझ लेते हैं वो नाश्मान पदार्थों पर ध्यान नहीं देते परमात्मा से प्रीत करके उसको अपने आधीन बनालेते हैं।

सुमति— महाराज! कृपाकरके वो तत्वभी समझा दीजिये जिसको जानकर ज्ञानी लोग परमात्मा में मन लगाते और संसारी पदार्थों में आसक्त न होकर परमानन्द पाते हैं।

महात्मा—सुनो! मनका लगाव इन्द्रियों के द्वारा होता है उनमें दो इन्द्रियां बडी प्रबल हैं और अति ही चंचल और चपल हैं एक कर्ण इन्द्री (कान) दुसरी चक्षु (आंख)।

कानोंसे जब किसीके अच्छेगुण सुनेजाते हैं कि अमुक मनुष्य सुन्दर मनोहर उत्तम गुणवान् या बलवान् विद्यावान् या दातार उदार है तब मन उस की इच्छाकरता है। या आंखों से किसी के सुन्दर मनोहर रूपको देखता है

तो मन वहां अटकता है परंतु विचारदृष्टि से देखाजावे तो दुनिया में कोई शरीर या पदार्थ ऐसा नहीं दिखाई देता जिस में दिल लगायाजावे, जिस शरीरको सुन्दर मनोहर कहाजाता है उसकी आभ्यन्तर दशापर नज़र डालने से अति घृणाकी सामग्री सामने आती है।

मनहर छन्द,

जा शरीर माँहिं तू अनेक सुखमानरह्यो,
ताहि तू विचार या में कोनबात भली है।
मेदमज्जा मांस रग रगमें रक्तभर्यो,
पेट हू पिटारी सीमें ठौर ठौर मली है।
हाडनसों भरोमुख हाडनकी नैन नाक
हाथ पाउं सोऊ सब हाडनकी नली है।
सुन्दरकहत याहि देखि जिन भूले कोई,
भीतर भंगार भरो ऊपर सों कली है।

इसपरभी यह विशेष कि–

(चारदिना की चांदनी फेर अंधेरी रात)

जो कुछ रूपरंग सौन्दर्य और जोबन है हरपलमें छीन होने वाला और धोके का बन है, एकदिन तैयार बोही कफन और शमसान में दहन है, अतः मनका आंख के द्वारा ऐसे किसी छिनभंगुर तनपर लुभाना वृथा उलझन है, जिसने इन्द्रियों और मन को सौन्दर्य तथा जोबनकादास न वननेदिया वोही जन धन्य है! धन्यहै!!

दूसरे किसी के गुण कानसे सुनकर मन लुभाजाता है वोभी अज्ञानका कारण गिनाजाता है, क्यों कि दुनिया में कोई भी एसा तन नहीं है जिसमें अवगुण न पायेजावें

यदि एक दो अच्छे गुण हुये तो दस पांच अवगुण अवश्य होंगे, और एक दो गुण अच्छे हुये तोभी मनुष्य में ऐसी सामर्थ्य नहीं कि जीचाहे उतनी उदारता दिखलासकें ।

देवताओं में भी ऐसी सामर्थ्य नहीं कि जोचाहें करसकें उनकी शक्तिभी परिमित है ऐसी अवस्था में तत्वज्ञान ने वाला मनुष्य न किसी के रूपरंग को देखकर रीझसकता है न किसी के गुण सुनकर लुभासक्ता है, तो अब जब कि प्रीति और प्यार करनेके योग्य दुनिया में कोई नहीं सिद्ध हुवा, और ज्ञानीपुरुष को चाह ऐसे महबूबकी है जो सबसे अधिक सुन्दर और सबसे अच्छे गुणोंका भंडार और सत्य प्रतिज्ञ और सर्वशक्तिमान हो वो सिवाय परमेश्वर पर, मात्माके कौन होसक्ता है ।

अनुमानकरलो एक मनुष्य परोपकारी है और किसी देशका राजा माहाराजा भी कलाधारी है, दूसरा एक आदमी जो किसी बडेभारी रोगसे घबराया हुवा बिकल और जीवन् से निरास होकर उस परोपकारी राजासे आरोग्य का प्रार्थी है, राजा चाहता भी है और चिकित्सा भी कराता है परंतु रोगी का रोग दूर नहीं करसक्ता तौ राजाका परोपकारी होना उस मनुष्यके किसकामका, ईसी प्रकार एक मनुष्य दयालू कृपालू स्वभाव वाला है परंतु निर्धन है उसके पास एक दीन दुखिया जाकर याचना करता है कि उसकी कन्या के विवाह के अर्थ रुपया देदो, वो दयालू जन दिल से चाहता भी है कि याचक की इच्छा पूरन करै परंतु स्वयं निर्धन होने के कारन कुछ नहीं करसक्ता, तौ मनुष्य उत्तम

गुणवान होने पर भी दूसरों की सहायता क्या करसक्ता है, जो स्वयं किसी वस्तु की अपेक्षा वाला है वो दूसरे की इच्छा पूरी कब और क्यों कर करसक्ता है ।

और भगवान सर्वशक्तीमान अपने भक्तों की सर्व-प्रकार की कामना पूरी करने की सामर्थ रखता है और जो कुछ उससे मांगे देसक्ता है, वो अपने सच्चे भक्तों और प्रेमियों के लिये सर्व व्यापक अव्यक्त होने पर भी कई सूरतों में प्रकट होकर दुष्ट जीवों को दंड और साधुवों की रक्षा करके भक्त के सारे मनोरथ पूरन करदेता है, भक्तों के दुख तुरन्त हरलेता है ।

जिस समय डूबते हुये गजराज ने स्मरण किया ऐसी त्वरा से दर्शन दिया की गरुड की सवारी को छोड ब्रह्मा-दिक देवताओं से मुँह मोड प्यादे दौड कर उसका प्राण-बचा लिया दुष्ट ग्राह को मारदिया ।

प्रहलाद भक्त को जब उसका पापी बाप संताप देने लगा और नंगी तलवार हाथमें लेकर उस निरपराधी के वध-के इरादे से उसकी ओर भगा तुरत ही थम्बे से सिंह की सूरत में प्रकट होकर पापी को मार अपनी प्रभुताई दिख-लाई, अपने प्यारे भक्त की जान बचाई, सारी आपत्ती एक क्षण में मिटाई, तीनो लोक में कीरत छाई ।

द्रोपदी को जिस समय दुष्ट दुःशासन चोटी पकडकर सभा में लाया और उस को नंगी करने के अभिप्राय से दुष्ट ने हांथ बढाया, उस विपत्ति की मारी बेचारी पतिव्रता नारी के तनसे सारी उतारने में दश हजार हाथियों की सांमर्थ्य को काम में लाया, परन्तु गिरिधारी मुरारी बांके

बिहारी ने वो कर्तव दिखलाया कि महाबली दुःशासन ने सारी का अन्त न पाया, इतना उसका चीर वडाया कि दुष्ट वीर खींचते २ हार मान कर शरमाया, भगवान् ने स्वयं चीर बनकर घातक को हराया भरीसभा में नीचा दिखाया।

नादान अल्प वयस्कध्रुव को बडे भारी प्यारसे दर्शन दिये उस के सारे मनोरथ सफल किये हरिने सकल दुख हरलिये।

जिन लोगों ने उसको जिस रूपसे देखना चाहा उन को उसी रूप से दर्शन दे कर कृतार्थ करदिया, सुन्दरताइ के लोभी रसिक जीवों को श्रीदशरथनंदन रघुवर राज कुमार और नंद नंदन जदुवर प्रेम आधार ने इन दो मनो-हर परम सुन्दर रूपों में प्रगट होकर सुख और आनंद प्रदान किया।

अहा !!! उस सौन्दर्य का कौन बखान करसके, उस सांवरी सूरत माधुरी मूरत पर सुप्नमें भी जिसकी नज़र पड़ गई तन बदन की सुध बुध सारी बिसर गई, उस मनो-हारी प्यारी श्याम घटा और सुन्दर छटा पर त्रिलोकी की सोभा को वार डारिये, और वो मदन मोहनी सोहनी झांकी करके फिर किस को निहारिये।

उस मन्द मुसकान प्यारी आन वान रसकी खान चितवन मेहरबान रसिकों के जीवन प्रान अनोखी शान पर कुर्बान सारा जहान है।

श्री अंगोंकी निकाई सलोनी छबि की सुन्दरताई अनुपम लवनाई रूप मधुर ताई कौ बर्णन करै वो किसकी ज़बान है।

भक्तोंपर कृपाकी नज़र दिलमें सच्चे प्रेमियों की क़दर
विशाल नेत्र कृपा और दयाके रसमें तर वो अभय और
वरदेनेवाले कोमल करहै, जिनसे हरजीव होजाता निडरहै ।

अब उनकी भक्तवत्सलतापर और ध्यान दीजिये
कि जिस भाव और जिस कामना से उनको याद कीजिये
उसी रूपसे पालीजिये, यदि चाहोकि हमारे पुत्र बनकर सुख
देवें तो बेटा बनजावें, जैसे महाराजा दसरथ और महारानी
कोशल्या को रामावतारमें पुत्र भावका आनंद दिया, और
नंदजसोधा को कृष्णावतार में बेटा बनकर सुखी किया;
व्रजकी गोपियों ने पति रुपसे मिलने की इच्छाकी उनकी
उस रूपसे मनोकामना पूरन करदी, अर्जुनने सखा भावसे
उपासनाकी तो उसके दिलकी चाह सखा बनकर पूरीकरी ।

हनुमानजी और २ भक्तोंने स्वामी सेवक भावसे सेवन
किया उनको उसी भावनासे अनुकूल फल दिया ।

आपमें कृतज्ञता का इतना गुण विद्यमान है कि लंका
विजय के अनंतर आपने हनुमानजी की शानमें श्रीमुखसे
फ़रमाया कि तुम्हारे एक उपकार के बदले में जानको
न्योछावर करदूं तो भी बाक़ी उपकारों का बदला किस तरहदूं ।

एकैकस्योपकारस्य प्राणान् दास्यामि मारुते ।
शेषाणां मुपकाराणां तथापि ऋणिनो वयम् ॥

पूतना राक्षसी ने जान लेनेकी नियत से ज़हरीला दूध
पिलाया उसका भी इतना उपकार माना कि अपनी माँ की
बराबर उसको परलोक सुख बख्शदिया ।

अहो बकीयंस्तन कालकूटं जिघांसया पाय यदप्यसाध्वी ।
लेभेगतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कंवा दयालुं शरणं व्रजेम इति

अब विचार करो कि ज्ञानीपुरुष ऐसे सर्व गुण सम्पन्न परमात्माको छोडकर दूसरे किसी संसारी पदार्थसे क्यों कर प्रीत करसक्ता है, यदि मन रूप आसक्ति स्वभाव वाला हो तो परम मनोहर श्यामसुंदर से वढकर कोई महवूव नही होसक्ता। यदि अच्छे गुण सुनकर गुणवान की प्राप्ति चाहे तो दयावान् कृपानिधान श्रीभगवान् से वढकर कोई दूसरा प्रीतिपात्र नहीं होसक्ता। इसलिये कहागया है कि (जीना वेकारहै महवूव से गरप्यार नहीं) अव कहो तुम्हारे मनका संदेह दूर हुवा या नहीं।

सुमति—श्रीमहाराज! अव मैंने भलीभांत समझलिया कि दुनियामें कोई जीव या कोई पदार्थ प्यार करने योग्य नहीं है; सच्चा महवूव वही परमात्मा है उसमें जी न लगाना आयुष्य को वृथा गमाना है। संसारी पदार्थों में चित्त फंसाना धोका-खाना है। परन्तु एक वातका दासी के मनमें खटका और है, वो महाराजको विचारणीय है।

मैंने सुनरखा है कि योगाभ्यास किये विना यह चंचल चपल मन वसमें नहीं आता, योग साधन के विना मनका स्वभाव कहीं नहीं जाता, महात्मा लोग योगको वडा वताते हैं योगके द्वाराही परमात्मामें मनको लगाते और परमानंद पाते हैं. इस विषयमें आपकी क्या आज्ञा है, दासीके योग साधन उपदेश सुननेकी भारी इच्छा है।

महात्मा—अच्छा पुत्री! आजतो वहुत विलम्ब होगया है अधिक वातचीत का समय नहीं रहा है, हमारे नित्यकर्म का समय जारहा है, अवतो हम जाते हैं। कल इसी समय आकर योग साधन उपदेश सुनावेंगे। तुम्हारे कल्याणके लिये योग मार्गभी वतावेंगे। इतना कहकर महात्मा पधारते हैं। सेठ सेठानी दंडवत प्रणाम करके उसी स्थान पर डेरा लगाते हैं।

———*———

* तीसरा सत्सङ्ग *

॥ योग साधन उपदेशका अङ्ग ॥

प्रभात का समय है विशेष कर बसंत बहारके मौसममें इस समय आकाश से अमृत बरस रहाहै, हर एक उपबन अद्भुतजोबन वाला नंदलाल के प्रेममें सरस होरहा है, देवताओं के झुंडकेझुंड विमानों में विराजे हुये अंतरिक्षकी सैर कर रहे हैं, गन्धर्व और देवकन्या अप्सरायें प्रभाती राग रागनियों के स्वर बीना सितार तानपूरों में भररहे हैं, मीठी सुरीली तानों के साथ अलाप करती हुई अतिसुंदरी हूरों और परियों के जोबन उभर रहे हैं परमेश्वर परमात्मा से विनय और प्रार्थना के पद उचर रहे हैं, उधर मुनि नारद हरीगुण गाते बीना बजाते रस बरसाते प्रेमसरसाते आकाश में आनंद से विचर रहे हैं।

सनकादिक, बशिष्ठ, विश्वामित्र, वेदव्यास आदिक महर्षि मुनि वेदकी धुनि करते हुये परमब्रह्म पुरुषोत्तम भगवान् की स्तुतिमें तत्पर हैं, मर्त्यलोक के जीवों पर कृपादृष्टि डालते हुये प्रेमसे तरबतर हैं, ऐसा सुहावना मन भावना प्रभात का समय है, बडभागी वोही है जो ऐसे अमृत बर्षा की समय भगवत् ध्यानमें तन्मय है और जो तमोगुणी आलसी जीव ऐसे शुभसमय में चादर तानकर सोते हैं, वो अमोलक रतनको खोते और पीछे रोते हैं।

देव ऋषि महर्षि लोग जिन लोगों को भजन ध्यान करते पाते हैं उनको आशीर्वाद देकर अन्तःकरन में परमात्मा की भक्ति उपजाते और हर्ष बढाते हैं, इसी एकान्त और

शान्त समय में गिरिराज से उतरती हुई, एक परम सुन्दरी परी प्रेमरसते भरी ज़बानसे हरि हरि कहती हुई झूमती घूमती इसी तरफ़ आरही है, जिसकी हरएक अदा दिलको लुभारही है, (उसे देखकर सेठजी अपनी सेठानी से कहते हैं)।

सेठ—अहो ! प्राणप्यारी !! देखो२ !!! आजतो महात्माजी एक सुंदर नारी मनोहारी के भेषमें आरहे हैं, अद्भुत छटा दिखा रहे हैं।

सुमति—नहीं नहीं ! प्राणनाथ !! यह तो कोई स्त्री है पुरुष नहीं है।

इतनेमें वो सुन्दरी आपहुंचतीहै, और सेठ सेठानी नमस्कार करके उसको बड़े आदर सत्कार से आसन देते हैं, वो स्त्री आसन पर बिराजमान होकर नीचे लिखा हुवा पद गातीहै।

॥ पद ॥

सखी बड़ी बिरहकी पीर वीर कैसे तनको संभालेंगे ।
जियरा धरत न धीर चीर तन को चीर डालेंगे ॥
लाज कपट अहंकार जारकर धूनी लगालेंगे ।
जोगन बन सब देहपे नेह विभूति रमालेंगे ॥
कृष्ण कान को धरके ध्यान मुख अलख जगालेंगे ।
भजन को सिंगीनाद बजा मोहन को बुलालेंगे ॥
मन मानक दे भेट चरन छातीसे लगालेंगे ।
अंसुवन धारकी डोरीडार पियाको अटकालेंगे ॥
त्रिकुटि महल में सेज बिछा प्रीतम को सुलालेंगे ।
नयन कपाट को मूंद कुफल श्रुतीका लगालेंगे ॥
जागेंगे जब श्याम वहाँ बन्सी को बजालेंगे ।
अनहद धुन सुन मस्त होय परमानन्द पालेंगे ॥

सुरत ठान मथुरेश पियासे तन तपन बुझालेंगे ।
बहुत दिननके बिछुडे पियासे मिल मोज मनालेंगे ॥

इस पदको सुनकर और सेट सेठानी दोनों मस्त और प्रेमसें मग्न होजाते हैं, वो सुन्दरी स्त्री दोनों को चेत कराकर कहती है ।

सुन्दरी—ए बडभागियो ! तुमलोग धन्यहो उठो चेतकरो धीरज धरो दोदिनसे तुमने बडाभारी सत्संग का लाभलिया, मनुष्य जन्म सफल किया, आज तीसरे दिन में भी सत्संग का लाभलेने को आईहुं, तुमको देख कर अत्यन्त सुखपाई हूं ।

सुमति—बाईजी ! आपने बडी कृपाकी जो हमको यहा पधार कर दर्शन दिया, हमारे मनको प्रसन्नकिया, जो पद आपने इस समय प्रेमसे गाया, उसने बहुत ही आनंद बढाया, यह तो आज्ञा कीजिये, आपका क्या नाम है कोन-सा धाम है ? जिसमें आपका निवास है, क्या वो स्थान यहां कहीं आसपास है ?

सुन्दरी—सेठानीजी ! मेरानाम अनुरक्ति है, संसार से मुझे विरक्ति है, हरिचरणों में, बालपने से उपजी भक्ति है, ब्रजमें ही मेरो निवासस्थान है, आनंदकन्द ब्रजचंद नंदनन्दन के चर्णों का सदा ध्यान है, जहां भगवत् कीर्तन होता है, वहीं लगारहता मेरा कान है, इष्टदेव मेरा वही कृष्णकान्ह हैं, काम मेरा उसीका गुणगान है। महात्माजी जो तुमको उपदेश सुनाते हैं, उनके दर्शनों को व्याकुल मेरा प्रान है ।

यह बात चीत होही रही थी कि अनुरक्ति को दूरसे

महात्माजी पधारते हुये दिखाईदिये, वो उंगली के इशारे से सुमति को बतलाती है, तीनों खडे होकर देखते हैं और महात्माजी इतने में यह पदगाते हुये आपहुंचते हैं ।

॥ पद ॥

जिधर देखो उधर पाई झलक घनश्याम प्यारेकी ।
है जोकुछ रोशनी जगमें उसी दिलवर हमारेकी ॥
कहीं बालक कहीं बूढा कहीं जाहिर कहीं गूढा ।
कहीं चातुर कहीं मूढा है लीला उस दुलारेकी ॥
उसीका रंग हर गुलमें उसीका प्रेम बुलबुलमें ।
है खुशबू इश्ककी कुलमें उसी मनहरने वालेकी ॥
वोही जीवोंका हितकारी है सच्चीप्रीत उसेप्यारी ।
वो धनहै गर तलबगारी हो उस प्रीतम के द्वारेकी ॥
मनोहर सांवरागिरधर छबीला सोहना नटवर ।
करे झांकी रसिकदिलभर के मथुरा प्राणप्यारेकी ॥

वो तीनों महात्माजी को दंडवत् प्रणाम करके आसन पर उनको बिराजमान कराते हैं, और माहात्माजी फरमाते हैं ।

महात्मा—तुम लोग उपदेश सुननेके अनुरागी पूरे बड़भागी हो, कल तुमने योग सिद्धांत सुनने की इच्छा प्रकट कीथी, हमनेभी तुमको अधिकारी जानकर आज्ञा दीथी, अब सावधानी से श्रवण करो, सारांशको हृदयमें धरो ।

॥ योग शब्दका अर्थ ॥

योग कहते हैं दो चीज़ों के मिलनेको, इसी को मेल मिलाप शब्दों से संसारी व्योहार में बोलाजाता है ।

वास्तव में जीवके परमात्मासे मेल कराने को योग कहते हैं ।

भगवद्गीता में मुख्य तीन प्रकारका योग वर्णन हुवा है।

(१) कर्म योग, (२)ज्ञान योग, (३)भक्ति योग।

कर्म योग, और ज्ञान योग, और भक्ति योग, तीनों ही परमात्मा से मिलने के साधन हैं।

क्योंकि अहंभाव त्यगकर और फलकी इच्छा न रख कर कर्म करनेसे शुभ अशुभ फलभागे के फन्देमें मनुष्य नहीं फंसता, अंतःकरण शुद्धहोकर परमात्मा से मिलने और परमानन्द प्राप्त करनेका अधिकारी बनजाता है।

ज्ञान योगसे तीन पदार्थोंका ज्ञान मिलताहै, (१)जीवात्मा, (२)परमात्मा, (३)जगदात्मा। अर्थात् मैं जीव क्या पदार्थ हूं, परमात्मा क्या और कैसा है, जगत् संसार क्या चीज़ है, इसको जानकर मुक्त होता है।

भक्तियोग अर्थात् जब उस ज्ञानयोग के द्वारा पहिचाने हुये परमात्मा में प्रेम उत्पन्न होजाता है और उस का भजन स्मरण करते हुये मस्त होजाताहै; तो प्रेमके आधीन परमात्मा ऐसे योगीसे दिलभर के मिलता और खुद अपने प्रेमीका प्रेमी बनजाता है।

पस, तीनों रास्ते परमात्मा से मिलकर परमानंद पानेके हैं, परन्तु योगकी महिमा श्रीभगवान् ने गीता में बहुत कुछ फ़रमाई है कि तप करनेवालों से भी योगीका दर्जा बड़ा है, और ज्ञानियों और कर्म कांडियों से भी योगी बड़ा है।

उसी योगको पातांजली महर्षी ने आठ अंगवाला कहा है इसीवास्ते अष्टांग कहाया है।

उन्होने जो योगशास्त्र बनाया है उसमें योगका लक्षण

यह फरमाया है, चित्तकी वृत्तिके रोकने का नाम योग है, (योगश्चित्त वृत्तिं निरोधः) अर्थात् जब मन अचल और स्थिरहुवा तो जो अन्तर परमात्मा से मिलने में मनके चंचल होनेकी अवस्थामें था जातारहा, परमात्मा (दूर कहां है उससे समीप कोई भी नहीं) प्राप्त होगया ।

अतः परमात्मासे संयोगका कारण केवल मनका रोकना या वशमें लाना है, अब उसके आठअंग वर्णन कियेजाते हैं ।

॥ अष्टांग योग ॥

१ यम, २ नियम, ३ आसन, ४ प्राणायाम, ५ प्रत्याहार, ६ ध्यान, ७ धारण, ८ समाधी, ।

इसमें पहिला साधन यम है, उसका लक्षण यह है कि दश बातें मिलकर यम कहलाताहै, १ अहिंसा, किसी जानदार को न सताना, २ सत्य, वचन और कर्म में सच्चाईका होना, ३ अस्तेय, चोरी न करना, ४ ब्रह्मचर्य, इंद्रियोंको वशमें रखना, ५ क्षमा, सहनकरना, ६ धृति, धीरजरखना, ७ दया, कृपाकरना, ८ आर्जव, सीधापन, ९ मिताहार कम, और हलका भोजन करना, १० शौच, तन और मनको स्वच्छ रखना ।

दूसरा नियम, वोभी दश वस्तु से संयुक्त है ।

१ तप, शीत उष्णादि सहना, २ सन्तोष, सब्र रखना. ३ आस्तिक्य, वेद और ईश्वरको मानना. ४ दान, परमार्थ बुद्धी से देना. ५ ईश्वरपूजनम्, परमेश्वरकी वन्दना और अर्चन करना. ६ सिद्धांत वाक्य श्रवण, सिद्धांत वचनों को सुनना. ७ ह्री, लज्जा. ८ मतिः, अच्छी बुद्धि का होना. ९ जप, परमात्मा का नाम जपना. १० हुतं, अग्निहोत्र करना ।

अब तीसरा साधन आसन है और वो चौरासी प्रकारके हैं।

(१) पद्मासन, (२) सुखासन-सिद्धासन, (३) सिंहासन इत्यादि—आसन का प्रयोजन इतनाही है कि जिसढंग से बैठकर मनुष्य भजन ध्यान करसके प्रायः पद्मासन और सिद्धासन और सुखासन यह अधिक बर्तावमें आते हैं, प्रत्येक आसन की रीति जुदी २ है।

चौथा अंग योगका प्राणायाम है, अर्थात प्राण बायूका वसमें लाना, इसमें पूरक कहते है प्राण बायूको खेंचकर ऊपर चढाने को और जितनी देर उस को रोकाजावे उसे कुंभक कहते हैं।

फिर उस रोकीहुई हवाको धीरे २ छोडना या बाहर निकालना इसको रेचक कहते हैं।

प्राणायाम अर्थात् कुम्भकभी आठ प्रकारका है, १ सूर्यभेदी, २ उज्जाई, ३ भस्त्रा, ४ सीतली, ५ शीतकारी, ६ केवल, ७ भ्रामरी, ८ मूर्छा।

इसके द्वारा चित्तकी शुद्धि होती है और मनकी चंचलताई मिटजाती है, आयुबढती और आनन्द की प्राप्तिहोती है।

५ पांचवां अंग प्रत्याहार है, यह मनकी रुकावट के लिये एक प्रकारका अभ्यास है कि बहिर्मुखचित्तवृति को अन्तर्मुख करना।

६ छटा, ध्यान, गुरु की आज्ञा और शिक्षा के अनुसार परमात्मा का ध्यानकरना ७ सातवां साधन धारणा, ध्यान कीहुई वस्तु का स्थिर रखना, ८ आठवां अंग समाधि है यह अंतिम अवस्था योगकी है। जिस से मन परमात्माके

ध्यानमें मग्नहोजाता है और आनंद प्राप्त होता है। इसके साथही शरीरकी शुद्धिके अर्थ नेती, धोती, कुंजल, न्योली, वस्ती आदिक साधन और हैं।

जब योगसिद्ध होजाता है तो सिद्धियां प्राप्त होती हैं। जैसे शरीरको निहायत छोटासा बनालेना इसको अणिमा सिद्धि कहते हैं।

शरीर को मनचाहे जितना बडा बनाने को महिमा सिद्धि बोलते हैं। इसी तरह देहको हलका बनालेना, भारी बनाना, दूसरे किसी मृतक शरीर में प्रवेश करना इत्यादि।

अब तुमलोग यदि योगसाधन करना चाहो तो तुमको नेती धोती आदिक शरीर शुद्धिकीरीति बतलाईजावे और फिर आसन प्राणायाम आदिकीविधि सिखाईजावे।

सेठ—हां महाराज कृपाकरके प्रथम नेती धोतीआदि देहकी शुद्धि की रीति सिखलाइये, बादको आसन प्राणायाम की विधि बतलाइये महरबानी फ़रमाइये।

सुमति—हाथ जोडकर श्रीमहाराज! ज़रा ठहर जाइये पहिले दासी की प्रार्थना सुनकर अष्टांग योगका उपदेश बादमें फ़रमाईये।

महात्मा—कहो! क्या कहती हो?

सुमति—महाराज! आपने जो आठ अंग जोगके सुनाये, दासीको बहुत कठिन नज़र आये, पहले तो आरंभ के दो साधन यम और नियम ही ऐसे बतलाये जिनका पालन करना गृहस्थीसे कब बनआवे किसी जीवको न सताना, सदा सत्यही बोलना, ब्रह्मचर्य में रहना, गर्मी सर्दी वगैराका

सहना, दूसरेकी चीजको न लेना. दानदेना इत्यादि सहजकी बात नहीं है, असम्भव प्रतीत होताहै और पहली दूसरी सीढी पर चढे बिना ऊपर पहुंचना क्योंकर होसकता है, प्राणायाम से समाधितक पहुंचना बहुतही कठिन है, मनुष्य आलसी और बिषयासक्त से कब बनपडे, हजारों लाखों में वहांतक पहुंचता कोई बिरलाही साधकजन है, कलियुगमें बहुत कम नजर आता कोई पूर्णाभ्यासीतन है और दासीने वडे बूढों से यह बात सुनी है कि हट योगसे सुगम एक राजयोग और है, जिसका साधन करता हरएक गुणीहै, कृपा करके राजयोगका भी कुछ वर्णन करदेवें. तो वडे आनन्दकी बातहै, इन दोनों प्रकार के योगों में क्या भेद और किससे सहज मिलती करामात है।

सेठ—(जल्दीसे) हां महाराज मेरी घरवाली ठीक कहती है यह परमार्थके बिचार को जल्दही ग्रहण करलेती है।

महात्मा—सेठजी! तुम्हारी भार्या बहुतही स्यानी है। इसके प्रश्नका उत्तर न देने में भारी हानी है। विवेक और विचार सेही मनुष्य होता ज्ञानी है। सुनो! राजयोग या मानसिक योग हठयोगसे सहज जरूर है। उसकी चर्चा आज कल दूर २ है। योरप की बिलायतों में भी इसका विशेष प्रचार है। अम्मरीका (पातालदेश) में इस विद्याका बहुत बिस्तार और विचारहै। जो सिद्धियां और करामात हटयोग से प्राप्त होती हैं वो राजयोग से भी प्राप्त होजाती हैं। परन्तु महात्मा लोगों को सिद्धियां शत्रुकी समान नजर आती है। क्योंकि योगी जब सिद्ध बनजाता है तो दुनियां

दारोंके फन्देमें फँसजाता है और परमतत्व तक नहीं पहुँचने पाता है ।

वस्तुतः हटयोग और राजयोग दोनों का एकही फलहै कुछ क्रियाका भेद और कुछ राजयोग हटयोगसे सहलहै । दोनों में मनकाही बल और उसीके रोकने का अमल है । संकल्पशक्ति इसमें प्रधान है उसीका अब होता बयान है ध्यानसे सुनो ।

॥ संकल्प शक्तिका बयान ॥

परमात्माने आदमीको सारे संसारमें श्रेष्ठ बनाया है, इस लिये मनुष्य सारी सृष्टिमें श्रेष्ठ कहायाहै, उसमें संकल्पशक्ति जिसको जबान उर्दू में कुव्वत इरादी और इंग्रेजी में विल-पावर बोलते हैं, ऐसा अमोल पदार्थ बख्शा है कि उसके द्वारा मनुष्य बडे २ अचम्भे के काम कर सक्ता है, परन्तु अज्ञानता से मनुष्य अपनी इस अलौकिक सामर्थ्य को जानता नहीं दूसरे मनके मलीन होनेसे अपने अतुल बलको पहिचानता नहीं और न जानने के सबबसे उसको काममें क्यों करलासक्ता है, जैसे मलीन मिट्टीके पदार्थमें आदमी अपने चेहरे को नहीं देखसक्ता, परन्तु जब सोडा (एक किस्म के खार) से मिट्टीको साफ करके उसका काच (शीशा) बनायाजाता है तो उसमें अच्छी तरह चेहरा नजर आने लगता है, इसी तरह मन जितना साफहो उसमें परमात्मा का प्रकाश उतनाही अधिक दिखाई देता है । तब उसमें संकल्पशक्ति भी चाहे जितना काम देने लगती है । देखो

वोही मिट्टी का पदार्थ कांच जब अधिक शुद्ध होजाता है तो उसकी दूरवीन बनकर आकाश के सितारों तक का हाल उससे ज्यौंका त्यौं नजर आने लगता है; इसी तौरपर मन जब पापोंके मलसे शुद्ध और निर्मल होजाता है तो उसमें संकल्प शक्ति पूरी प्रकट होकर उससे जोचाहे सोही काम लिया जासक्ता है।

पुराणों में प्रायः लिखा पायाजाता है कि किसी ऋषिने अपने योगबलसे दूसरा स्वर्ग रचदिया या समुद्र को तीन चुल्लूमें पीलिया या किसीको शाप देकर भस्म करदिया या किसी दीन कंगालको वरदान देकर राजा बनादिया यह सब बातें आजकलकी नई रोशनी वालोंके विचारमें गप्प गपोड़े हैं परन्तु योगबल और संकल्प शक्ति की महिमा जानने वाले इनको सच्चा और सही मानते हैं जराभी सन्देह नहीं करसक्ते।

महाभारत में लिखाहै कि जिस समय धृतराष्ट्र राजाके १०० सौ बेटे मारेगये उनकी विधवा स्त्रियां सतीहोने को तैयार हुईं परन्तु अपने पतिकी लाशें न पासकीं इस कारण से अतिव्याकुलथीं, उस मौकेपर महर्षि नारद और वेद व्यासने गांधारीकी प्रार्थना करनेपर अपनी संकल्प शक्ति के बलसे उन सौ १०० बेटों की आत्मा को स्वर्गलोक से बुलादिया और अपनी २ सूरत व शकल में प्रकट होकर अपनी स्त्रियों से मिले और हर एक ने अपने मृतक शरीरोंका पता बतलादिया तब वो स्त्रियां सती हुईं।

शोकका अवसर है कि भारत वर्षकी यह विद्यायें यहां

से लुप्तहोगईं और अमरीका आदि देसों में प्रचरित हो रही हैं।

वहां वहुतसी समाजें योगविद्या के कर्तव दिखारही हैं। आत्माओं को दूसरे लोकों से बुलाकर वातचीत करादेना उनके वायें हाथका खेलहैं, परन्तु हमारे नई रोशनी वाले इसमें भी कुछ औरही कल्पना करलें तो आश्चर्य नहीं।

अमरीका वाले औरभी वडे २ काम संकल्प शक्ति से लेरहे हैं, एक मानसिक योगीने एक जलसे में जिसमें चार पांच हजार जैन्टिलमैन मौजूद थे पहुंचकर यह कर्तव दिखलाया कि सभासदोंपर नजर जमाकर अपना दाहना हाथ उन्नत किया उसकी संकल्प शक्ति का सवपर यह असर हुवा कि सवने अपना दहना हाथ ऊंचाकर लिया, फिर उसने हाथका इशारा जमीनकी तरफ किया यकायक सवलोग कुर्सीयों से उतर कर जमीन पर लेटगये, उसकी दिली ताकत को देखना चाहिये कि पांचहजार आदमी उसके आज्ञापालक होगये।

लड़के लडकियों पर प्रयोग किया जाताहै, उनको बेहोश करके उनकी रूहोंके जरिये से गुप्त वृतान्त निश्चय करलिये जातेहैं; आंखोंपर कपड़ा बांधकर किताव पढना वहुत दूर देशमें वैठे हुये दोस्तों से वातचीत करना, दूसरे के दिलकी सोची हुई वात वतलादेना, सूक्ष्म शरीर को स्थूलसे जुदाकरके देशान्तर की सैरकर आना शरीर के अन्दर रोगका कारण निश्चय करलेना, इत्यादि वहुतसे काम मानसिक योगके वलसे किये जाते हैं।

कहावत है कि एक मेडम साहिवा का खाविंद दूसरी

वलायत में गया हुवा था, बहुत अर्सा होगया कोई ख़ैर ख़बर नहीं मिलने के सबबसे यह बहुत घबराईहुई थी, इनके नगर के समीप जंगल में एक साधू रहताथा जिस को लोग पागल कहा करते थे, मेड़म साहिबा अकेली उस के पास पहुंचीं और अपने ख़ाविंद की ख़बर न मिलने से बेचैनीका हाल ज़ाहिर किया साधूजी एक झोंपड़े में रहते थे जिसमे टूटेसे किवाड़ भी लगेहुये थे, साधुने मेड़म से बाहर बैठनेको कहा और आप अन्दर झोंपड़ी के दाख़िल होगये और किवाड़ बन्द करालिये, मेड़म को बाहर बैठेहुये एक घंटा गुज़र गया तब उन्होंने अन्दर झोंपड़ी के किवाड़ों की दराज़में होकर यह अचरज देखा कि साधूका आधा अंग एक तख़ते पर और आधा ज़मीनपर पड़ा है, घबरा कर उन्होंने आंखें बन्दकरलीं और साधूके हुक्मके म्वाफ़िक़ वहीं बैठी रही, जब एक घंटा और गुज़रगया तो साधूजी अन्दर से निकले और मेड़म को तसल्ली देकर कहा कि तुम्हारा ख़ाविंद बहुत राज़ी ख़ुशीसे है वो इस महीने की आख़री तारीख़ को जो जिहाज़ वलायत से आने वाला है उसमें सवार होकर आता है तसल्ली रखो।

मेड़म ख़ुश होकर मकानपर आगई और उसी तारीख़ को जो साधुने बतलाई थी उसी जिहाज़ में इनका खाविन्द आपहुंचा निहायत ख़ुशी मनाई गई मेड़म ने अपने प्यारे ख़ाविंद से यह हाल कहा और साधू से मिलने को जाना चाहा, साहब ने उनको मना किया और कहा कि वो फ़क़ीर एक पागल और जाहिल आदमी है उस से मिलना फ़िज़ूल है. उसने तुम से योंहीं कहदिया इत्तफ़ाक़िया वो बात मिल

गई ऐसा अक्सर होजाता है, मेड्म साहिवा उसरोज तो रुकगई परन्तु वारम्बार अपनेखाविंद से साधू के दर्शन को कहती रहीं, एक रोज़ उस प्रांत मे दोनों स्त्री पुरुष जानिकले साहव ने ज्योंही उस साधू को देखा निहायत तअज्जुव कर के ज़मीन पर गिरगया कुछ वेहोशीसी होगई, थोड़ी देरके बाद जब होशआया तो साहव ने जाहिर किया कि यहहीं साधु फलां तारिख में मुझको वलायतमें मिलाथा और इसने मुझसे दरियाफ्त कियाथा कि वापिस कब जाओगे तो मैंने इससे कहदियाथा कि जिहाज़ फलां तारीख को रवाना होगा उस में सवार होउंगा और आखरी महीने पर पहुंच जाऊंगा, तअज्जुब इस वातका है कि इतनी दूर दरिया के रास्ते यह शख्स क्यों कर पहुंचा और जिहाजमें सवार नथा फिर क्योंकर यहां आगया।

उस रोज़ से दोनों उस के शिष्य होगये और मेड्म साहव ने उससे मानसिक योग सीखा, यहांतक उनमें संकल्प शक्ति वढगई कि कई मुर्दा बच्चों को ज़िन्दा करदिया; करनेल आलकट जो मशहूर योगी हुये वो इन्हीं मेड्म साहवा के शिष्य थे और हज़ारों को उनसे योग विद्या का लाभ पहुंचा, तात्पर्य यह है कि संकल्प शक्ति के द्वारा मनुष्य क्या नहीं करसक्ता।

जब यह शक्ति मनुष्य को पूरी २ प्राप्त होजाती है तो मस्तहाथी को रोकदेना या दरियाको वहने से वन्द करदेना, आग से पानी और पानी से आग का काम लेना, इत्यादि वहुत से काम लिये जासक्ते हैं।

जो मनुष्य संकल्प शक्ति के वढाने का यत्न करे उस

को ब्रह्मचर्य में रहना और मद्य मांसआदि मनके कठोर करनेवाले आहार से बचना आवश्यक है ।

सबसे अधिक यह शक्ति मनकी सामर्थ्य बढाने से होती है परंतु आंखों के द्वारा यहशक्ति दूसरे पदार्थपर पडती है इस कारण से पहिले अभ्यास त्राटक साधन का होनाचाहिये ।

(१) किसी दीवार पर एक गोलाकार खींचकर उसके सन्मुख बैठकर दृष्टि जमाइ जावे यानी ऐसी दृढताके साथ नज़र लगाईजावे कि आंख झपकन के किसी कागज़पर गोलाकार स्याही का दायरा खींचकर या कांसी की थाली में स्याह गोलाकार निशान बनाकर भी अभ्यास त्राटक का होसक्ता है ।

(२) मकानमें अंधेरा करके अपने सामने एक डली कपूरकी रखकर उसपर निगाह जमानेकी मश्क कीजावे तो इससे बहुत जल्दी सिद्धिहोती है; आरंभ में थोडी देर आँख न झपनेकी मश्क कीजावे फिर बढाते २ जब एक घंटे तक निगाह ठहरने लगे और आंख नझपे तब समझना चाहिये कि त्राटक सिद्ध होगया और नजरमें त्राटक सिद्ध होनेसे बड़ीभारी ताकत पैदा होजावेगी ।

परन्तु आवश्यकता इस बातकी है कि मनकी संकल्प शक्ति भी बढ़े जिधर निगाह पड़े उसके साथही मनकी संकल्प शक्ति भी उस पदार्थ पर जाकर इरादे को पूराकरे अजगर सांप जिस से हिला चला नहीं जाता इस संकल्प शक्ति के द्वारा ही पेट भरलेता है यानी जहांतक उसकी दृष्टि पहुंचती है कोई जानवर उसको दिखाई देता है और

गई वोह उसपर निगाह डालकर इरादा करता है कि यह जानवर मेरे मुंहमे आजावे, ऐसा ही होता है कि वो प्राणी खिंचाहुवा उसकी तरफ चला आता है अजगर मुंह फाड़कर उसको अपने पेट में दाखिल करलेता है अब आवश्यकता उन उपायों के बर्णन करने की है जिन से संकल्प शक्ति बढतीहै।

(३) एक हरे फूल को सामने रखकर एकांत में बैठकर उसपर त्राटक लगाकर इरादा करो कि सूखजावे और बहुत दृढताई के साथ दिलमें निश्चय करके चिन्तन करो कि हरा फूल सूखगया, ऐसा अभ्यास पंद्रह मिनट रोज कियाजावे, परन्तु यह ध्यान रहे कि दिल उस अंतर में दूसरी तरफ न जावे, यदि चलाजावे तो फिर पन्द्रह मिनट तक अभ्यास कियाजावे, चालीस रोज तक बराबर ऐसा अभ्यास जारी रहने से मनकी शक्ति दृढ होजावेगी और उसका यह परिणाम होगा कि हरा फूल सामने रखतेही ज्यों उसपर नजर डालीजावेगी और इरादा कियाजावेगा कि वो खुश्क होगया तुरंत वो फूल सूखजावेगा।

(४) जब नम्बर ३ का साधन सिद्ध होजावे तब सूखे फूल को सामने रखकर उसपर नज़र जमाकर इरादा किया जावे कि वो हरा होजावे और जब सामने रखते ही सूखा फूल हरा होजावे तब समझो कि यह अभ्यास पूराहोगया।

पीछे सूखे मेवों को तरकरना या तर मेवोंको खुश्क करदेना या हरे वृक्षको सुखादेना या सूखेको हरा करदेना यह बातें बहुत सुगमता से होने लगेंगी।

(५) जब जड़ पदार्थोंपर अभ्यास की पूर्णता होजावे तब जीवों पर अभ्यास करना चाहिये, यथा एक कीड़ा ज़मीन पर चलरहा है उसपर नज़र डालकर इरादा किया-जावे कि वो ठहरजाये और दृढताई के साथ ख़याल किया-जावे कि ठहरगया, थोड़ी ही मश्क में वो कीड़ा हुक्म मानने लगेगा।

उसके अनन्तर चिड़िया कबूतर आदि पक्षियों पर अभ्यास करने से शक्ति पैदा होजावेगी कि जहां नजर उठाकर किसी पक्षीको देखा और ख़याल किया कि वो वृक्ष से नीचे आगिरा या उडता हुवा आकाशसे पृथ्वीपर उतर आया या अपनी गोदमें आबैठा तो वो पक्षी तुरन्त हुक्म मानने लगेंगे, पीछे चौपायों पर फिर मनुष्योंपर संकल्पश. ^धात^ मडे काम देने लगती है।

सुनाजाताहै कि कोई मनुष्य भुरकी डालकर किसी बच्चे या औरतको उडालेगया, यह बात इसी संकल्प शक्ति से होसक्ती है।

मोहन उच्चाटन आदि मंत्र जो सुनेजातेहैं वोभी संकल्प शक्तिके ही कर्तब हैं।

जब ऊपर लिखेहुये पांचों साधन सिद्ध होजावें तो जो सिद्धियां अष्टांग योगके द्वारा प्राप्त होनी पहिले वर्णन होचुकी हैं वो सब स्वयं प्राप्त होजाती हैं।

(६) एक साधन संकल्प शक्तिके दृढकरने का यहहै कि एकान्त स्थानमें कुर्सी पर बैठो जहां किसी दूसरेकी आवाज कानतक न पहुंचे, अपने सामने एक मेज़ या चोकी

पर एक कांसी धातकी कटोरी रखकर कुछदेर उसपर त्राटक जमाकर आंख बन्दकरलो और ध्यानकरो कि तमाम मेजपर वहुतसी कटोरियां रक्खीहुई हैं. और इसी प्रकारकी और कटोरियां उस सारेस्थानकी भीतों और छतपर लगीहुई हैं ।

प्रतिदिन ऐसा ध्यान कमसे कम 'एकघण्टा करने से पन्द्रह दिनके बाद अभ्यास के समय यह संकल्प करो कि ध्यानमें जो कटोरी मेजपर सामने रखीहुई है वो किसी लकड़ी के टुकड़े से हम बजारहेहैं और टन २ की आवाज आरही है, जब आवाज सुनाई देतो आंख खोलदो. इस अभ्यास की पूर्णता का सबूत यह होगा कि जिस समय तुम ध्यानमें कटोरीकी आवाज सुनेगे उस मकानमें जहां२ असली कटोरियां रखी होंगी सब अपनेआप [illegible] की आवाज देने लगेंगी और सब आदमियोंको [illegible] वाज सुनाइदेगी ।

(७) नम्बर ६ का साधन सिद्ध होनेके बाद ध्यानमें किसी देवता या गुरु या किसी सन्त महात्माका चिन्तवन करके संकल्प करो कि हम उनकी पूजामें धूप खेरहेहैं और उसकी सुगंधिसे सारा मकान महकरहाहै, उधरतुम ध्यानमें धूप देकर उसकी सुगंध लोगे इधर सारा मकान धूपकी सुगंधिसे महक उठेगा और सब आदमियों को वो सुगंधि धूपकी आने लगेगी ।

एक महात्मा धूपस्वामि विख्यात थे जिनको वहुत से लोगोंने देखाहै जो जिसस्थानपर बैठकर मानसी ध्यानमें धूपखेतेथे वो सारास्थान और महल्लाभर धूपकी गन्धसे

महकने लगताथा इसी कारण से उनका नाम धूपस्वामि प्रसिद्ध होगयाथा ।

और एक भक्त मानसी ध्यान के कर्त्ता एक इंग्रेज कलक्टरकी पेशीके सरिश्तेदार थे उनको प्रायःध्यानमें तत्पर रहने के कारणसे पेशीमें पहुंचनेसें देर होजातीथी, एक दिन साहब कचहरी में आगये, सरिश्तेदार को गैरहाज़िर पाकर क्रोधमें आकर चपरासी को हुक्म दिया कि तुरन्त सरिश्ते-दारको बुलालाओ, सरिश्तेदारजी उससमय ध्यानमें बैठहुये भगवान् के भोगके वास्ते खीर बनाकर खीरका कटोरा हाथमें लियेहुये खीरको ठंडी कररहेथे, उसी अवस्थामें चपरासी पहुंचा, वो उसी हालतमें साथ होलिये परंतु ध्यानमें खीर का कटोरा यथावत हाथमें था जिसमेंसे धुआं निकलरहाथा, उसी स्थितिमें साहबके सामने पहुंचे, कलक्टरनें अतिक्रोधमें आकर बड़े ज़ोरसे एक डंडा मेज़पर मारा उसके धमकनेसें सरिश्तेदारके ध्यानके हाथसे ध्यानकी खीरका कटोरा छूटगया और उस मेज पर सारे खीर गर्मागरम बिखरगई, उस इंग्रेज और कचहरीके सारे अहलकारों को बड़ाभारी अचम्भा हुवा कि सरिश्तेदार ख़ाली हाथ आया था उस के पास कोई सामान किसीने नहीं देखा यह गर्मागरम खीर कहां से आई, अन्त में साहबने सरिश्तेदार से इसका कारण पूछा उसने मानसी ध्यान का हाल ज़ाहिर कर-दिया, और उसी वक्त नोकरी से स्तीफ़ा देकर भजन करने चलेगये ।

नितान्त मानसी ध्यान से संकल्प शक्ति बढजाती

और तरह २ के चमत्कार दिखाती है ।

(८) एक और उपाय जल्द सिद्धि प्राप्त होने का यह है कि एक साफ़ कांचका प्याला लेकर उस के तले में फ़ोटोग्राफ़ी में काम आनेकी चांदीकी स्याही लगाओ; इस तरहपर कि कहीं सफ़ेदी बाकी न रहजावे, आधी रात गये पीछे शुद्ध होकर एकान्त में बैठो, कुशा की चटाई का आसन होना चाहिये और मनमें शान्ति; उस प्याले में जहांतक स्याही लगीहुई हो पानी भरदो और एक लेम्प जलाकर प्याले के पास रखो, लेम्प के ऊपर बहुत मोटा कागज़ इस तोर पर लगाओ कि रोशनी पूरी उस प्याले के पानीपर पड़े, जब पूरी रोशनी पानी पर पड़नेलगे तब ग़ौर से निगाह जमा कर पानी को देखो, निगाह एक जगह ठहरी रहे, आरम्भ में बादलों के टुकड़े चलते हुये दिखाई देंगे फिर भी ग़ौर से देखेजाओ, अचरजकी बहुत सी बातें सामने आवेंगी ।

इस साधन से दिव्यदृष्टि प्राप्त होजाती और दूर २ के देशों में जो काम होरहे हैं वो आंखों के सामने ज्यों के त्यों नज़र आवेंगे और जो सवाल पहिले से दिल में मुशकिल से मुश्किल होगा उसका जवाब भी बहुत सच्चा मिलजावेगा और संकल्प शक्ति दृढ होजावेगी ।

(९) रात के समय दीपक पर त्राटक लगाने से अद्भुत बातें दिखाई देती हैं, इसी तरह पर सूर्य निकलने से पहले एकान्त स्थान में खड़े होकर निकलते हुये सूर्य पर, और सायंकाल डूबते हुवे सूर्यपर, और रातको चांदपर

त्राटक का अभ्यास करने से और अंधेरी रात में अंधकार पर निगाह जमाने से सिद्धि प्राप्त होती है।

(१०) शामके वक्त हलका भोजन करके ९ बजे रात को एकान्त स्थान में खाटपर बैठो जिसका सरहाना उत्तरको होना चाहिये, एक लेम्प जलाकर रखो और अपनी नज़र के सामने दक्षिण की दीवार पर एक लोचुगे पत्थर का टुकड़ा लटकाओ और कोई चीज़ कमरे में ध्यान के हटाने वाली नहीं होनी चाहिये, उस टिकिया पर नज़र जमाने से पहिली रातही अद्भुत दृश्य दिखाई देवेंगे, और एक हफ़्ते के अभ्यास में तो बड़े २ चमत्कार मालूम होने लगेंगे।

(११) अभ्यास नम्बर १० की पूर्णता पर (स्वप्न विद्या) प्राप्त होजाती है, इसप्रकार से कि सोते वक्त ये विचार करो कि फ़लाने वक्त हमको जागना चाहिये ठीक उसी समय जाग उठोगे, और यदि कोई होनहार बातका प्रश्न दिलमें रखकर सोचोगे तो स्वप्न में उसका जवाब बहुत सही मिलजावेगा, होनहार बात सामने आजायगी और संकल्प शक्ति दृढ़ होजायगी।

(१२) ऊपर लिखेहुये किसी साधन के द्वारा संकल्प शक्ति बढ़जावे तब रोग निवृत्ति की यह तर्कीब है कि एक गिलास में करीब दोतोले पानी भरकर अगर बीमारी वादी या कफ़ वगैरा सर्दीकी है तो पानी में सूर्य का ध्यान; और अगर बीमारी तप वगैरा गर्मी से है तो पानी में चन्द्रमा का ध्यान करके बीमारी के मिटाने का संकल्प करो

याने यह इरादा करो कि फ़लानी बीमारी इस पानी के पीने या लगाने से हटजावे, फ़ौरन उस पानी के पीने से रोगी का रोग जातारहेगा, सबूत इसका यह है कि पानी में जिसकिस्म के सवाद का संकल्प करोगे मीठा, खट्टा, चरपरा वगैरा वैसा ही स्वाद उसका होजावेगा चाहे सो पीकर देखलेवे।

(१३) यदि कहीं अँधेरा हो और रोशनी पैदा करने की ज़रूरत हो या किसी पहाड को रोशन करना चाहो तो त्राटक लगाकर जहां जिसतोर का संकल्प करोगे वैसा ही होजावेगा, परन्तु ऊपर लिखेहुये साधनों में से किसी का अभ्यास करलेना आवश्यक है।

(१४) मोहनी विद्या यों प्राप्त होती है एक बड़े काच में दृष्टि जमाने की मश्क कीजावे, यानी काच के अन्दर जो अपनी आंखें दिखाई देती हैं उन से आंखें मिलाकर निगाह ठहराई जावे, एक हफ़्ते में पांच २ मिनट, दूसरे हफ़्ते में दस २ मिनट क्रम २ से आधे घन्टे तक नजर जमाई जावे, तो इस साधन से दृष्टि में ऐसी शक्ति और तासीर पैदा होजावेगी कि ज़िस किसी जान्दार की तरफ़ नजर डालकर संकल्प करो गे कि हमारा तावेदार बनजावे वो वैसा ही होजावेगा।

(१५) गुज़रे हुए और होने वाले हालात मालूम करने का साधन=आठ नो वरस के किसी बच्चे को दोज़ानु बिठाकर उस के सामने एक साफ़ आईना रखो और उस को ताकीद करो कि ग़ौर से टकटकी बांधकर आईने में

अपनी आंखों को देखतारहे और किसी का खयाल न करे, न पलक झपकने पावें फिर तुम अपने दोनों हाथ बच्चे के माथे की बराबर से आहिस्ता २ आईने तक लेजाओ (इसी को पास देना कहते हैं) आधे घन्टे तक यह अमल करते रहो, बच्चे पर हालत ख्वाब की तारी होजावेगी यानी नींद आजावैगी, उसवक्त जो सवाल उस से करोगे सही जवाब बच्चे की ज़बान से मिलेगा, फिर उलटा पास देनें से बच्चा जाग उठेगा।

(१६) सूक्ष्म शरीर से कामलेने का तरीका। साधन नम्बर ८ का अभ्यास करके चित्त शुद्धि प्राप्त करने के बाद सोतेवक्त दृढ संकल्प करो कि मुझको अमुक स्थान में पहुंचना है और अमुक मनुष्य से मिलना है, बस स्वप्न में सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से निकलकर उसी स्थानपर पहुंच जावेगा और जिससे मिलना चाहो मिलकर वापिस आजावेगा परंतु कुछ दिनों यह हालत जागने के बाद याद न आवेगी, बादको अभ्यास करते रहने से जागृत में भी याद बनी रहेगी।

(१७) छाया पुरुष (हमज़ाद) का साधन। चान्दनी रात में अपने शरीर की छाया में गर्दन के हिस्से पर नज़र जमाकर दोनों हाथ कमर पर रखकर खड़े रहो (हरिओं तत्सत्) ध्यान में कहेजाओ, पांच मिनट के बाद आकाश की तरफ़ देखो, एक बड़े डील डोल की सूरत सफ़ेद रंगकी उसी तरह खड़ीहुई दिखाई देगी जैसे तुम खड़े हो, फिर ज्यों अभ्यास बढ़ाते जाओगे वो छायापुरुष नज़दीक आताजावेगा, यहांतक कि वो बातचीत

भी करने लगेगा, जिस रोज़ छायापुरुष का सर न दीखे धड़ ही धड़ नजर आवे समझना चाहिये कि आज से ६ छ महीने में मौत आनेवाली है, जिस रोज आधा जिस्म न दीखे स्त्री की मौत, और एक हाथ नजर न आने से भाई की मौत समझना चाहिये।

(१८) अपने इष्टका दर्शन करना चाहोतो छायापुरुष के त्रिकुटी स्थान में त्राटक लगाकर ध्यान करे दर्शन होजावेंगे।

(१९) जीवात्माओं या रूहों के बुलाने का तरीक़ा।

एकान्त स्थान में जहां दूसरे की आवाज़ न सुनाई दे गोल मेज़ इसक़दर लम्बी रखीजावे कि जिसकी चारों तरफ़ दस के करीब कुर्सियां बिछाई जासकें, उन कुर्सियों पर अभ्यासी लोग ऐसेबैठें जो शुद्ध अन्तः करण वाले हों आपस में रंज न रखतेहों, एक एक हाथ उनका मेजपर और दूसरा हाथ दूसरे के हाथ से मिलारहै, फ़िर सब मिलकर किसी एक उत्तम पुरुष या देवता का ध्यानकरें और परमात्मा की तरफ दिल लगावें, कुछ दिनो अभ्यास करते करते उनमें से एक (मिड़ियम) बनजावेगा, यानी बेहोश होजावेगा, तब उस के हाथ में पेनसिल देकर कागज सादा सामने रखदियाजावे और सवाल कियाजावे कि तुम कौनहो उस समय जो रूह उसमें आई होगी ज़वाब देगी फ़िर उस रूह के द्वारा जिन २ आत्माओं का बुलाना चाहतेहो बुलासक्तेहो, कभी २ कोई जीवात्मा लेक्चर देने लगती है और जिसलोक से जो आत्मा आती है वहांका हाल बयान करती है, उसकी ज़िन्दगी के वक़ के हालात

दरियाफ्त कियेजावें तो पतेवार वतलाती हैं, ज्यादा अभ्यास करने से प्रत्यक्ष भी होजाती है।

(२०) वहुत उमदा साधन अभ्यास करने के योग्य यह है कि भगवद्गीता की आज्ञानुसार दोनो भोओं के मध्य (त्रिकुटी) स्थानमें दृष्टि को आंखें वन्दकर के अन्दर की तरफ से ऊपर चढायाजावे और दोनों हाथ के अंगूठों से दोनो कान के छिद्र वन्द करलियेजावें. इस साधन के द्वारा अनाहद शब्द सुनाई देता है और ज्योतिरूप आत्मा का दर्शन प्राप्तहोता है अनाहद शब्द की आवाजें अभ्यास वढाने के साथ २ तरह २ की सुनाई देती हैं, वादल की गरज, संख, घडियाल, वन्सी आदि जिनसे साधन करने वाला मस्त होजाता है और श्रुति और शब्द के संयोग से आगे के मुकामात पर पहुंचकर परमानंद पाता है।

(२१) साधन नम्बर २० के द्वारा संसारी कामनाओं की वावत अगर कोई वात दरियाफ्त करनीहो तो उसका जवाव भी दो सूरतों से मिलता है एक यह कि अनाहद शब्दमेंसेही एक शब्द जिस को आकाश वाणी कहना-चाहिये, या मस्तक में चमकदार अक्षर नजर आजाते हैं जिनसे होनहार वात मालूम होजाती है, ऊपर जो साधन वयान कियेगये हैं वहुत संक्षेप से जाहिर कियेगये हैं, अव सेठजी कौनसा साधन सीखना चाहते हो? और पुत्री सुमति तुमने कोन साधन पसंदकिया? जो जो साधन सीखना चाहो कहदो; गुरु के वतलाये विना कोई साधन नहीं आसक्ता, गुरुविना चित्तका भरम नहीं जासक्ता, न गुरुकृपा विना परमानंद कोई पासक्ता है।

सेठ सेठानी इस परम लाभदायक महात्मा की वाणी को सुनकर चुप बैठेहुये इस विचार में डूबेहुये हैं कि कौनसा साधन इनसे से सीखना चाहिये।

अनुरक्ति देवी—श्रीमहाराज, आज्ञा होयतो दासी कुछ विनती करे।

महात्माजी—देवी तुम कौनहो? क्यों धारन करती मौनहो? इस स्थान में कैसे आई और क्या संदेसा लाई हो? कहो चुप न रहो।

अनुरक्ति—महाराज? यह दासी शरीर तो व्रजभूमि की है उपासी, श्रीव्रजराज महाराज की करती खवासी है, वोही नन्दनन्दन जगवंदन रासविलासी घट २ निवासी है अनुरक्ति इस शरीर का नाम और प्रेमियों का हृदय मेरा विश्राम धामहै, आपके दर्शनों से मनको मिलता आराम है।

महात्मा—(चौंककर) पहले कभी तुमने इस रूप से दर्शन नहीं दिया, फिर क्योंकर मुझसे संबन्ध प्रकट किया।

अनुरक्ति—महाराज, ज़राध्यान देकर अपने हृदय कमल में तो निहारिये, दासीको न बिसारिये।

(महात्मा आंखें बन्दकरके ध्यानकरते और पीछे फ़रमाते हैं)

महात्मा—ओहो बड़े अचरज की बात है, तुम्हारा तो प्रेमरूपी गातहै, तुम्हारे पूर्वजन्म का वृतान्त भी ज्ञात है। महारानी रत्नावली की कथा तो जगत में विख्यात है. कहो क्या फ़रमाती हो?

अनुरक्ति—महाराज? इनबिचारे जिज्ञासुओं को आपने किस बखेड़े में डालदिया, योगके साधनों के जाल-

में फँसाकर बेहाल करदिया, क्या महात्मा चरन्दासजी महाराज का यह वचन चित्तसे बिसारदिया।

॥ पद्य ॥

प्रेम बराबर योग ना, प्रेम बराबर ज्ञान।
प्रेम भक्तिबिन साधवा, सबही थोथा ध्यान॥
प्रेम लता जब लहरे, मन बिना योगही ठहरे।
कोई चतुर खिलारी खेले, जो प्रेमपियाला झेले॥

महात्मा—हां हां यह वचन सत्य है और यह ही सब ग्रन्थों और उपदेशों का तत्व है; परन्तु जो अधिकारी जिस पदार्थ का हो उसकी इच्छा के अनुसार उपदेश की सनातन रीत है; मूल सबका प्रेम और प्रीत है प्रीत से ही बढ़ती प्रतीत है, योग साधन करनेवाला भी हमारा मीत है, क्योंकि योग से मिलता परम ब्रह्म गुणातीत है।

अनुरक्ति—महाराज! आपनें आज्ञाकरी सो दासी ने सीसपर धरी परन्तु बड़े भारी योगी गुरु गोरखनाथजी और बाई कमाली की एक वार्ता मैंने श्रवण करी वो बहुत ही आनन्दसे भरी है कृपाकरके उसकोभी आप सुनकर अपनी सम्मति देवें।

महात्मा—अच्छा कहो।

अनुरक्ति—सुनिये महाराज, एक दिन परम योगी गुरु गोरखनाथजी महात्मा रयदासजी भक्त से मिलने गये उनको प्यास लगी तब रयदासजी से जल पीनेकी इच्छा प्रकटकी, रयदासजी चमड़े का काम करते थे और एक कटोती में जल भराहुआ पास रखा था उसमें चमड़े को डुबोते

जाते थे उसी कठोती में से एक कटोरी जलकी भरके रयदासजी ने गोरखनाथजी को देना चाहा, गोरखनाथजी ने उसजलको अशुद्ध जानकर पीने से इन्कार करदिया, उसी समय कमाली वहां खेलरही थी रयदासजी ने उसे बुलाकर कहा कि बेटी यह प्रेमरस पीजा, कमाली ने वो कटोरी रयदासजी से लेकर उसके जलको पान करलिया और खेलने चलीगई ।

जब कमाली स्यानीहुई तो मुलतान में ब्याहीगई, उसतरफ़ को गोरखनाथजी दिग्विजय करनेको देश देशांतर में घूमने लगे और अपने योगबल से, उन्होंने एक खप्पर में ऐसी सिद्धी रखदी कि चाहे हजारों मन पदार्थ उसमे डालाजावे वो खप्पर भरने न पावे ।

जिस देशमें गोरखनाथजी जाते और उनको कोई महात्मा समझकर भोजनकरने को बुलाता वो खप्पर सामने रखदियाकरते कि पहले इसको भरदो तब हम भोजन करेंगे, परन्तु न वो खप्पर किसी से भराजाता न यह भोजनपाते भूके चलेआतेथे, बड़े बड़े धनवान् सेठों और राजा महाराजों नें हजारों मन चावलभात वग़ैरा पकवाकर उसको भरना चाहा, किसीसे भी खप्पर न भरागया, घूमते २ गोरखनाथजी मुलतान में भी जापहुंचे और वहां भी सारे बड़े आदमियों ने चाहा कि गोरखनाथजी का खप्पर भर देवें, परन्तु किसी से न भरागया, यह चरचा कमाली ने भी सुनपाई, उसनें जिसरोज़ से महात्मा रयदासजी का बख्शा हुवा प्रेमका प्याला पियाथा उसके अन्तः करण में प्रेमरस

ऐसा भरगया कि कोई समय भगवंत के भजन स्मरण से खाली नहीं खोतीथी, हरघड़ी प्यारे जगत् रखवारे नंददुलारे की याद में रोती थी और जो कर्म उस के शरीर से होते सब भगवान् के अर्पण करके पलभर भी असावधान नहीं होती थी, ऐसे प्रेमीभक्तों के दिलमें जो संकल्प उठता है उस को परमात्मा फ़ौरन् पूरा करदेता है ।

कमाली ने जो प्रेम में कमाल को पहुंच चुकी थी अपने पति से कहा कि गुरु गोरखनाथजी को न्योता दे आओ कल वो यहांही भोजन पावें कमालीका खाविंद एक मामूली आदमी था डरा और बोला कि गोरखनाथजी को भोजन कराने की सामर्थ्य बड़े २ रईसों में नहीं सब हार मानचुके हैं हम गरीबों की ऐसी ताक़त कहां और कहां से सैंकड़ों हज़ारों मन सामान लावेंगे जो उनका खप्पर भराजावेगा ।

कमाली ने निवेदन किया कि एक पैसे क चावल लादो और कुछ नहीं चाहिये, स्त्री की हट प्रसिद्ध है पतिने कईवार समझाया और अड़ोसियों पड़ोसियोंने भी मना-किया तोभी न मानी, लाचार उसका पति योगीराज की सेवा में हाजिरहुवा और भोजन का निमन्त्रण दिया, गोरख नाथजी उसकी हैसियत देखकर हँसे और बहुत कुछ उसके बिनती अर्ज करने पर चलने को राज़ी होगये, कमाली को यह सुनकर कि योगीराज ने निमन्त्रण स्वीकार करलिया बहुत खुशीहुई, उसने निहायत पवित्रताई के साथ एक वर्तन में एक पैसेके चावल पकाये और रोटी दाल साग

वगैरा अलहदा रसोई में बनालिये ।

योगीराज जब मकान पर पहुंचे तो कमाली ने रसोई के दरवाजेपर चादर तानकर परदा करालिया उसके बाहर चौका लगाकर आसन बिछाकर आप अंदररही, बाहर आसनपर महाराज बिराजमान होगये, अन्दर से एक थालीमें दाल रोटीआदि परोसकर जब कमालीने परदेके बाहर थाली सरकाई तो योगीराज उसे देखकर क्रोधमें आकर कहने लगे कि थाली दूरकरो पहिले हमारा खप्पर भरो, यह फरमाकर उन्होंने परदे के पास खप्पर रखदिया, उस समय तमाशा देखने सैकड़ों आदमी जमा होगयेथे, उधर कमालीने परमात्मा का ध्यान करके चावल एक चमचे से निकाल कर खप्पर में डाले जो करीब एक पैसाभर वजन में होंगे फौरन् वो खप्पर जो हजारों मन चावलों से भी नहीं भरता था भरगया गोरखनाथजी इस चमत्कार को देखकर तड़पगये और सारा योगबलका घमंड उड़गया, कहने लगे कि कहीं बेटी कमाली तो परदेमें नहीं है, कमाली तुरन्त परदा दूर करके बोल उठी कि हां ताऊजी यह वोही आपकी पुत्री सेवामें हाजिर है; यह कहकर बाबाके चरणों में गिरगई, गोरखनाथजी ने उसे उठा कर सामने बैठाकर पूंछा कि बेटी सच बताओ यह कमाल तुझे कहांसे और किससे प्राप्तहुवा जिस ने हमारी उमरभर की कमाईहुई योगविद्या को जीतलिया ।

कमाली हाथजोड़कर बोली कि ताऊजी आप याद करो महात्मा रयदासजीने अपनी कठोती में से कटोरी भरके जो जल आपको दियाथा और आपने पियानहीं तब वो

जल उन्होंने इस दासीको पिलादिया था यह सब प्रताप उसी जल का है, यह बात सुनकर गोरखनाथजी तुरन्त उठखड़े हो और निहायत गर्मागर्मी से चलकर रयदासजी के पास पहुँचे. आपसमें नमस्कार प्रणाम होकर ज्योंही गोरखनाथजी आसन पर बैठे उन्हों ने कटोरी सामने से उठाकर कटोरी में से पानी भर भर कर पीना शुरू किया। रयदासजीने जब यह चेष्टा देखी तो गोरखनाथजी से योंकहा।

पियासा जबतो लिया नहीं, जिनपिया पियाको जानलिया।
अब गोरख भर भर क्या पीवे, वो पानी मुलतान गया॥

मतलब इस कथाका यह है कि केवल सच्चा प्रेम जो भगवान् में हो उस के द्वारा सब सिद्धियां बिना किसी साधन व अभ्यासके प्राप्त होजाती हैं, प्रेमीके आगे योगसे हासिल कीहुई सिद्धियां शरमाती हैं।

दासीने तो आपको याद दिलाई है और क्षमाकी आस पर धृष्टता दिखाई है, अब जो महाराज की इच्छा हो, उपदेश करें दासी का अपराध क्षमा करें।

महात्मा-देवी अनुरक्ति! अतुल है तुम्हारी भक्ति और वचनकी शक्ति मैं तो पहिलेही कहचुकाहूं कि-

जोग जप तपभी करो, ज्ञानी बनो मुक्तभी हो।
प्रेमबिन होताहै, दिल्दार का दीदार नहीं॥

परन्तु सुमतिने योग सीखनेकी इच्छा प्रकट कीथी इस कारण मैंने उसकी प्रक्रिया कही, अब तुम सब सत्संगी विचार करके कहो क्या इच्छा रखते हो।

सेठ—महाराज मैं तो निपट भोला और अनजान हूं और आपकी कृपालुता पर तन मनसे कुर्बानहूं, जिसमें मेरा हित और कल्याण हो वोही उपदेश सुनाकर दासको कृतार्थ करदीजिये देर न कीजिये।

सुमति—श्रीमहाराज! इस समय अनुरक्ति देवी जीने जो कुछ चर्चा आपसे की मुझे बहुतही प्यारीलगी, अब उन्हीसे दो दो बात मेरी होजाने दीजिये और आप हम दोनो की चर्चा वार्ता सुनकर अन्तमें निर्धार करदीजिये।

महात्मा—बहुत आनंदकी बात है, बातही करामात है तुम और अनुरक्ति देवी बातचीत करो, हम श्रवण करते हैं।

सुमति—देवीजी! यह शरीर सर्वथा अज्ञानी है आप से प्रश्नकरना भारी नादानी है, क्षमा कीजिये दासी की विनती सुनलीजिये।

दासी के मनमें यह सन्देह है कि मन सब प्राण-धारियों का बडाही हटीला और चंचल है, इसमें चालीस शेरोंकी बराबर बल है, बिना योग अभ्यास के कैसे काबूमें आसके हैं, इसकी चंचलताई और कठिनताई को कोन मिटासके है, बिना साधन के केवल प्रेम से क्योंकर वस में आसके हैं।

अनुरक्ति—सुनो प्यारी बहन, सत्यहै तुम्हारी कहन, मैं तुमको एक दृष्टान्त सुनातीहूं, और तुम्हारा सन्देह सहज में मिटातीहूं, चंचल मन की रुकावट जैसी प्रेम के द्वारा होती है और किसी साधन से नहीं होती, परमात्मा में प्रेम

का तो कहनाही क्या, संसारी तुच्छ जीवों में मन लगजाने से मन एकाग्र होता है यहांतक कि देहकी सुधबुध बिसारके मनुष्य अंधा बनजाता है और सोते जागते हरहालत में अपना मतलूब मनमें समाया रहता है ।

(इसमें एक स्त्री और नमाज़ी का दृष्टान्त)

एक सुन्दरी स्त्री अपने किसी इष्टमित्र से मिलने को जारहीथी, शामका वक़्तथा रास्ते में एक नमाज़ी मोलवीसाहब नमाज़ पढ़कर वज़ीफ़ा पढ़रहेथे, स्त्री अपने मित्रके प्रेममें ऐसी व्याकुल और अन्धी होरहीथी कि उस समय उसको न मार्ग का ज्ञानथा न अपनी देहका अनुसन्धान, केवल मित्र में उसका ध्यानथा रास्तेमें जो मोलवी साहब भजन कररहे थे उनके इस स्त्री की ठोकर बड़े ज़ोर से लगी और वो स्त्री उनको उल्हांगकर आगे चलदी न उस को ठोकर से चेतहुवा न मोलवीसाहब का लम्बा चौड़ा शरीर उसे दिखाई दिया, परन्तु मोलवी साहब क्रोध में आकर ईश्वर भजन को भूलगये और बहुत ऊंची आवाज़ से इस स्त्री को पुकार कर गालियां देनेलगे तब औरत को होश आया और ज़ाहिर हुवा कि ईश्वर भजन में बैठे हुये मोलवी को उल्हांग कर चली आई हूं औरत ने चेत करके वहीं खड़ी होकर यह दोहा पढ़ा ।

॥ दोहा ॥

नरराची सूझो नहीं, तैं कस लख्यो सुजान ।
पढ़ कुरान बौरो भयो, नाहिं लख्यो रहमान ॥

प्रयोजन यह है कि मैं एक इन्सान के प्रेम में ऐसी अन्धी थी कि तुम्हारा शरीर मुझे नज़र नहीं आया और तुम उस परमात्मा की याद में बैठे हुये इतना होश रखते हो कि मेरा शरीर तुमको नज़र आरहा है, अस्लमें तुम को परमात्मा से मोहब्बत नहीं, कुरान पढ़कर बावले होरहे हो, दिल तुम्हारा शरीर में लगा है परमेश्वरमें नहीं है, मोलवी साहब निहायत लज्जित होकर उस स्त्री से क्षमा चाहने लगे।

और देखो सेठानीजी, प्रेम की अकथ कहानी है, यह ही एक सिद्ध औखधी है जो दूर करदेती मनकी ग्लानी है।

मजनूं का इश्क़ लैलाके साथ मशहूर है जिसकी चरचा दूर दूर है फ़र्हाद ने शीरीं पर आशक़ होकर अपने प्राण तक देदिये, इश्क ने किस किस के मन बस में नहीं किये, मन के स्थिर होने का उपाय प्रेम से अधिक दूसरा नहीं है, जहां जिसका प्यारा है मन उस का वहीं है।

जब संसारी पदार्थों में प्रेम होजाने से मन एकाग्र होजाता है तो परब्रह्मपरमात्मा में मन लगजाने से कौन उपाय बाक़ी रहजाता है, संकल्प शक्ति के बढाने के जो उपाय महात्माजी ने बतलाये उनके साधन करने में कौन वृथा समय गमाये, परमात्मा में मन लगाने से प्रेमी को वो शक्ति बिना उपाय ही प्राप्त होजाती है, जो योगियों के हाथ बड़े २ कष्ट सहने पर भी नहीं आती।

मेरी तुच्छ बुद्धि में जो बात आई, वो तुमको कह सुनाई, अब महात्माजी जो कुछ आज्ञा करेंगे वोही हम सब शीस पर धरेंगे।

सुमति–(महात्माजी से) महाराज ! आपने हम दोनों की वार्ता सुनकर जोकुछ निश्चय कियाहो फ़रमादीजिये, उपदेश सुनाकर कृतार्थ कीजिये।

महात्मा–पुत्री सुमति ! विलक्षण है तेरी मतिकी गति, इस समय तुम दोनोंने जो बातचीत की मैंने अच्छी तरह सुनली, जोकुछ देवी अनुरक्ति ने बर्णन किया उस में प्रेम की महिमा को अच्छे तोर पर दिखादिया। प्रेमी भक्तों का बडाभारी प्रभाव है, उनके मनका सदासर्वदा परमात्मा में ही लगाव है, इस कारण से उन के मनोर्थ खुद सरकार पूर्ण करदेते हैं, अपने जनको तुरन्त अपनाय लेते हैं, उन के आगे किसी तपसी या योगी की करामात नहीं चलती, भगवत् की प्रतिज्ञा भलेही नष्ट होजावे, भक्त की प्रतिज्ञा कभी नहीं टलती है।

॥ दृष्टान्त ॥

देखो राजपूताना देश में जयपुर नाम की राजधानी है उस के निकट एक तीर्थ गालवाश्रम गलता नाम से प्रसिद्ध है, उस में कनफड़े योगी गोरख आम्नाय के रहा करते थे, जो नाथ के नाम से बोले जाते थे, उनका गुरु महन्त एक सिद्धपुरुष था वो स्थानपर अपने चेलों को छोड कर नगर में आया हुवा था, पीछे से एक महात्मा हरि भजन में अनुरक्त जगत से विरक्त भगवान् के प्यारे भक्त उस तीर्थ स्थान में आपहुंचे, और पर्वत म एक रमणीक जगह देखकर आसन जमाकर बिराजमान होगये, महन्त के चेलोंने उन हरिभक्त महात्मा से कहा कि इस जगह हमारे

गुरुजी योगसाधन कियाकरते हैं, दूसरे किसी को यहा बैठने की आज्ञा नहीं है, इसलिये आप किसी और जगह आज जाइये यहां आसन न लगाइये ।

महात्माजी जिनका नाम कृष्णदासजी था और दूध के सिवाय कुछ नहीं खाते थे, इस कारण से पयोहारीजी नाम से विख्यात थे, चुपचाप बैठेरहे, महन्तजी की बात का कुछ जवाब नहीं दिया भगवत् ध्यान में मगन होगये । तब कुछ चेलों ने संमति करके बहुत ज़ोर से ललकार कर कहा कि अरे साधू यहां से उठबैठ, इसपर भी आपने कुछ परवाह न की, चेलों ने शहर में पहुंचकर अपने गुरु जी से यह हाल कहा, तब महन्तजी ने क्रोध करके अपने योगवल से यह काम लिया कि एक बडीभारी पत्थर की शिला को संकल्प शक्ति से हुक्म दिया कि उस साधूपर गिरजावे शिला उनके हुक्मसे बड़े जोरशोर से चली, ज्योंही महात्मा कृष्णदासजी के सन्मुख पहुंची टुकड़े २ होकर सामने गिरगई ।

इस बातकी खबर पाकर महन्तजी खुद आश्रम में पहुंचे और योगसिद्धि के ज़ोर से सिंह का रूप धारण कर के महात्मा पर झपटे, महात्मा ने उस की तरफ़ देखकर हँसकर कहा कि गधेड़, साधुवों को क्यों सताता है खेत में जाकर चर, भजन में विघ्न न कर ।

बस क्या देर थी महात्माओं का वचन कब खाली जासक्ता है, महन्तजी गधेबनकर खेतमें चरने लगे और जो जो चेले उनके सामने मुक़ाबला करने को आये सबकी

पड़ती गतिहुई, मुद्रा सबकी उतारकर महात्माजी ने आसन के तले दबाली और भजनमें मगन होगये ।

अन्तमें जब जयपुर नरेशको इत्तलाहुई उन्हीं ने महात्मा कृष्णदासजी की सेवामें पहुंचकर प्रार्थनाकी, तब आपको और उनके चेलों को असली रूपमें महाराज के सामने बुलादिया, उसरोज से गलता आश्रममें नाथों का अधिकार हटकर वैष्णवों का निवास होगया ।

बेटी सुमती अब तुमको भगवत् भक्ति का प्रभाव जानपड़ा या अब भी कोई सन्देह मनमें रहगया होतो कहो ।

सुमति—महाराज आपकी कृपा से मुझे प्रेम की महिमा अच्छीतरह ज्ञातहुई, मेरे चित्त को शान्ति प्राप्त हुई परन्तु आपने अनुरक्ति देवीजी के प्रसंग में जो महारानी रत्नावलीजी का नाम लिया था वो क्याबात थी? कृपाकर के उनका वृतान्त सुनादीजिये ।

महात्मा—(अनुरक्ति देवी की तरफ़ इशारा करके) कहो देवीजी यह बात तुम्हारी मर्ज़ी बिना प्रकट करने की नहीं है तुम आज्ञादोतो कहीजावे ।

अनुरक्ति—महाराज! इसमें संकोच की क्याबात है, अनित्य देहों से जो कुछ भी बनपड़े उससे परे आत्मा विख्यात है, जीवआत्मा के न कोई तात है, न मात है, सब भगवत् की मायाही की करामात है ।

महात्मा—सब सावधान होकर सुनो ! और जोकथा मैं तुमको सुनाताहूं उस से हितकी बातें चुनो !!!

राजपूताना देश में एक आमेर नाम की राजधानी

थी इसके राजा बड़े प्रतापी मानसिंहजी सरनाम हुये हैं वो दो भाई थे, मानसिंहजी और माधोसिंहजी इनमें से माधोसिंहजी की महारानी रत्नावली बड़ी महात्मा हुई है, उनका यह हाल है कि जबसे वो व्याही आई पतिव्रतधर्म में परायण और बहुत ही सुशीला सति अति बुद्धिमति रही, उनसे प्रेमसिंह नामी राजकुमार का जन्म हुवा।

एक दिन उनकी दासी के मुख से नवलकिशोर मन मोहन कुंजबिहारी गिरधारी बनवारी, यह भगवत् के नाम महारानी ने सुनकर पूछा कि यह किसके नाम तू बड़ी प्रीत से लियाकरती है और किसकी पूजासेवा में लगीरहती है, सत्यबता? दासी ने हाथ जोड़कर कहा कि अन्नदाता आप को इनबातों से क्याकाम है, आप महारानी हैं, आपका काम भोगबिलास ऐशो आरामहै, महारानी ने दासीका कहना न माना हटकरके भेद जानना चाहा, तब दासीने बिनती करके बताया कि, यह नाम उस पूरनकाम सुखधाम घनश्याम श्रीकृष्ण परमात्माके हैं जो सारे संसारका आधार भक्तों की रक्षाके लिये जगतमें प्रगट होकर नाना अवतार धारण करता है। वोही जगत्का कर्तार समय २ पर भक्तों के दुखहरता है, जो जीव उसकी शरणमें जाता निर्भय होकर परमानंद पाता और जन्म मरनके संकट से छूटजाता है, मैं उसीका सुमरन करतीहूं किसी समय नहीं बिसरतीहूं।

यह सुनके महारानी को भगवान् में भक्ति हुई, और भगवत् परमात्मा की पूजासेवा में अनुरक्तिहुई, आखिर प्रेम बढते २ महारानी की यह हालत होगई कि दिनरात भगवत् आराधन भजन स्मरण में मगन रहने लगी नौबत

यहांतक पहुंचगई कि राजकुल की मरयाद तक छूटगई; जब साधू सन्त महात्माओं से रानी को पर्दा नहीं रहा तो राजमंत्रियों को निहायत नागवार हुवा ।

महाराजा माधोसिंहजी उस समय देहली में बादशाह के पास रहाकरते थे, उनको इसबात की इत्तला मंत्रीने दी, तो वो बहुत नाराज़ हुये और गुस्से में आकर एक रोज़ अपने नौजवान बहादुर कुँवर प्रेमसिंह से मुंडी का पुत्र कहबैठे ।

कुँवर प्रेमसिंह ने अपनी माता को इसबात की सूचना दी, माता ने तुरन्त सरके बाल मुंडवा डाले और बैरागन बनकर अपने बेटे को लिखदिया कि पुत्र तुम सचमुच मुंडी के होगये हो ।

यह ख़बर पाकर कुँवर प्रेमसिंह ने बडीभारी खुशी मनाई, राजा माधोसिंजी ने खुशी का सबब दरियाफ्त किया, तो मंत्री ने सबहाल कहसुनाया, इसपर उन को बड़ाभारी क्रोध आया और प्रेमसिंह के क़त्ल के इरादे से अपनी फ़ौज तैयार करके हथियार बांधकर चढगये, कुँवर प्रेमसिंह भी मुकाबले को तैयार होगया, परन्तु मंत्रियों ने दोनोंको समझा बुझाकर नोबत जंग की न पहुंचने दी महाराजा वापिस चलेगये ।

फिर महारानी रत्नावली के क़त्लका इरादा करके तलवार से क़त्ल ना मुनासिब जानकर यह तदबीर कीगई कि एक बड़े घातक सिंह को पींजरे से निकाल कर रानी के मकान में दाख़िल करदिया, प्रातः काल महारानी

भगवत् सेवामें मगन होरही थी, ज्योंही दासीने सिंहको आताहुआ देखा महारानी को चेतकराया, महारानी ने उसे देखकर ज़राभी भय न किया और कहनेलगी कि आहा? आज तो सरकार ने बड़ी कृपाकी कि नरसिंह रूपसे दर्शन दिये, सामने खड़ी होकर स्तुति करने लगी और चंदन का तिलक नरसिंहजी के मस्तक पर लगाकर फूलमाला पहिनाई और भोगके वास्ते लड्डू सामने रखदिये।

शेरने गरदन झुकाकर रानी की पूजा सब स्वीकार की, फिर महारानी ने आर्ती उतारी, उधर रानीने दंडवत् प्रणाम किया इधर सिंहने अपना सर महारानी के चर्णों में रखदिया यह सारा चरित्र मंत्री एक खिडकीसे देखरहा था और महाराजाभी प्रतीक्षा कररहे थे कि रानी के मरने की खबर आवे।

सिंहने महारानी के संकल्प के अनुसार नरसिंह रूप धारण करके उससे विदाहोकर मंत्री और उसके साथ के आदमियों को जो भगवत् विमुख और भक्तको सताने वहां आये थे चबाडाला और जंगल का रास्ता लिया।

जब राजाजी ने यह ख़बर पाईतो स्वयं महारानीके पास आये और क्षमा मांगकर साष्टांग दंडवत की, रानी भगवत् प्रेम में अचेत थी, दासी ने होशमें लाकर अर्जकी कि महाराज दंडवत् कररहे हैं, रानीने जवाब दिया कि यह दंडवत श्याम सुन्दर नवल किशोर को है, मैं तो उनकी दासी हूं, जैसे श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द मेरे स्वामी हैं, वैसे ही महाराजा इस शरीरके मालिक हैं। राजाने फ़रमाया कि मेरा

अपराध क्षमाकरो और राज पाट धन दौलत जो कुछ है सब आपका है चाहे जिसतरह काममें लाओ । महारानी हाथ जोडकर बोली कि स्वामी जो कुछहै सबप्रभुका है; मेरा या आपका कुछ नहीं है, यह हमारी भूल है कि इसको अपना मान रहे हैं, और अपराध कैसा यह शरीर ही आपका है, अपने शरीरको दंड देनेसे कोई अपराधी नहीं बनता. महाराज पधार गये और रानी रत्नावली का प्रेम भगवत् में दिन प्रति दिन बढतागया ।

एक दिन महाराजा मानसिंहजी और माधोसिंहजी दोनो एक नावमें सवार दरियाका सफ़र कररहे थे अचानक नावडूबने लगी, खेवटियाने कहाकि अब हमारे बसकी बात नहीं है, अपने इष्टका या किसी महात्मा का स्मरण करो वोही बचावेतो बचे, माधोसिंहजीने अपनी रानी के महात्मापनका हाल कहा तो दोनो भाई महारानीजी का ध्यान करके उनकी प्रार्थना करने लगे, भगवान् ने यह विचारकर के किमेरे भक्तके भक्तों की कामना पूरी न हुई तो मेरेभक्त की महिमा में फर्क आवेगा, फौरन सहायता की और जो नाव आधीसें ज्यादा जलमें डूबचुकी थी ऊपर आगई, दोनो भाइयों ने महारानी की सेवामें हाजिर होकर प्रणाम किया और अपने प्राण बचनेका हाल कहकर धन्यवाद दिया ।

देखो सुमति ? यह वोही रत्नावलीजी तुम्हारे सामने खडीहै, जिन्हो ने पंच महाभूतकी देह को त्यागकर दिव्य शरीर धारण किया है और सरकारकी निज सेवामें रहकर परम आनंद पारही हैं ।

अब कहो मनका सन्देह दूरहुवा और शान्ति आई या नहीं।

सुमती—श्रीमहाराज ? इस समय जोकुछ आपने उपदेश फरमाया दासीके मनको बहुतही भाया और तात्पर्य उस से यह पायाकि प्रेमसे यह चंचलमन सहजही वसमें होजाता है और साधनों के करने से बहुत कठिनाई से वसमें आताहै, योगी लोग अपने योग वलसे जो कर्तब दिखाते हैं वो भगवत् भक्तों से विना परिश्रम प्रगट होजाते हैं, परन्तु कृपा करके यह समझादीजिये कि कमाली और गोरखनाथजी के सम्वाद में देवी अनुरक्तिजीने जो वर्णन किया कि एकचमची चावलसे खप्पर भरगया, यह क्या बात थी? क्या उन चावलों में कोई करामात था? या कोई जादू मंत्र की घात थी? ।

दूसरे महात्मा कृष्णदासजी पर नाथों के महन्त की फैंकी हुई शिला अपने आप टूटगई और ज़बान से कहते ही महन्त गधा बनगया, यह अद्भुत चरित्र महात्मा की संकल्प शक्ति से हुवा या इस में कोई और कारण था? ।

तीसरे महारानी रत्नावली के सन्मुख आतेही घातक सिंह ने अपना हिंसा स्वभाव कैसे त्यागकिया? और उन के स्मरण करते ही डूबीहुई नाव क्योंकर ऊपर आगई? इन वातोंका उत्तर कृपाकर के दीजिये, दासी को कृतार्थ कीजिये।

महात्मा—इन तीनो प्रश्नों का उत्तर देताहूं सुनो !!!।

पहले कमाली के चावलों में कोई जादू टोना नहीं था

बात यहथी कि जो सामग्री भगवान के अर्पण करदीजाती है उस में ऐसी सिद्धी होजाती है कि जो वो प्रसाद पावे तृप्त होजावे और भगवत् के तृप्त होजाने से त्रिलोकी तृप्तहोजाती है, इस में महाभारत का एक दृष्टान्त सुनाते हैं।

॥ दृष्टान्त ॥

जिस समय पांचों पांडव अपनी स्त्री द्रौपदी समेत बनमें निवास करते थे राजा दुर्योधन ने उनके नष्ट कराने की यह तदवीर निकाली कि महर्षी दुर्वासाजी से प्रार्थना करके उनको ऐसे समयमें पांडवों के पास भेजा कि वे सब भोजन प्रसाद करचुके थे, द्रौपदी के पास एक पात्र ऐसा था कि उनमें सामग्री तैयार करके चाहे जितने आदमियों को भोजन करवादेवे, परन्तु दिन रात में एक बारही वो वर्तन काममें लाया जासक्ता था, यह बात दुर्योधन कोभी ज्ञात होगई थी।

राजा दुर्योधन ने विचार किया कि दुर्वासाजी बहुत से चेलों के साथ उस समय पांडवों के पास जाकर भोजन माँगें जबकि सारे पांडव और द्रौपदी भोजन पाचुके और वर्तन भी साफ़ करडालागया हो, दुर्वासाजी क्रोध की मूर्ति हैं भोजन न मिलने पर पांडवों को शाप देदेंगे।

तथाहि दुर्वासाजी मये अपने चेलों के ऐसे ही वक्त पांडवों के पास पहुंचे, राजा युधिष्ठिर ने बड़े आदरभाव से दुर्वासाजी को बिठलाया, बैठते ही दुर्वासाजी ने राजा से सवाल किया कि आज हम अपने चेलोंसहित भूके हैं, तुम्हारे यहां प्रसादपावेंगे, नदीपर स्नान ध्यान करके आते हैं

भोजन तैयार रखना, यह कहकर ऋषिजी चेलों को लेकर नदीकिनारे पहुंचे और स्नान ध्यान करने लगे।

इधर राजा युधिष्ठिरने द्रौपदी महारानी के पास आकर यह हाल ज़ाहिर किया तो द्रौपदी ने उदास होकर जवावदिया कि प्राणनाथ अभी थोड़ीही देरहुई है कि दासी ने भोजन पाकर वर्तन को साफ़ करडाला है अब दूसरीबार वर्तन काम नहीं देसक्ता न इतनी सामग्री मौजूद है बड़े कष्टकी बात है, दुर्वासामुनि भोजन न पाने से क्रोधमें आकर श्राप देदेंगे, तो हमारा नाश होजावेगा क्या किया-जावे, अब राजा और रानी बड़ीभारी चिंता में डूबगये, कोई तदवीर न सूझी।

श्रीकृष्ण महाराज अन्तर्यामी सदा अपने शर्णागत भक्तों की रक्षाकरते हैं, द्रौपदी उनकी परमभक्त थी उन्हीं को याद करनेलगी और प्रेममें मगन होकर यहपद गानेलगी।

॥ पद ॥ थेटरकी चालमें ॥

सुनियेनाथ २ मोरी है मतमोरी चाहूं कृपातोरी जोरूंहाथ।
दीनन के दुख भंजनहार, भक्तोंमें रखते हो तनमन से प्यार।
तुमसा त्रिलोकीमें ना कोई हितकारी, पूरनकलाधारीकरुणावतार।
वेदोंने सार पाया न पार हार हार, तुरत फुरत दुखको हरत सुखको करत जनको करिये प्रभु सनाथ। सुनिये नाथ०।
यह जन पापनकी है जिहाज, आपही को प्रभुहै मेरी लाज।
कोटिन जन्मों के मोरे कुकर्मों का, लेखाकिये ना बने मेरोकाज! हे महाराज मुझको नवाज आज आज हो।
आपत हरन आपकी शरण, आयो है यह जन मथुराचरन नावैमाथ॥ सुनियेनाथ०।

उधर द्रौपदी का यह पद गाकर आंसू बहाना था। इधर भक्तवत्सल शर्णागत रक्षा में अटल दीन हितकारी जनसुख कारी गिरिधारी बनवारी श्रीकृष्णचंद्र भगवान् करुणानिधान का आना था, उन के दर्शन करते ही ऐसा प्रतीत हुवा कि मुर्दा शरीरों में प्राण आगये, सबके सब पांडव उन के चर्णों में गिरे, महारानी द्रौपदी ने आप के चरणकमल प्रेम के आंसुवों से प्रक्षालन किये।

आसन पर बिराजकर आपने घबराहट का सबब दरियाफ्त किया, उस के उत्तर में द्रौपदी ने दुर्वासाजी के आने और भोजनपात्र के धोयेजाने का हाल कहसुनाया। महाराज ने आज्ञादी कि वो बर्तन सामने लाओ, हमको दिखलाओ, द्रौपदी दौड़कर भोजनपात्र सामने लाई उस में एकपत्ता सागका लगाहुवा नज़र पड़ा जो मांजने के समय लगा रहगया था।

आपने उसपत्ते को मुँह में रखलिया और संकल्प किया कि साराजगत् इस से तृप्तहोजावे ऐसाहीहुवा।

महाराजने हुक्मदिया कि धर्मराज आपखुद नदीपर जाकर दुर्वासाजी को बुलालाओ और कहोकि भोजन तैयार है जल्दी पधारकर कृपाकीजिये।

ज्योंहीं युधिष्ठिर महाराजने जाकर दुर्वासाजी से भोजन के वास्ते चलने को निवेदनकिया, दुर्वासाजी और उनके सबचेले ऐसे तृप्तहोचुके थे कि खट्टीड़कारें आनेलगीं और सब को यह मालूम हुवा कि अभी पेटभरके खूब भोजन पाचुके हैं, पेट में हवा और पानीतक का अवकाश नहींरहा।

दुर्वासाजी कहने लगे कि धर्मराज अबतो क्षमाकरो

किसी को ज़राभी भूक नहीं है, न मालूम क्या कारण हुवा कि हमसब तृप्तहोगये हैं।

नितान्त इस तदबीर से सबके प्राण बचगये दुर्वासाजी लज्जित हो चलेगये। नतीजा इस दृष्टान्त से यह निकला कि भगवान् को अर्पण करदेने से पदार्थ में ऐसी सामर्थ्य और बढवारी होजाती है कि एक सागके पत्ते से सारे संसार के जीव तृप्तहोगये। इसी तरह कमाली ने जो चावल गोरख-नाथजी के खप्पर में डाले थे वो भगवान् को अर्पन करके (भोगलगाकर) डाले थे उन से अग्निदेव तृप्तहोगये। गोरख-नाथजी ने अपने योगबल से अग्निशक्ति उस खप्पर में रखदी थी कि चाहे जितना अन्न डालेजाओ अग्नि उस को भस्म करजाती थी, जब भगवत् प्रसाद से अग्निदेव ही धापगये और प्रसादी अन्न में बढवारी होजाने का दृष्टान्त सुनाही दियागया, तो चावल के दानों को अग्नी भस्म न करसकी वो बढकर खप्पर को भरने के बाद भी उभरगये, यह पहले प्रश्न का उत्तर होचुका, अब दूसरे का सुनो!!!।

सुमति—सुनिये महाराज! अभी इस उत्तर में मेरे मन का एक और संदेह सुनलीजिये, उस का समाधान करके फिर दूसरे सवाल का जवाब दीजिये।

महात्मा—सुमति तेरे सन्देहों का कुछ ओर छोरभी है? यों कहांतक एक एक बात बताई जावेगी? तो भी तुझको जिज्ञासु समझकर आज्ञा दीजाती है, कह।

सुमति—महाराज! भोगलगाने की बात मेरी समझ में नहीं आई, मैं तो मन्दिरों में देखतीहूं कि पुजारी लोग अपने खाने की चीज़ें ठाकुरजी के सामने रख देते और

घन्टा बजाकर परदा करदेते हैं, थोड़ी देर के बाद फिर घन्टा बजाकर भोजन सामग्री उठालेते हैं, उसमें से एक तोला माशा या रत्तीभर भी कम नहीं होती, ज्योंकीत्यों धरी रहती है, फिर कैसे समझाजावे कि ठाकुरजी ने भोजन पालिया, यह तो पुजारियों की चतुराई और धूर्तताई है कि खाते आप और नाम ठाकुरजी का लगाते हैं।

दूसरे, महाराज, कमाली के पास क्या चौके के अंदर कोई मूरत ठाकुरजीकी थी जिनके भोग लगायागया? यह संदेह मेरा कृपाकर के दूर करदीजिये, और यहभी समझा दीजिये कि ठाकुरजी की मूरत पुजारी के उठाने से उठती और सुलाने से सोती है? अपने हाथों से अपने बदनकी मक्खी तक नहीं उड़ासकी तो वो भोजन क्योंकर करती होगी।

महात्मा—देखो यह बात हम पहिले अच्छी तरह खोलकर बताचुके हैं कि शरीरों से जो कुछ कर्म (काम) होते हैं और इन्द्रियां जो कुछ करती है सबका प्रधान कारण मन है और उसी में संकल्पशक्ति से बडे २ आश्चर्य के कार्य होते हैं, यह भी समझा दियागया है कि भावना भी मनही का काम है, जिसके द्वारा मनुष्य परमात्मा तक को प्राप्त करलेता है

जब कोई यज्ञ कियाजाता है तो अग्नि में जो सामग्री होमी जाती है, वो इन्द्रादि देवताओं को पहुंचती है, यद्यपि कोई देवता अपना भाग लेने को मूर्त्तिमान होकर नहीं आता केवल मनका संकल्पही देवताओं के अर्पण कीहुई वस्तु उनको पहुंचा देता है, परमेश्वर परमात्मा तो कहीं दूर नहीं

अति समीप है, जो लोग मनमें ऐसी भावना करते हैं कि यह पदार्थ परमात्मा को पहुंचे परमात्मा उस को ग्रहण करलेता है । गीता में भगवान ने साफ़ कह दिया है फूल पत्ता फल जलआदि वस्तु जो कोई भक्तिभाव से मेरी भेट करता है, मैं उसे बहुत खुशी के साथ ग्रहण करताहूं ।

वो हरजगह मौजूद और हर एक के मनकी बात को जानता है, भक्तलोग जब पूरे भाव और श्रद्धाके साथ कोई भोजन सामग्री सामने रखकर ध्यान करते हैं कि वो अखंड सच्चिदानंद पूरणब्रह्म मूर्तिमान होकर इस पदार्थको पा रहा है तो परमात्मा ज़रूर उसको ग्रहण करता है ।

ग्रहण करना परमात्मा का ऐसा न समझना चाहिये कि कोई हिस्सा उस पदार्थ में से कम होगया, प्रत्युत यों ख़याल करना चाहिये कि जैसे गुलाब या चमेली वगैरा सुगंधित फूलों की सुगन्ध का कुछ भाग वायुके द्वारा मनुष्य के दिमाग़ में पहुँचकर चित्तको प्रफुल्लित करदेता है और फूल ज्योंकात्यों बना रहता है न उस्का क़द छोटा होजाता है न उसमें की ख़ुशबू हवाके साथ निकल जाने से वो फूल ख़ुशबू से ख़ाली हो जाता है, इसी तरह जो पदार्थ भगवान के भोग में रक्खाजाता है वो ज़ाहिरी सूरत शकल में ज्यों का त्यों बना रहता है केवल उसका रस या स्वाद जो कुछ है वो गंधवत् भगवान् क़बूल फ़रमाते हैं ।

यदि भगवान की कोई मूरत मौजूद नहो और भोजन सामग्री सामने रख कर ध्यानमें भोग लगाया जावे तोभी परमात्मा उस को क़बूल करलेते हैं और अगर कोई मूरत सामने हो जिसमें सच्चे दिल से भावना कीगई हो तो उस

प्रतिमा के आगे भोजन रखकर ध्यानकरने से भी परमात्मा उसको ग्रहण करलेता है, क्योंकि ध्यान करना मन का काम है और मन यानी अन्तःकरण में ख़ासतौर पर उसी परमात्मा का जलवा मोजूद है, ऐसी हालत में कमाली के पास किसी मूर्ती की मोजूदी की ज़रूरत न थी उसने ध्यान में भोग लगाया और परमात्मा ने कुबूल करलिया तब ही उस महाप्रसाद में ऐसी ताक़त होगई थी ।

पुजारीलोग जो सच्चाभाव दिल में नहीं रखते और केवल अपना आहार समझकर थाली परोसकर नाममात्र घन्टा बजाकर बेगार की तरह पर भोग लगाने का दरजा भुगता देते हैं वो धोके की टट्टी और ठगविद्या समझना चाहिये, ऐसे लोग पूजा के अरी यानी दुश्मन हैं, और जो लोग सच्चे भाव से भगवत निमित्त ही रसोई बनाते और पूरे भाव से भोग लगाते हैं, चाहे प्रतिमा रूप के सामने चाहे मानसी ध्यान में ही भगवान् को यादकर के ऐसा करते हैं वो वास्तव में सच्चा भोग लगाते और भगवान् को भोजन कराते हैं, इसमें भी एक दृष्टान्त नामदवेजी का वर्णन करने के योग्य है. सुनो!!! ।

॥ दृष्टान्त ॥

नामदेवजी एक प्रसिद्ध भगवान् के भक्त जातिसे छीपी थे उनकी कथा इस तरह पर है कि उनके नाना एक मूर्ती का पूजन भक्तिभाव से कियाकरते थे और यह नामदेव उनका दोहिता ५ पांच ६ छहसाल की उम्रका बच्चा अपने नानाको ठाकुरजी की पूजा करतेहुये रोज़ देखा करता था और दिलमें ललचाया करता था कि कभी मुझे भी

नानाजी ऐसा औसर देवें कि मैंभी ठाकुर सेवाकरूं।

एक दिन नानाजी को कोई जरूरी काम बाहर किसी ग्राम में जानेका आगया, तब उन्हों ने नामदेवजी को बुलाकर कहा कि बेटे मैं गाऊं जाताहूं वापिसआऊं जबतक तुम ठाकुरजी की पूजा अच्छी तरह करते रहना, दूध भोगलगाकर महाप्रसाद करना; नामदेवजी चाहतेही थे निहायत खुश हुये हाथ जोड़कर बोले कि नानाजी मैं बड़े उत्साह से सेवा करूंगा ठाकुरजी को किसी बातका दुख नहीं दूंगा, आप तसल्ली रखैं।

नानाजी चलेगये और नामदेवजी बड़े प्रेम से सेवा करने लगे; ठाकुरजी को स्नान कराकर कपड़े पहिना कर चंदन चढाया धूपदी दीपक जलाया और भोजन सामग्री में दूध कटोरे में रखकर ऊपर तुलसीदल डालकर घन्टा बजाया और परदा छोडकर बाहिर आ बैठे एक घन्टे तक बाहिर बैठेहुये ध्यान करते रहे, पीछे उठकर ताली बजाकर परदे में जाकर घन्टा बजाने को थे कि दृष्टि उनकी कटोरे पर पड़ी तो सबका सब दूध ज्योंकात्यों रक्खा पाया अचरज हुवा कि ठाकुरजी ने कुछभी नहीं पाया क्या बात है? कदाचित् अभी पीना शुरू नहीं किया मैंने जल्दीकी ऐसा विचार कर फिर परदा छोड़कर बाहिर आ बैठे और घन्टेभर तक फिर ध्यान करतेरहे, जब परदे में जाकर देखा तो फिरभी दूधका कटोरा भरापाया, अब यह खयाल पैदाहुवा कि आज दूध उमदा नहीं बना, इस वजह से ठाकुरजी ने ग्रहण नहीं किया, बस वो कटोरा उठाकर आप भूके प्यासे बैठे रहे और पुनः स्वयं दूध औटाया उस में मिश्री मिलाई वो लेजाकर सामने रक्खा और फिर घन्टाभर प्रतीक्षा की जब

फिरभी दूध वैसाही रखापाया तो उदास होकर भूके प्यासे सोरहे और ख़यालकियाकि ठाकुरजी ने मुझको नया आदमी समझकर मेरे हाथसे दूध नहीं पिया, फिर ख़याल आया कि मैं पवित्र नथा इसवास्ते न पिया, इसी सोंच बिचारमें पड़रहे, दूसरे दिन नहाधोकर बहुत पवित्रतासे दूध अपने हाथ से गरम किया मिश्री भी खूब डाली, भोग रखा तब भी ठाकुरजी ने नहीं पिया, अबतो रोने लगे, बच्चोंको रोना ही आता है शामतक रोते रहे, दोदिन भूके प्यासे गुज़रगये, उधर तीसरा दिन नानाजी की वापिसी का था खयाल हुवा कि नानाजी देखेंगे कि इसके हाथसे ठाकुरजी ने दूध नहीं पिया तो फिर कभी सेवा मेरे सुपुर्द नहीं करेंगे, उधर गोविन्द देव परमात्मा की आंखें टमटमाने लगीं उन्हों ने देखा कि अब ठाकुर देख ने लगा दयाभी ज़रूर करेगा। जब फिरभी ठाकुरजी ने दूध नहीं पिया तब एक छुरी निकालकर अपने सीने में घूंमने को तैयार होगये।

कहने लगे कि जब आप मेरे हाथ से दूध नहीं पीते और कल नानाज़ी आकर देखेंगे तो मुझपर बहुत अप्रसन्न होंगे और फिर कभी आपकी पूजा सेवा मुझको नहीं देंगे, ऐसे जीने से तो मरनाही अच्छा है, ज्योंही छुरी अपने शरीर में मारना चाहते थे, गोविन्दकी मूर्त्ति ने तुरतही एक हाथ से नामदेवजी का हाथ पकडलिया और दूसरे हाथसे कटोरा दूधका पकडकर गटगट पीने लगे, जब नामदेवजी ने देखा कि यह तो साराही दूध पियेजाता है, ठाकुरजी का हाथ पकडलिया और कहने लगे कि पहिले तो रूठकर दोदिन

तक भूखों मारा और अब साराही पिये जातेहो, कुछ तो प्रसादी मेरे वास्ते भी छोडो, बस ठाकुरजी ने आधे के क़रीब दूध छोडदिया वो नामदेवजी ने पीलिया।

फिर दूसरे समय दूध सामने रखतेही ठाकुरजी ने पीलिया, जब नामदेवजी नाना नामदेवजीके ग्रामसे तीसरे दिन आये और नामदेवसे सेवा का हाल पूछा तो उन्होंने हँसकर जवाब दिया कि नानाजी ठाकुर बडा हटीला है, दोरोज़ तक मुझे बडा हैरान किया, जब मैं प्राण देनेको तयार हुवा तब दूध पिया है, अब आप सँभाल लो मैंने कोई तकलीफ़ नहीं दीहै, जैसा मोटा ताजा हट्टा कट्टा तुम छोडगये थे वैसाही सँभाल लीजिये, नानाजी को अचरज हुवा और नामदेवसे कहने लगे कि बेटा हमको तेरे कहने का भरोसा जब आवे जब हमको आंखसे दूध पीताहुवा दिखादे उसने कहा बहुत अच्छा।

अब नामदेव कटोरा दूधका लेकर पहुँचे, नानाजी को दूर बिठादिया ठाकुरजी ने आज फिर दूध नहीं पिया, तब आप छुरी निकालकर बोले क्यों कल की बात भूलगये, क्या मुझे नानाजी के सन्मुख झूंटा बनाना चाहते हो ? अभी अपने शरीर में छुरी मारता हूं नहीं तो पीजावो, ठाकुरजी ने बालहट समझकर दूध पीना आरम्भ करदिया, यह बात देखकर नाना अपने दोहिते प्यारे नामदेव के चरणों पर गिरगया और कहा कि बेटा तू धन्य है, हमारी सारी उम्र सेवा करते गुज़री कभी ऐसा नहीं हुवाथा तुझपर ठाकुरजी प्रसन्नहैं अबतूही सेवा कियाकर।

अब विचार करो कि यदि नामदेवजी का सा दृढ़-विश्वास और सच्चे दिलसे भावना होतो मूर्त्तिमेंही ठाकुरजी प्रकट होजाते हैं, क्या सर्वव्यापक परमात्मा से कोई जगह खाली है? और क्या वो व्यापक परमात्मा मूर्त्तिमें नहीं है ज़रूर है, सिर्फ दृढ विश्वास और सच्चे भावकी कमी है, वो पूरण ब्रह्म सच्चिदानन्द सर्वशक्तिमान परमेश्वर भक्तों की खातिर हरस्थानपर हरएक पदार्थ में चाहे जिसरूपमें प्रकट होजाता है, जितनी हमारे भावमें कमीहै उसके प्रकट होने में भी उतनीही देर होती है, जैसे अग्नी हरएक वस्तूमें मौजूद है, परन्तु पत्थरों में नज़र नहीं आती, जब चक़माक़ से पत्थरको टकराया जाता है प्रघट होजाती है, वैसेही शुद्ध भाव और सच्चा निश्चय चक़मक़ के स्थानमें समझो, जब प्रतिमा में भावनाकी चक़मक़ लगे तुरन्त परमात्मा प्रकट होजाता है।

और देखो मानसिक योगमें संकल्प शक्तिके साधन और फल पहिले ज़ाहिर किये गये, उससे सब्ज़ फूल फल वृक्षादि झटही सुश्क और सुश्क से हरे होजाते हैं तो भगवत् मूर्त्तीमें सच्चे सङ्कल्पका फल क्योंकर नहोगा, और भी एक दृष्टान्त तुमको सुनाया जाता है।

॥ दृष्टान्त ॥

एक मनुष्य हनुमानजी की पूजा कियाकरताथा, कई साल गुज़रगये उसकी कोई कामना पूरी नहीं हुई, दूसरे किसी आदमीने उसको सम्मति दी कि कलियुग में काली देवी प्रत्यक्ष फल देती है उसकी पूजा कियाकरो, तब उसने

हनुमानजी की मूरत को उसी मन्दिरमें एक ऊपरके ताकमें रखदिया और कालीकी मूरत लाकर उसकी पूजा करनेलगा।

जब पूजन काली देवी का आरम्भ किया और धूप देनेका औसर आया तो उसने सोचा कि यह धूपकी सुगंध कालीजी के अर्थ है, हनुमानजी की मूर्त्ति जो ऊपर ताक में रखी हुई है उसको यह गन्ध न पहुंचनी चाहिये, क्यों कि उसकी पूजा चिरकाल तक करी कोई फल उसने नहीं दिया, ऐसा विचारकर उसने हनुमानजी की मूरत की नाक में बहुत जोर से रुई ठूंसकर नाकके सूराख को पूरा २ बंद करदिया, इसलिये कि धूपकी सुगन्ध उसके अन्दर प्रविष्ट न होने पावै।

ऐसा करतेही हनुमानजी प्रसन्नहोगये और मूर्त्ती अपने आप उठकर बैठगई और पुजारी से कहने लगे कि बर मांग क्या चाहता है, पुजारी यहबात देखकर घबराया फिर हाथ जोड़कर बोला कि महाराज बर्षों आपकी सेवाकी आप कभी प्रत्यक्ष नहीं हुये, आज मैंने धृष्टता की तो आप प्रकट हुये इसका क्या कारण है। हनुमानजी बोले कि मूर्ख आजसे पहिले तू मुझे पत्थर की मूरत जानता था, कहीं पत्थर भी बोलता चालता और फल देसक्ता है, आज तूने मुझे चैतन्य समझकर मेरी नाक बन्द करदी, अब तेरी जो इच्छा हो पूरी करूंगा।

तात्पर्य इसका वुही है कि जो भगवत मूर्त्तियों में पत्थर लकड़ी धातुआदि की भावना रखते और उनको जड़ समझ ते हैं, उनके लिये वो जड़ही है, और जब पूरा विस्वास और सच्ची भावना मूर्त्ति में हो तो वो सब कुछ करसकती है।

जाके हृदय भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी इन तैसी ॥

अब कहो सुमति तुम्हारे पहिले प्रश्नका उत्तर हुवा या नहीं।

सुमति—महाराज! अब मेरे मन का सन्देह दूरहुवा दिलमें विश्वास भरपूर हुवा, अब कृपाकरके दूसरे प्रश्नका उत्तर दीजिये।

महात्मा—सुनो! तुमने यह सवाल कियाहै कि कृष्णदासजी महात्मा पर जो नाथों के महन्तने शिला फैंकी वो टुकड़े होकर गिरगई और महन्त सिंह बनकर आया वो कृष्णदासजी के कहने से गधा बनगया यह क्या बात थी!।

इसका उत्तर यह है कि जिन लोगोंने अपने तन बदन के सुख छोड़कर केवल परमात्मा के भजन स्मरणमें मन लगादिया है उनके वास्ते भगवान् हर जगह रक्षाकरने को मोजूद रहते हैं और भक्तकी बाणी को मिथ्या नहीं होने देते, गीताजी में भगवान् ने श्रीमुखसे आज्ञाकी है कि जो लोग अनन्यभावसे मेरे स्मरण और ध्यानमें लगेहुये मेरी उपासना करते हैं उनको योग और क्षेममें पहुंचाताहूं।

योग कहते हैं जो चीज प्राप्त नहीं है उसको प्राप्तकर-देना, और क्षेम कहते हैं प्राप्तपदार्थकी रक्षाकरना, प्रयोजन इसका यह है कि जो वस्तु भक्तों के पास न हो उसका उनको देना और जो उनके पास है उसकी रक्षा करना मेरा कामहै, और काम भी कैसा कि सर और पीठपर रखकर ज्यों सामग्री पहुंचाईजाती है उसीप्रकार पहुंचाताहूं, वो श्लोक यह है।

॥ श्लोक ॥

अनन्याश्चिन्तयन्तोमां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योग क्षेमं वहाम्यहम् ॥

॥ अर्थ ॥

इसमें क्रिया वहामिहै जिसका अर्थ सरके वल पहुंचाना है।

एक पण्डित लेखक वृत्ति से गुज़र किया करता था, पुस्तकों की नक़ल लिखकर उजरत लैलिया करता था।

किसी मनुष्यने भगवद्गीता की नक़ल उससे उजरत पर कराई थी जब ऊपर लिखेहुये श्लोककी नक़ल वो लिख ने लगा तो उसे यह विचार आया कि इस स्थान पर जो वहामि क्रिया पोथी में लिखी है भूलसे किसी लेखक ने लिखदी मालूम होतीहै यहां वहामि के स्थानमें ददामि सही नज़र आताहै, क्योंकि भगवान् अपने भक्तों को सब पदार्थ देते हैं सरपर रखकर नहीं पहुंचाते और ददामि का अर्थ है देता हूं इसलिये वहामि शब्दपर हर्ताल लगाकर श्लोकमें ददामि लिखदिया।

परन्तु इस विचारही विचारमें दुपहरी का समय होगया नित्यकृत्य यहथाकि पण्डितजी हररोज़ ९ नो १० दश बजे तक काम करके लिखाईके दाम वसूल करके उसका सौदा खरीदकर पण्डितानी के पास पहुंचादिया करतेथे तब रसोई तैयार हुवाकरती थी उसरोज़ पण्डितानीने ११ ग्यारह बजे तक प्रतीक्षा की पंडितजी नहीं आये वो बड़ीभारी चिन्ता कररही थी कि अचानक एक मनुष्य सरके उपर टोकरे में कच्चा पक्का सामान लियेहुये जापहुंचा, टोकरा

उतारकर सब सामान पंडितानी के सामने रखदिया, पंडितानी ने पूछा कहांसे लायाहै!। तो जवाब दिया कि पंडितजी को कोई जिजमान देगयाथा उन्होंने मेरे सरपर रखकर भिजवाया है, मुझे मजूरी तो पंडितसे मिलगई परंतु पंडितजी तुम्हारे बडे निर्दई हैं, उन्होंने मेरी छातीपर छुरी मारदी, देखो लोहू चमकरहाहै; पंडितानी ने देखा तो सच पाया पंडितजी पर उसे बहुत क्रोध आया कि बेचारे मजूर को घायल करदिया, मजूर चलागया, पंडितानीने चावल दाल तरकारी टोकरे में से लेलेकर खूब आनन्द से रसोई बनाई और मोहनभोग वगैरा पक्का सामान न्यारा थालियों में रखलिया।

उधर पंडितजीको बारह बजे पीछै याद आई कि इस श्लोक के शुद्ध करने के विचारमें न कहीं जाना हुवा न रसोईका सामान घर पहुंचाना हुवा पंडितानी क्रुद्ध होगीं, क्योंकि जिजमानभी नहीं मिला क्याकरें, इसी सोचविचार में पंडितानीसे डरते कांपते घरमें प्रविष्ट हुये और देखाकि पंडितानी तो बडे२ सामान सामने रखेहुये भोजन बनारही है अचरजके साथ पूछाकि यह सामग्री कहांसे आई, पंडितानी बोली कि आज तुमको क्या होगया, आपनेहीतो सब सामान भेजा और आपही भोले बनकर पूंछतेहो आज भंग पीहै! पण्डितजी ने कहा नहीं २ मैंने कोई नशा नहीं किया न मैंने यह सामान भेजा, सच कहो यह कहां से आया!।

फिर पण्डितानी क्रुद्ध होकर बोली कि मैं झूठ बोलती हूं और किसी को क्यापडी थी जो तुम्हारे बिना भेजे इतना

माल देजाता, और एक बात तो बताओ कि तुमने उस बेचारे मजूर के छुरी क्यों मारदी? अबतो पंडितजी के होश उड़गये कि यह क्या बात है! इसी चिन्ता में पंडितजी एकान्त स्थान में चलेगये और सोच विचार करते २ कुछ आंख झपकगई।

देखते क्याहैं कि श्यामसुन्दर कमल नयन पीताम्बर धारी माधोमुरारी श्रीनन्दनन्दन बनवारी मोर मुकट धारी सामने खड़े हैं।

पंडितजी हड़बड़ा के उठे और उस नटवर मनोहर परम सुन्दर सांवरी सूरत मोहनी मूरत के दर्शन करके चर्णों में गिरगये, नेत्रों से प्रेम के आंसू बहने लगे और धन्य धन्य जय २ शब्द कहने लगे।

सरकारने पंडितजी को उठाया और बडासनेह दिखलाया और श्रीमुख से फ़रमाया कि, वो टोकरा लानेवाला मजूर मैंहीहूं, चिन्ता नकरो धीरज धरो, तुमने जो मेरे बचनपर हर्ताल लगाई यह मेरी छाती मे छुरी की तरह लगी, मैं अपने भक्तों के वास्ते क्या नहीं करता मैं तो उनके पीछे २ लगा फिरता हूं, और सरपर क्या आंखों पर रखकर इनके लिये जो वो चाहैं पहुंचाता हूं।

॥ दोहा ॥

भक्तही मेरे आतमा, भक्तही मेरी देह। उनके चर्णन की मुझे, प्यारी लागे खेह
भक्त हमारे पगधरें, तहां धरूं मैं हाथ। लारे लागो ही फिरूं, कभू न छोड़ूं साथ
भक्तन को ऋणिया रहूं, यही हमारो मूल। चारमुक्त दइव्याजमें देनसकूं अनमूल
मेरे जन मोमें रहैं, मैं भक्तन के माहिं। मोमें और मम भक्त में, कछुभी अंतर नाहिं
वे मोकूं सुमरें भजें, धरूं मैं उनको ध्यान। तीनलोक कोऊ नहीं, प्रियभक्त समान

ऐसा सुनकर पण्डितजी को लज्जा आई और अपने अपराध की क्षमा चाही और गीताजी में ज्यों का त्यों वहाम्यि पद लिखदिया।

कृष्णदासजी महात्मा भगवान के प्रेमीभक्त थे, उनपर किसी ने वार किया खुद भगवान् ने निवृत्त करदिया, शिला क्या यदि स्वयं राजाइन्द्र अपने हाथसे किसी भक्तपर बज्र चलावे तो वो निकम्मा होकर गिरजावें, पत्थर की शिला तो वस्तुही क्या थी।

इसी प्रकार कृष्णदासजी के मुखसे जो शब्द निकल गया वो मिथ्या कैसे होसक्ता था। भगवान अपने वचन को चाहे निसफल करदेवें, परन्तु अपने भक्तों के वचन को मिथ्या नहीं होने देते।

देखो श्रीदशरथ नन्दन जग वन्दन जक्त आधार श्रीरघुवर राजकुमार ने वृक्षकी आड़में से बाली बलवान को मारा और अपने क्षत्रीधर्म और शूरवीर पने पर धब्बा लगाया कि एक बन्दरके सन्मुख युद्धकी सामर्थ्य न रखकर छिपके उसपर बाण चलाया, यह क्या बात थी! क्या उनमें ऐसी सामर्थ्य न थी कि शिवजीके बरदान को झूठा करदेते, अर्थात् महादेवजीने बाली को बरदान दिया था कि जो कोई तेरे सामने आकर तुझसे युद्ध करेगा, उसकी आधी शक्ति तेरे शरीर में आजावेगी। श्रीरघुनाथजी चाहते तो इस बरदान को तोड़ सक्ते थे, परन्तु उन्होंने यह बिचार किया कि मेरे बल और पराक्रम पर धब्बा लगे तो लगो मेरे क्षत्रिय धर्म में लोगों की दृष्टिमें न्यूनता दिखाई पड़े तो पड़ो परंतु मेरे परमभक्त शिवशङ्करकी बाणी मिथ्या न होसके।

पार होजाना क्या कठिन बात है । भक्तों के प्रताप से भव-सागर तरजाते हैं, छोटीसी नदीका पार होजाना क्या बडी बात है, असली बात यह है कि भक्तों का मन हरदम भगवत् में रहता है और भगवान् उनके मन में वास करते हैं। जब किसीने आपत् काल में भगवत् भक्तका स्मरण किया तो भक्त का मन उस स्मरण करने वाले की तरफ़ दौड़ता है और जहां भक्त का मन पहुंचा साथही भगवान् भी पहुंचे, बस इसी में उस का कल्याण होगया । मुसीबत का दूरकरना सिवाय परमात्मा के किससे होसक्ता है, इस प्रकार भक्तों के स्मरण से दुख दूर होजाता है ।

मुख्यबात यह है कि मनुष्य को चाहिये कि शरीर-से दुनिया के काम करतारहे और दिलको भगवत् में लगाये रक्खे ।

मन का भगवान् में लगाना ही योग है, वो प्रेम के विना किसी साधन से लगता नहीं, और बिना भगवत् कृपा के प्रेम हृदय में जगता नहीं ।

नवधा भक्ति के बाद प्रेमलक्षणा भक्ति प्राप्त होती है, फिर किसी साधन की आवश्यकता नहीं रहती ।

सुमति—श्रीमहाराज! आपने कृपा करके यहबात तो अच्छीतरह सिद्ध करदी कि प्रेम से जैसा मन एकाग्र होजा-ता है और किसी साधनसे नहीं होता और जो सिद्धियां योग साधनों के द्वारा बहुत कठिनताई से प्राप्त होती हैं, प्रेम के द्वारा सहजही प्राप्त होजाती हैं अब दासी को किसी साधन सीखने की इच्छा नहीं न मेरे स्वामी को किसी योग क्रिया के साधने की अपेक्षा रही, परन्तु प्रेम लक्षणा

भक्ति का विस्तार से वर्णन करें तो बड़ी कृपा हो, और उस के साथ ही प्रेमी भक्तों की वाणी श्रवण करावें तो अत्यन्त दया हो ।

महात्मा—पुत्री! तू जो बात सुनने की इच्छा करे है, वो प्राणियों के कल्याण के वास्ते बहुत ही उपकारी है, ऐसी चर्चामात्रसे ही अच्छी गति को पाता संसारी है, इसी लिये तेरे प्रश्नों का उत्तर देने में होती रुचि हमारी है।

प्रेमलक्षणा भक्ति और उस के साथ प्रेमी भक्त जनों की वाणी सुनाने में बहुत समय चाहिये । आजविलम्बहो-गया हम जाते हैं, कल फिर आकर तुम लोगों को प्रेम-लक्षणा भक्ति और महात्माओं की वाणी सुनाते हैं ।

इतना फ़रमाकर महात्मा पधारते हैं और अनुरक्ति देवी भी महात्माजी के साथही अन्तर्ध्यान होजाती है, सेठ सेठानी उसी स्थान में विश्राम करते हैं ।

॥ रात्रीका अद्भुत चरित्र ॥

तीसरे सत्सङ्ग के पश्चात् जब महात्माजी और अनुरक्ति दोनों विदाहोगये, यह दोनों स्त्री पुरुष सारेदिन महात्माजी के प्रेम और उपदेश की चर्चा करतेरहे और प्रेमका उत्साह दिलोंमें उमंगतारहा, सुमति सेठानी के साथ दो उसकी दासियांथीं; एकका नाम धृति, दूसरीका नाम स्फूर्ति था और सेठजी का नौकर विवेकीराम भी साथ था ।

उस पवित्र भूमिमें दो डेरे कपड़े के तानलिये गये थे, एकमें सेठसेठानी और दूसरेमें नोकर लोगों का डेरा था ।

जब रातके समय सब अपनी २ जगह पर आराम

करने लगे, आंखों में नींद आईहीथी, अचानक सुमति को एक भयानक शब्द सुनाई दिया, अरे चोवदार, होशियार, हमारे मुसाहबों को जल्द जाकर बुलाला, इसके बाद सुमति को आकाशमें एक दर्बारी शान नज़र आई, जिसमें एक सोनेकी जड़ाऊ कुर्सीपर कोई राजा बैठाहुवा है, और चोवदार ने ६ छ जनों को लाकर राजाके साम्ने खड़ाकिया है, राजाने उनको आदर देकर कुर्सियों पर विठलाया और यों फ़रमाया।

राजा—सुनो! बुद्धिमान् मंत्रियो!! आपको कुछ मालूम भी है? तीन दिनसे इस जगह कैसा अनर्थ होरहा है, एक बूढा साधू हमारी प्रजा सेठ सेठानी को बहिकाकर उनके दिलों से हमारी महिमा का भाव धोरहा और हमारी प्रभुताई खोरहा है।

कामदेव—श्री कलजुगराज आप हैं राजा महाराजों के सरताज, हम छेओं आपके सेवक सरके वल हाज़िर हैं करनेको सबकाज, हुक्महो तो जिसने आपकी अवज्ञाकरी उसको धूलमें मिलाई आज, फरमाईये वो साधू कोन है और आपने क्या समाचार पायेहैं, हमको ज्ञात नहीं इस बातकी आती है लाज।

कलिमहाराज—देखो! चुगलचंद अफ़सर महक्मे ख़बरने पर्चादिया है कि सेठजीवाराम और उसकी सेठानी को रस्ताचलतेहुये एक लंपट लबार गँवार साधूने रोकलिया है और उनको तीनदिनसे ऐसा पागल बनादिया है कि वो लोग हमसे विद्रोही होना चाहते हैं।

कामदेव—महाराजाधिराज! यह कोनसी चिन्ताकी

बात है आपको मेरा बल और पराक्रम अच्छीतरह ज्ञातहै, और महाशय क्रोधमल्ल १ और सेठ लोभीराम २ और मोहमल ३, मत्सरप्रसाद ५, यह पांचों मन्त्री आपके ऐसे प्रतापी बलवान् कि उनकी आज्ञा मानता जहान है, सिर्फ़ हुक्म मिलने की देर है, कार्जसिद्धिमें कब अबेर है।

राजा—अच्छा कामदेवजी पहिले मैं आपसेही मदद चाहताहूं, क्रोधमलजी वगैरा मुसाहबों को अपने पासरखा चाहताहूं, आप जाइये अपना कर्तब दिखाईये। बुड्ढे साधू का तो पतानहीं, सेठ सेठानीको जाकर अपने पंजेमें लाइये उनको जल्द अपना दास बनाइये।

क्रोधमल—श्रीमहाराज! कामदेवजी हम सबसे बड़े और इसकामके लिये कमर बांधेखड़े हैं, परन्तु उनको इस वार्ताकी सूचना नहीं है, हम पांचों इस विषयमें कुछ कर-भी चुके हैं वो निवेदन करते हैं, सो सुनकर कामदेवजी को उनलोगों के पास भेजिये।

राजा—अच्छा कहो।

क्रोधमल—महाराज! कलके दिन मैं और सेठ लोभीराम और मोहमल तीनों उन मुसाफ़िरों के यहां गये थे तौ सेठ सेठानी तक हमको दोस्त्रियों ने नहीं पहुंचने दिया, एक उनमें से धृति बडीबलवती है, उसने मुझको और लोभी-रामजी को बातोंहीबातों में ऐसा मातदिया कि दोनों लज्जित होकर चलेआये और दूसरी स्त्री जिसका नाम स्फूर्ति है उसने मोहमलजी को हरादिया, पीछे मदस्वरूप और मत्सर प्रसादभी जापहुंचे तो उनको विवेकीराम ने चुटकियों में उड़ादिया, अब कामदेवजीका देखिये क्योंकर बसचलेगा।

कामदेव—महाराज मैंने यह सब वृत्तान्त सुनलिया, स्त्रियों का वसमें करलेना मेरे वायें हाथका खेल है, मैं आपके प्रतापसे तीनों लोकके प्राणियोंपर विजयपाचुकाहूं, मुझे आज्ञा दीजिये परिणाम देखलीजिये।

राजा—बहुत अच्छा हमको पूराविश्वास है कि कामदेवजी आप विजय पाकर आवेंगे जाइये कार्यसिद्ध करके जल्द आइये। यह कुल वातें वडेध्यानसे सुमतिने उस स्वप्न अवस्थामें सुनी और वो उठकर वैठगई, देखाकि सेठजी गाढ़ी निद्रामें सोरहे हैं और नौकर तथा दासियां भी खर्राटे भररही हैं, अतः किसीको जगाना उचित नजानकर स्वयंभी सोगई।

आधीरात को कामदेव फूलोंका धनुष हाथमें लिये बाण चढाये हुये नोकरों के डेरेमें पहंचा और उसका नाम अनंग है इस हेतु से चित्रसा दीखपडा।

पहंचतेही यह चमत्कार दिखलाया कि दोनौ दासियों और विवेकीराम (सेठके नोकर) की छाती में वहुत ज़ोरसे तानकर बाणमारना आरम्भ किया जिसमें यह तीनों ज़ख्मी होकर सेठजी के डेरे में पहुंचकर पुकारने लगे, जिससे सेठ सेठानी जाग उठे।

अब तीनों कामदेव के बाणों से घायल होकर यों अर्ज़ करने लगे।

धृति—सेठानीजी मुझे आज्ञा दीजिये मेरा पति याद कररहा है और मेरी तवियत उससे मिलने को वहुत चाहती है अवमें यहां नहीं रहसकी।

स्फूर्ति—स्वामिनीजी मैं भी जाना चाहतीहूं मुझेभी

मेरे प्राणप्यारे पति की यादने बहुतही बेचैन करदिया, अब आपके पास ठहरना नहीं चाहती।

विवेकीराम—महाराज सेठजी मुझे स्वप्न में मेरी धर्मपत्नी रोती पुकारती विरह की आगमें जलती दिखाई दी है, मैं भी आज्ञा मांगता हूं, इसी समय अपने घर जाना चाहताहूं।

सुमति—अरे तुमलोगों को क्या होगया, क्या कोई नशा करने से तुम्हारी बुद्धि बिगड़गई या किसी ने तुमको बहकादिया, आधीरातके समय कहां जाना चाहते हो।

इतने में कामदेव उस डेरे में भी आपहुंचा और सेठजी की छाती में उसने बड़े ज़ोर से वाण मारा, तब सेठजी फ़रमानेलगे।

सेठ—प्राणप्यारी! ज़रा पास आकर सुनलो बात हमारी, यह बेचारी तुम्हारी दासियां अपने २ पति से मिलने को तड़परही हैं, उधर विवेकीराम की दशा अपनी स्त्री की याद में विगड़रही है और मेरा दिल भी इस स्थान से चलकर घर पहुँचकर भोगबिलास करने को अकुलारहा है, नया बाग़ीचा और महलात का ठाट मुझे याद आरहा है, जो आप के साथ बिहार करने को हज़ारों रुपये ख़र्च करके तैयार कराया है, तीन दिन से वृथा इस जङ्गल में हम सब खेद पारहे हैं, संसारी जीव तरह २ की मौजें उड़ारहे हैं, हम वृथा यहां पड़े कष्ट उठारहे हैं, प्यारी जल्द कूच की तैयारी करो घर चलकर मेरे मनोरथ पूरण करो।

सुमति—हैं हैं! प्राणनाथ!! आप भी इन लोगों की तरह मतवाले बनगये, ज्ञान बैराग्य की बातों को एक दम

भूलकर क्या चेष्टा करने लगे, ज़रा ठैरिये मुझे विचारने दीजिये, अचानक सबके सब क्यों मतवारे बने जाते हैं, ज्ञान वैराग्य को धूल में मिलाते हैं। इतना कहकर विचार करती है तो इसे स्वप्न की बात याद आती है, तब सावधान होकर यों वचन सुनाती है।

ओहो—अब मैंने जानलिया, कामदेव धूर्त ने इन सब को बहकादिया है, आगे कुछ शिक्षा की बात कहना चाहती थी कि साम्हने कामदेव आताहुवा और इसपर भी तीर चलाताहुवा दिखाई दिया तब ललकारकर कहती है।

सुमति—अरे तू कौन प्राणी है जो करता ऐसी नादानी है, क्यों अत्याचार करने की दिलमें ठानी है, हम निरपराधियों को क्यों सताता और निर्दई पने से तीर चलाता है, लोगों को धर्म से डिगाता है, इश्वर से निडर नज़र आता है।

कामदेव—अरी मूर्ख स्त्री तू अज्ञान से भरीहुई है, यद्यपि सूरत तेरी मनमोहनी मानो परी है, तू नहीं जानती देवने मुझ में क्या सामर्थ्य और शक्ति धरी है।

ब्रह्माजी और शङ्कर महादेव तकको मैंने कैसा बनाया और उन के ज्ञान वैराग्य को धूल में मिलाकर खूब ही नचाया, नारदजी से मुनि ब्रह्मचारी को राजकुमारी की चाहमें बन्दर बनाया, विश्वामित्र को मैनका के फ़न्द में फँसाया, सबको लूलू बनाछोड़ा, किसी से मुँह न मोड़ा, सब देवों का देव मेरा नाम है, तीनो लोक के प्राणधारियों के मन में रहकर सृष्टी पैदाकरना मेरा काम है, कलियुग

महाराज का प्रधान मन्त्री और उनका अत्यन्तप्यारा हूं, तुझ सुन्दरी को देखकर प्रेम से मतवारा हूं, तीन दिन से तुमलोगों ने क्या शोर मचारक्खा है, मेरे तीखे बाणों का मज़ा नहीं चक्खा है, अब तुम सब को चकनाचूर कियेदेता हूं और अपने बस में अभी करलेता हूं।

सुमति–अहा! आपतो बड़े घमण्डी नज़र आते हैं, परन्तु अपने मुँहु मियां मिट्ठू बनते नहीं लजाते आप सत्सङ्ग की महिमा न जानकर ऐसी बातें बनाते हैं, मैंने आज रात-को सोते समय आपका सारा बिचार जानलिया और आप बड़ेभारी शैतान हैं मैंने खूब पहिचानलिया, परन्तु सत्सङ्गियों पर आपका बस नहीं चलैगा, ऐसी गीदड़ भबकियों से कोई काम नहीं निकलेगा, हमलोग, सत् और धर्मकी शरन में धर्मसे अडिग हैं, तुम्हारे डिगाने से न डिगेंगे धर्मही हमारा रखवाला और परमात्मा धर्मकी सहायता करेंगे, तुम्हारे पञ्जे में हम शरणागतों को न आने देंगे।

कामदेव–अरी नादान! तू मुझको ऐसा वैसा न जान, मैं एक दम में करदेता हूं सारी दुनिया को परेशान, यदि तुझे रखनी है अपनीजान, तो बनजा मेरी मेहमान, नहीं तो झेल मेरे ज़हरीले बान।

सुमति–सचमच हैं आप बडे शैतान, किसी और को दिखलाइये अपने तीर कमान, सत और धर्म की बराबर कौन होसक्ता है बलवान, यदि हम हैं धर्म में सावधान, तो कोन लेसक्ता है हमारी जान, बस बन्द कीजिये अपनी ज़बान।

कामदेव—अरी मूर्ख नारी, तू हुई है क्यों मतवारी, ज़रा देख जोबन की बाग़बहारी, मुझे तेरी मीठी बातें लगती हैं बहुत प्यारी, और दया आती है तुझ को जानकर अबला नारी।

सुमति—नहीं २ दयामया का कुछ काम नहीं, मैं धर्म के बल और भरोसे पर सबला हूं अबला नाम नहीं, आपकी धमकियों का कुछ अञ्जाम नहीं, बतलाइये क्यों यहां आये हैं, कलियुग महाराज का क्या सन्देसा लाये हैं, बिना अपराध हमारे आदमियों पर क्यों तीर चलाये हैं।

कामदेव—अरी नादान तू क्यों प्राणदेने को तैयार है, मेरी बात को ध्यान से सुनकर खूब सोचविचारले, मैंने बड़े २ तपस्वियों का तप खण्डन कर डाला है, भजनानन्दियों के हाथ से गिरादी माला है, धर्म २ शब्द केवल पुकारमें में आता है, मेरे सामने कुछ भी नज़र नहीं आता है, तू युवती सुन्दरी औरत है, किसी ने फुसलाकर बिगाड़ी तेरी मति है, मेरा कहना न मानने में होने वाली तेरी दुर्गति है, कहां का जतमत और कैसा सत है, वैराग की बातें सुनकर अपने जोबन को वृथा खोना अयोग्य है, उस बूढ़े बैरागी ने तुझे भर्माया और तूने बड़ा धोकाखाया है, देख ज़रा मेरी सूरत मूरत को, भूलजा उस बूढ़े धूरत को। इतना कहकर कामदेव एक अति मनोहर रूप पुरुष की सूरत में सामने खड़ाहोता है।

सुमति—हां हांजी मैंने आप को अच्छी तरह जान-लिया और आपके कर्तब को पहिचान लिया, आप अनङ्ग हैं,

यह सब लोगों को ठगने के ढङ्ग हैं, मैं सती पतिवृताहूं, दूसरा पुरुष कैसाही सुन्दर मनोहर हो मुझे उससे कोई सरोकार नहीं, अपने पतिके सिवाय दूसरे से कभी प्यार नहीं, यह खूब सूर्ती और सुन्दरताई बनावटी है, ऐसा बन जाना आपको कठिन नहीं, विचार कीजिये शरीरके अन्दर हड्डी, मांस, रुधिर और मलमूत्र भरा है ऊपर चमड़ा रङ्ग रोगन करके चमकीला चटकीला बनाया हुवा है, इसको देखकर मूर्खलोग लुभाते हैं, ज्ञानी फन्दे में नहीं आते हैं, इस परभी यह शरीर छिन भंगुर और नाश्मान है, नाना- प्रकार के रोगों की खान है, ऐसे जिस्मपर मरता नादान है, जो शरीर को तुच्छ समझ कर अजर और अमर आत्मापर रखता ध्यान है वोही इन्सान है ।

॥ सवैया ॥

नारी शरीरपै रीझत है नर, छीजत है तन सुन्दर तेरो ।
भीतर तौ मलमूत्र भखोलखि, थूक खँकार को भार घनेरो ॥
कालवली बिकराल तके जिम, व्याल अचानक मूसहि घेरो ।
त्याग विषै विष जाग अरे, मथुरेशहरी भजचेत सवेरो ॥

कामदेव—(एक फूलोंका उत्तम बिमान प्रकट करके) अरी नादान! देख!! यह पुष्पक बिमान तेरेवास्ते लायाहूं, तेरेसाथ इसमें बैठ कर सैर करने को ललचायाहूं, इसमें बैठ कर राजा इन्द्र की अमरावती पुरी और नंदन बनकी सैर करने को मेरे साथ चल, मेरा कहना मान कदापि

थी मुझे अचानक सोते २ अपनी स्त्री याद आगई तब मैंने यहां से चलने की प्रार्थना की थी, अब मेरे मनमें शांति आगई जो आपकी और सेठानीजी की आज्ञा हो पालन करने को हाज़िर हूं।

धृति—स्वामिनी सेठानीजी! मुझसे भारी चूक हुई जो ऐसा आप से कहबैठी, न मालूम सोते २ क्या होगया था अब मैं नहीं चाहती कि सत्संग को छोड़कर घर जाऊं, कलभी पांच राक्षस आयेथे वो आपके डेरे में घुसना चाहतेथे, तब हम तीनों ने उनको बातों में हरादियां, आज न मालूम यह क्या अचम्बा हुवा कि मैं भी घबरागई, अब जो आपकी आज्ञाहो सो करने को हाज़िर हूं।

स्फूर्ति—सेठानीजी अन्नदाता! मेरी अर्ज़भी वोही है जो धृति ने की है।

सुमति—अब प्राणनाथ आपने सबका विचार सुनलिया फ़रमाइये आपकी क्या राय है।

सेठ—प्राणप्यारी! तुम धन्यहो, हम सबको इसी शैतान ने बहकादिया था, जिससे सत्संग छोड़कर भागने को मन ललचाया था, अब तुमने इसको खूबही सीधा करदिया, वो अपनासा मुंह लेकर चलदिया, तुम्हारी बातें सुनने से मेरे चित्त को पूरी शान्ति हुई, अब सत्संग छोड़कर घर चलना उचित नहीं है, परन्तु पूरा २ वृतान्त सुनादीजिये यह क्या लीलाथी।

सुमति—सुनिये ! स्वामी !! इनदिनों कलिजुग का राजहै, सत्संग से होता उसका अकाज है, उसीने इसदुष्ट कामदेव को भेजाथा और सत्संग छुड़ाने का बीड़ा उसने उठायाथा, कलजो पांच राक्षस आये थे वो क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सरथे, उनका प्रवेश तो धृती, स्फूर्त्ति और विवेकी सामने नहीं होनेदिया, परन्तु यह कामदेव बड़ा जबरदस्त शैतान था, इससे यह तीनों नोकर और आपभी हारमान चुकेथे, केवल महात्माजी के सत्संग और आपके चरणों का प्रताप था, जो ये आपकी दासी उसके जालमें न फँसी, उसने तो डराने लुभाने लालच दिखाने में कोई कमी नहीं की थी, अब यह बड़ाभारी लाभहुवा कि यह छेओं कलियुग राजा के मन्त्री फिर कभी अपने साम्हने नहीं आवेंगे और हमलोग बेखटके महात्माजी से सत्संग का लाभउठावेंगे ।

इस बातचीत के बाद सब अपनी अपनी जगह पर आराम करने चलेजाते हैं और बाकी रात आनन्द से विताते हैं ।

इति योग साधन, तीसरा सत्संग समाप्त ।

॥ चौथा सत्संग ॥

* प्रेम लक्षणा भक्तिका अङ्ग *

प्रभात के शान्त और सुहावने कालमें सेठ और सेठानी महात्माजी की राहपर आंखें जमाये उमङ्ग बढ़ाये बैठे हैं और महात्माजी प्रेमके रसमें माते रस बर्साते आनन्द मनाते यह पद (ग़ज़ल) गाते चले आते हैं।

॥ ग़ज़ल ॥

जिसने मनमोहन पियाको दिल दिया सबकुछ किया।
प्याला भगवत् प्रेमका जिसने पिया सबकुछ किया ॥ १ ॥
रोना दुनियाकी न कुछ चीज़ोंकी ख़ातिर है फ़िज़ूल।
यादमें भगवत् के रोना गरकिया सबकुछ किया ॥ २ ॥
खोजना उसको हज़ारों कोस नादानी है यह।
दिलके आईनेमें हरिको लखलिया सबकुछ किया ॥ ३ ॥
कौन कहता है हरी के रूप रंग कुछ भी नहीं।
जिसने उसका सब जगह दर्शनकिया सबकुछ किया ॥ ४ ॥
इश्क़में मथुरेश के दिल जिसका हरदम चूर है।
वो अमर होकर जिया पाया पिया सबकुछ किया ॥ ५ ॥

महात्माजी आपहुंचते हैं, सेठ सेठानी उनके चरणों में दंडवत् करके बड़े आदर से आसन देकर उनको विराजमान कराते और रातका अद्भुत चरित्र सुनाते हैं।

महात्मा—अहो सेठानी स्यानी तूहै बड़ी निष्ठावान ज्ञानी, धन्य है तुझको और तेरे मातापिताको कि कामदेव ने तुझसे हारमानी, तूने उसकी एक न मानी, उस दुष्टने

की बड़ी नादानी, जो तुझसे राड़ठानी, और आखिरमें उठाई परेशानी, अब मैं तुझको प्रेमलक्षणा भक्ति सुनाताहूं और बड़े बड़े महात्माओं की वाणी का रस चखाताहूं। (इतने में अनुरक्तिदेवी भी यह चीज गाती हुई आपहुंची)

॥ ग़ज़ल ॥

हमारा दिलबरहै ऐसा सुन्दर कि जिसका सानी कहीं न पाया।
छबीला नटवर मदनमनोहर, अदाने जिसकी हमें लुभाया १
त्रिभंगी झांकी अजब अदाकी, सजीली धज आन बान बांकी।
निहारी जिसने उसीके दिलमें, सनम ने डेरा तुरंत जमाया २
वो प्रेमका है अपार दरिया, है उसके मिलनेका प्रेमज़रिया।
वो प्रेमका प्रेमी है साँवरिया, उसीका है प्रेम जगमें छाया ३
जो उसको है दिलसे प्यारकरता, वो उसके बसमें हो संगरहता।
वो प्रेमियों के दुखों को हरता, है प्रेमके हाथही बिकाया ४
कृपाकी मूरत दयालु मथुरेश, प्रेमसे बख्शता है निजदेश।
है इसमें सन्देहका नहीं लेश, प्रेमियों नेही उसको पाया ५

(सुमति बड़े आदर से अनुरक्तिदेवी को प्रणाम करके आसन देती है)।

महात्मा—वाह २ अनुरक्तिजी, धन्यहै तुम्हारी प्रीति और भक्ति, जो चीज़ तुमने गाई बहुत ही मन को भाई, इस में प्रेम की महिमा खूबही दिखाई है, अब मैं प्रेम लक्षणा भक्ति वर्णन करता हूं ध्यान से सुनिये।

॥ प्रेम लक्षणा भक्ति ॥

इन्सान के दिल में जब पूरी मुहब्बत या इश्क़ उस महबूब हक़ीक़ी का पैदा होजाता है तो वो हरदम उसकी

यादमें मगन रहता है, न उस को दुनियाकी किसी भात की परवाह और भय न पर्लोक की कोई चिंता, लाज शरम सब दूरहोजाती है, इज्ज़त और बडाई की चाह नष्ट होजाती है, जिसतरह तेलकी धार बीचमें न टूटकर जारी रहै, उसी तरह भगवत् प्रेमकी अखंड धारा जारी और आंखों में हरवक्त प्रेमकी ख़ुमारी रहै, हर घड़ी पल उसके विरह में बिकल, शोकके मदमें चूर, उसी हज़ूर सरापानूर के प्रेम से भरपूर, दिलमें मोहब्बत का दरिया लहराता रहै, दीन व दुनियाका ख़याल जाता रहैं, उस की चरचा में समय विताता रहै ।

दूसरी कोई चर्चा दिलको न भावे, किसी भगवत् विमुख की संगत न सुहावे, घरवार की सुध नष्ट होजावे, देहकी सँभाल कैसी तनकी तरफ ध्यानही न आवै ।

कभी रोता कभी हँसता कभी प्यारे से मिलने को तरसता और बार २ हिम्मत की कमर कसता है, बदन के रूम रूम में प्रीतम प्यारा ही बसता है ।

प्रेमका दीपक रोशन और विरहकी आग दिल में जलती है, हाय २ की आवाज़ मुँहसे निकलती है ।

कंठमें गद २ वानी जिस्मपर परेशानी, उसकी हालत उसीने जानी, जिस के मनमें बसाहै दिलजानी, ऐसे प्रेमी को देखकर लज्जित होते हैं बडे बडे ज्ञानी ध्यानी, सुन्दर दासजी की है यह वानी ।

॥ सवैया ॥

प्रेम लग्यो परमेश्वर से, तब भूलगयो सगरो घरवारा ।
ज्यों उनमत्त फिरे जितहीतित, नेक रहीन शरीर सँभारा ॥

सांस उसास उठै लवरोम, चलैदृगनीर अखंडित धारा ।
सुन्दर कौन करै नवधाविध, छाक परो रस पी मतवारा ॥

प्रेमअधीनोछाकोडोलै,क्योंकोक्योंहीबानीबोलै ।
जैसे गोपी भूलीं देहा, तैसे चाहै जासों नेहा ॥
कबहू हँस उठ नृत्य करै, रोवन फिर लागै ।
कबहू गद गद कण्ठ, शब्द निकसै नहिं आगे ॥
कबहुक हृदय उमङ्ग, बहुत ऊँचे स्वर गावे ।
कबहु होय मुखमौन, गगन ऐसे रहजावे ॥
चित्त वित्त हरिसों लग्यो, सावधान कैसे रहै ।
यह प्रेमलक्षणा भक्तिहै, शिष्य सुनो सुंदरकहै ॥

इस सुन्दरदासजी के बचन को सुनकर सुमति चौंक उठती है और हाथजोड़कर महात्माजी से कहती है ।

सुमति—कहां कहां सुन्दरदासजी कहां?

महात्मा—बेटी तुझे क्या होगया, हमने तो केवल सुन्दरदासजी की बानी सुनाई है, उनकी काया यहां थोड़े ही आई है ।

सुमति—महाराज! इस बचनके अंतमें यह शब्द है, कि शिष्य सुनो सुन्दरकहै, सो दासी के मनमें महात्मा सुन्दरदासजी के दरशन की भारी उत्कंठा उत्पन्न भई है, कृपाकर के उनको इस सत्संग में शरीक करलीजिये और उनकी जबान से यह बचन सुनवादीजिये ।

महात्मा—अरी नादान, मैंहूं हैरान कि तू क्या करती है बयान, ज़रा ध्यान तौ दे कि जिनका शरीर चलगया वो कैसे मूर्तिमान होकर सामने आवेंगे और शरीर कहांसे लावेंगे

सुमति—महाराज! गरीबनवाज़!! जरा आप भी,

न्यायको काममें लाइये, दासी चरणरज को चुटकियों में न उड़ाइये, आपने कलके सत्सङ्ग में संकल्पशक्ति की क्या महिमा फ़रमाई थी और जीवात्माओं के परलोक में से बुलाने की विधि भी सुनाई थी और महारानी गांधारी की प्रार्थनापर उसके १०० सौ बेटों की आत्मायें प्रत्यक्ष बुलाकर वेदव्यासजी ने दिखलाई थीं, यह बात भी आपने फ़रमाई थी, इस कारण से सुन्दरदासजी महात्मा की जीवात्मा को आप अपने योगबल से बुलालीजिये, और और महात्माओं की बानी भी उन २ के मुखारविन्द से सुनवा दीजिये, आप सामर्थ्यवान् कृपानिधान हैं, संसारी जीवों को उपदेश देकर करते उनका कल्यान हैं।

महात्माजी अपने दिलमें सोच करनेलगे कि कैसी कठिनता आई, इस स्त्री ने तो मेरी योग सामर्थ्य और संकल्प-शक्तिकी परीक्षा लेनेको ऐसी बातबनाई कि न मैं निषेध करसक्ताहूं, न और किसी प्रकार से टल सक्ताहूं, अब तो बिना योगमाया के काम नहीं चलेगा, उसको बुलाकर मंडप रचना का काम लेता हूं और सब महात्माओं को आवाहन करता हूं, (इसके बाद प्रकट में फ़रमाते हैं)।

महात्मा—अच्छाबेटी! तेरी इच्छा के अनुसार सब प्रबन्ध करता हूं, अब तुमसब थोड़ीदेर कुछदूर जाकर बैठ-जाओ, बुलाऊं तब पास आना।

सबदूरजाते हैं, महात्माजी योगमाया को यादकरते हैं, वो प्रकट होती है और महात्माजी की आज्ञानुसार उसभूमि में मंडप रचना करती है, महात्माओं के बिराजने के लिये उत्तम २ सिंहासन रचदेती है, वो स्थान योगमाया

की रचना से बड़ा रमणीक होजाता है, महात्मा सबको बुलाते हैं, वो लोग ऐसे थोड़े समय में इताना ठाट देखकर आश्चर्य कर चुप बैठजाते हैं, और महात्माजी ध्यानकर अन्य महात्माओं को बुलाते हैं, महात्मा लोग आकाश मारग से विमानों में चलेआते हैं, उनके चेहरों की नूरानी और मनकी प्रसन्नता अद्भुत आनंद देनेवाली और सूरत मूरत उनकी दुनियादारों से निराली मन के हरनेवाली प्रेम से मतवाली है, दर्शनों से ही दुख के मिटानेवाली और बख्शती खुशहाली है, शान्ति और कृपा चेहरों से बरस रही है, दिलों में सब के मनमोहन प्रीतम की दृढ़ प्रीती बसरही है, और अनुराग की शान दरसरही है, देवताओं की तबियत ऐसी सुन्दरताई और निकाई को तरस रही है, उस समय अजीब मसती छाई हुई और हर तबियत उमगाई हुई है, मानो परमानन्द की निधि मूर्तिमान होकर सामने आई हुई है, क्यों न हो हर एक महात्मा को प्रेमकी संपत्ति पाई हुई है।

यह वो भगवत् के प्यारे हैं जिनके ध्यान ने हजारों संसारी जीव भवसागर से पार उतारे हैं, जो महात्मा सेठ सेठानी के उपदेशकथे अब वो और महात्माओं को आदर सत्कार से आसन देरहे हैं और गले मिल २ कर परस्पर आनन्द लेरहे हैं, सेठ सेठानी, अनुरक्तिदेवी, योगमाया यह चारों भी यथायोग्य महात्माओं का शिष्टाचार करते हैं, महात्मा लोग अपनी २ जगह सिंहासनोंपर बिराजते हैं।

महात्मा उपदेशक भी जिनका नाम सत्य संकल्प है एक सिंहासन पर बिराजमान होते हैं, उन के दहनी तरफ

एक सिंहासन पर योगमाया, दूसरी तरफ अनुरक्तिदेवी बिराजती है, सेठ सेठानी हाथजोड़े सामने खड़े हैं।

इन महात्माओं में सुन्दरदासजी भी मौजूद हैं, वो महात्मा सत्य संकल्पजी की प्रार्थना करने पर प्रेमलक्षणा भक्ति का लक्षण सुनाते हैं।

(प्रेमलग्यो परमेश्वर से तब भूलगयो सगरो घरबारा, वगैरा २)

(इस को सुनकर सुमति धन्यवाद देती और यों प्रश्न करती है)

सुमति—महात्माजी महाराज! आपने बड़ी भारी कृपा की जो प्रेमलक्षणा भक्ति बयान फरमाई, परन्तु दासी की समझमें यह बात न आई (सुन्दर कौनकरैनवधा विधि) कृपाकर के इस का अर्थ समझादीजिये दासीपर अनुग्रह कीजिये।

सुन्दरदासजी—प्रेमलक्षणा भक्ति तो हजारों लाखों में किसी बड़भागी को प्राप्त होती है, उससे पहले नवधा-भक्ति और है उसके लिये कहागया है कि जब प्रेमलक्षणा भक्ति प्राप्तहोजावे तब नवधा को कौनकरे।

सुमति—महाराज! कृपाकरके नवधाभक्ति भी दासी को सुनादीजिये।

सुन्दरदासजी—अच्छा सुनो! नवधाभक्ति के नाम यह हैं।

श्रवण १, कीर्तन २, स्मरण ३, चरणसेवा ४, अर्चन ५, वन्दन ६, दासभाव ७, सखाभाव ८, आत्मनिवेदन ९, अब इनका अर्थ समझो।

श्रवण—सुनने का नाम है, भगवान् के गुणोंको ध्यान लगाकर सुनना और इसमें राजा परीक्षित प्रधान समझे

जाते हैं, जिन्हों नें सातदिन पहले अपने मरने से एकान्त में गंगाकिनारे जाकर श्री शुकदेवजी महाराज की ज़बान से श्रीमद्भागवत सुनी और मुक्तिपाई, सब से पहिली सीढ़ी मोहब्बत पैदाहोने की यह ही है, क्योंकि जब किसी के अच्छेगुण सुनेजाते हैं, तब उस से मिलने की उत्कंठा पैदाहोती है, इस लिये भगवान के कृपालु, भक्तवत्सलता आदिगुणों के सुनने सेही उनमें प्रीत उत्पन्नहोगी।

कीर्तन—दूसरी भक्ति है, अर्थात् भगवान् के गुणों को कथा के तौरपर बयानकरना या गाकर सुनाना; इस में श्री शुकदेवजी महाराज ने सब से उच्चपद पाया है, जिन्हो ने सातरोज़ में इसी के द्वारा राजापरिक्षित को भवबंधन से छुड़ाया और मोक्षपद को पहुंचाया है।

स्मरण—तीसरी भक्ति है, अर्थात् परमात्मा की याद करना, उनका नाम जपना, नाम की महिमा सारे सन्तों ने गाई है, इसी के द्वारा बहुत से जीवों ने मुक्ति पाई है, इस में प्रहलादजी भक्त प्रधान गिनेजाते हैं, जिन्हों ने हज़ारों आपत्ति झेलकर भी भगवत् की याद को नहीं छोड़ा, परमात्मापर पूराभरोसा रखकर उसके स्मरण से मुंह न मोड़ा, जिसका यह फल हुवा कि भगवान् को सिंह की सूरत में खंबे से प्रकट होनापड़ा।

चरणसेवा—चौथी भक्ति है, जिसमें लक्ष्मीजी प्रधान हैं।

अर्चन—पांचवीं भक्ति है, अर्थात् पूजा सेवा करना, इस में राजा पृथु प्रधान गिनाजाता है।

बन्दना—छटी भक्ति है, अर्थात् भगवान् को प्रीति के साथ दंडवत् करना, इसमें अक्रूरजी प्रधान समझे गये हैं।

दासभाव—सातवीं भक्ति है, अपने को परमात्मा का दास समझकर उनके हुक्मों की तामील करना, इसमें श्री हनुमानजी को प्रतिष्ठा प्राप्त है।

सखाभाव—आठवीं भक्ति है, अर्थात् परमात्मा को अपना दोस्त समझकर उससे मोहब्बत करना, इसमें अर्जुन प्रधान समझेगये हैं।

आत्मनिवेदन—नवीं भक्ति है, अपने आपे को भगवान् की नज़र करदेना, जैसा कि राजाबलिने वावनरूप भगवान् के साथकिया।

सुमति—श्री महाराज! और तो सब प्रकार की भक्ति दासी की समझ में आगई, परन्तु तीसरे नम्बर पर जो स्मरण भक्ति आपने बतलाई और उस में नाम की महिमा अधिक जताई, इसमें कुछ सन्देह मनमें है, आज्ञा हो तो निवेदन करूं।

सुन्दरदासजी—हां हां कहो क्या सन्देह है।

सुमति—श्री महाराज! नामकी महिमा बहुत लोग पुकारते हैं, परन्तु यह नहीं विचारते कि किसी पदार्थ का नाम लेने से वो पदार्थ क्यों कर हाथ आसक्ता है, शकर २ कहने से मुँह मीठा नहीं होता, नीबूके नाम लेने से खट्टा रस प्राप्त नहीं होता, इसी तरह कलकत्ते में बैठेहुये किसी मनुष्य को बम्बई में बैठकर पुकाराजावे तो वो बम्बई जाकर नहीं मिलसक्ता, न उसकी आवाज इतनीदूर से

सुनसक्ता है, तो ईश्वर परमात्मा जो इंद्रियों और मन और बुद्धीसे भी परे है, वो केवल उसका नाम लेने से क्योंकर प्राप्त होसक्ता है।

दूसरे मैंने प्रायः माला हाथ में रखने वालों को महा-कपट की खान और दुराचारों में प्रधान देखा है, (रामनाम जपना परायामाल अपना)।

तीसरे राम २ कृष्ण २ कहनेवालों को प्रायः संध्या-वन्दनादि वैदिक कर्मों से विमुख देखा है, वे लोग वेदकी मर्याद को छोड़कर कैसे मुक्ति पासक्ते हैं, और केवल नामके बलसे क्योंकर स्वर्ग में जासक्ते हैं, मेरी समझमें तो ऐसे मनुष्य कभी धर्मात्मा नहीं कहासक्ते।

चौथे हाथमें माला और दिलमें दुनिया के झगड़े भरेहुये ऐसी माला फेरने का क्या असर होसक्ता है, जैसा किसी ने फ़ारसी भाषा में कहा है (बरज़ुवां तसबीहो दरदिल गावखर, ईंचुनीं तसबीह के दारद असर)।

पांचवें कई पुस्तकों में लिखा देखा है कि एक बार भगवान् का नामलेने से सारे रोग दूर होजाते हैं और सब तीर्थों और यज्ञों का फलप्राप्त होता है, यह बात सर्वथा झूट और गप्प मालूमहोती है, क्यों कि किसी मालाधारी का रोग मिटता नज़र नहीं आता, बड़े २ रोगोंका तो क्या कहना, थोड़ी सी माथे की पीड़ा एक बार क्या सौबार नाम लेनेसे भी नहीं जाती, न यज्ञों का फलमिलना समझमें आता है, इन बातों को कृपाकर के समझा दीजिये।

सुन्दरदासजी–जिस शरीर से यह प्रश्न हुवा है उसका क्या नाम है।

सुमति–महाराज दासी को सुमति कहते हैं।

सुन्दरदासजी–हैं, सुमति के ऐसी कुमति क्यों प्रकट हुई।

सुमति–महाराज स्त्री स्वभाव से।

सुन्दरदासजी–उत्तम बुद्धी चाहे स्त्री में हो या पुरुष में ऐसी कुतर्क उससे होना वड़े आश्चर्यकी वातहै, भगवत् नामकी महिमा त्रिलोकी में विख्यात है, इसमें कुतर्क करना अनुचित और सनातन धर्मपर वड़ीभारी घात है।

महात्मा सत्यसंकल्पजी–नहीं २ यह स्त्रीकी जात धर्मशिक्षा की पूरन अधिकारी है, इसको सनातन धर्मकी चर्चा वहुत प्यारी है, इसकी प्रकृति लोक उपकारी है, केवल पदार्थनिर्णय के अर्थ इसने शंका विस्तारी है, इस सत्संगति की मूलकारण यही नारी है।

कृपा करके आप इसके प्रश्नों का उत्तर देकर समाधान कर दीजिये, इसको धर्मसे विमुख न समझ लीजिये।

इसकी आग्रह पूर्वक प्रार्थना करने पर मैंने आप सन्तलोगों को परिश्रम दिया है, इन स्त्री पुरुषों ने वड़ी श्रद्धा और शुद्धभाव से यह सत्संग का यज्ञ आरंभ किया है।

इसका प्रयोजन प्रश्न करने से इतना ही है कि जिन-लोगों पर कलियुग का असर है वो दूरहोजावे, सत्य धर्म अमृत से जीवों का मनरूपी पात्र भरपूर हो जावे।

सुन्दरदासजी–(महात्मा सत्यसंकल्पजीको प्रणामकरके) श्रीमहाराज आप की आज्ञा त्रिलोकी में कोन नहीं मान सक्ता, आपके प्रभाव को कोनसा ज्ञानी मनुष्य नहीं पहिचानसक्ता।

आपने इस स्त्री की जब इतनी बड़ाई करदी तो इसके अधिकारी होने में कोई सन्देह नहीं रहा, मैंने जो कुछ आपके सनमुख इस स्त्रीके विषय में कहा वो मेरी समझमें न्यूनता थी, अब मैं इसके प्रश्नों का उत्तर देना आरंभ करताहूं, हरि चरणों को अपने हृदय के सिंहासन पर धरता और उन्ही को वारम्वार सुमरताहूं, अब मैं इस बडभागी स्त्री के प्रश्नों का उत्तर देताहूं।

॥ भगवत नामकी महिमापर कुतर्कों का जवाब ॥

यह बातकि किसी पदार्थ का नाम लेने से वो पदार्थ प्राप्त नहीं होता और खांड या नीबूका नामलेने से उनका रस या स्वाद नहीं मिलजाता, भगवत नामकी महिमा के विचार से कुछ संबन्ध नहीं रखती, क्यों कि जड़ पदार्थों में सुनने या बोलने की शक्ति ही नहीं है, चैतन्य का काम बोलना, सुनना, समझना है, तो चैतन्य के नामलेने से चैतन्य का पास आजाना होसक्ता है, जैसा कि किसी मनुष्य या पशुका नामलेने से या पुकारने से वो नज़दीक आसक्ता है, ज़ड़पदार्थ मिट्टी, पत्थर, वृक्ष, वग़ैरा में न सुनने की ताकत है न चलने फिरने की, तो खांड या नींबूका नामलेने से उनका प्राप्त होजाना क़ब बनसक्ता है, यह भी आज़माकर देखलो कि बीमार के सामने खट्टी मीठी चीज़ का नामलेने से इस्के मुंहमें पानीभर आता है, दुश्मन का नाम सुनकर क्रोध आजाता और दोस्तका नाम जवान पर आने से सुख प्राप्त होजाता है, परमात्मा चैतन्य रूपहै और कहीं दूर नहीं सबसे अधिक निकट यहांतक कि अपनी आत्माही है और

सारे संसारी जीव जो कुछ काम करते हैं उनका द्रष्टा (देखनेवाला) और साक्षी (गवाह) है तो ऐसे नज़दीक रहनेवाले और हमारे हरएक कर्म को देखने वाले परमात्मा का नामलेने से उसका प्राप्त होजाना क्योंकर असंभव होसक्ता है ।

दूर देशों में रहनेवाले मनुष्यों का एक दूसरे का नामलेने से न सुनना जो कहा वो भी ईश्वर परमात्मा के नामके बारे में कुछ संबन्ध नहीं रखता, क्योंकि वेद वेदान्त और सर्व आस्तिक पुरुषों ने यह सिद्धान्त मानरखा है कि जीवात्मा और परमात्मा में कोई दूरी नहीं है, चाहे जीवात्मा को परमात्मा का अंश मानाजावे, चाहे उन दोनो का एक होना कहाजावे ।

यह बात भी हरमज़हब वाले मानते हैं कि परमात्मा व्यापक और सब जगह मोजूद है, ऐसी सूरतमें भी कहीं बैठकर उसका नाम लियाजावे वो ज़रूर सुनता है ऐसा मानना पड़ेगा ।

दूसरी बातजो कहीगई कि जो माला रखनेवाले प्रायः कपटी और दुराचारी देखने में आते हैं, इसमें यह विचारना चाहिये कि यदि माला रखनेवाला आदमी केवल दुनिया के दिखलाने और लोगों को धोका देने के लिये माला हाथ में रखता है तो ज़रूर वो मक्कार और ठग है, इसमें नाम का क्या दोष नाम तो वो लेताही नहीं, और अगर वो भगवत् नाम सच्चे दिल से लेता है तो उसे कपटी दुराचारी नहीं समझना चाहिये ।

गीताजी में श्रीभगवान् ने साफ़ फ़रमाया है कि जो

आदमी आलादर्जे का दुराचारी होकर भी मुझ को हमेशा भजता है उसको साधूही मानना चाहिये, क्यों के उस्के प्रारब्ध कर्मों के अनुसार यदि उसकी प्रवृति दुराचार में हो भी गईहो तो भगवत् भजन के प्रभाव से बहुत जल्द वो धर्मात्मा होजायगा, और श्री मद्भागवत के एकादशस्कंधमें भी एसाही लिखा है, और गीतावचन के अनुसार ऐसा भजन करनेवाला जल्द ही शान्ति प्राप्त करलेता है, जैसे आग में जलादेने और पानी में गीलाकरदेने और हवा में सुखादेने की शक्ति है, वैसेही भगवत् नामों में पापों के नाश करदेने की सामर्थ्य है, पापों से मलीन बुद्धी ही मनुष्य को दुराचारों में प्रवृत्त करदेती है, जब भगवत् नाम के जप से पाप मिटकर बुद्धी शुद्ध होजावेगी तो दुराचार आदि उसके दोष सब दूर होजावेंगे।

तीसरी यह बात जो कहीगई कि वैदिक कर्म संध्यावन्दन आदि को भगवत् नाम लेनेवाले छोड़देते हैं, इसलिये वेद मर्याद के नष्ट करने का कारण नामका जप है, यह भी ठीक नही क्यों कि संध्यावन्दनादि वेद कर्मों का त्याग करके भगवत् नाम जपने की आज्ञा कहीं नहीं लिखी है, यह दोष यदि है तो लोगों की अज्ञानता इस्का कारण है, भगवत् नाम का इस में कोई दोष नहीं, इसलिये वैदिक मर्याद का छुडाने वाला भगवत् नाम नहीं होसक्ता, बल्के विचारकरने से ऐसा खयाल बिलकुल गलत साबित होता है, क्यों कि संध्यावन्दनादि कर्मों में भी प्रधान भगवत् का सुमर नही है, जिन मंत्रों का जप संध्या में कियाजाता है वो क्या है! भगवत् के अनेक नाम और सब उसके ध्यान

हैं, चाहो जिन शब्दों में उच्चारण करो प्रयोजन एकही है।

चौथे यह जो कहागया कि हाथमें ली माला और दिल दुनियाके झगड़ों में डाला, ऐसी माला से क्या होसक्ता है, हमभी इसको मानते हैं, परन्तु माला एकद्वार याद दिलाने का है, जो माला फेरने की आदत रक्खैगा दिल उसका चाहे कितनाही दुनिया के झगड़ों में फँसा रहे, मालापर द्रष्टि पड़ने से ज़रूर उसको याद भगवत नामकी आही जायगी और जब ज़बान से सो बार या हज़ार बार बेदिली के साथ नाम निकलेगा तो दो चार दफ़े तो ज़रूर उसका दिल नामकी तरफ़ आवेहीगा, इसलिये माला दिल और ज़बान दोनों से भगवत् नाम की तरफ़ तवज्जह दिलाने वाली चीज़ है और भक्तों को दिलोजान से अज़ीज़ है, माला क्या है भगवत स्मरण के लिये आला दर्जे का आला है।

जिसने सच्ची प्रीति नेहकी रीति से हाथमें ली माला, उसने सब दुखों और पापों को टाला, हुवा उसका बोलवाला।

पांचवीं तर्क यह की गई कि भगवत् नामसे रोग दुख निवृत्ति कहीं देखने में नहीं आये और यज्ञों का फल नामलेने से प्राप्तहोना बुद्धि के बाहिर है।

इसका जवाब यह है कि जितने नाम भगवान के चाहै किसी ज़बानमें हों सबमें बड़ाभारी असर है, जैसे किसी मनुष्य की दाढमें दर्द है और मांत्रिक ने एक दो शब्द एक पर्चे कागज़ पर लिखकर एकवृक्ष में उसपर्चे को रखकर उस पर लोहेकी क़ील ठोकदी, तब दाढका दर्द ज़ातारहा, इसी तरह

बिच्छूका, सांपका जहर कुछ मंत्रपढ़ने से उतरगया या किसी के आधेसर में आधासीसी का दर्द है और एक मनुष्य उसको तुरत दूरकरदेता है, इस प्रकार के सैंकडों अमल देखने में आते हैं, यह साबितकररहे हैं कि नाम में तासीर जरूर है, परन्तु जिनलोगों को बिश्वास नहीं उनके वास्ते नामों में कुछ तासीर नहीं, और जिनको दृढनिश्चय है उनके वास्ते प्रत्यक्ष चमत्कार मौजूद है, कहावत है कि एक मनुष्य कोढ की बीमारी से निहायत तंगथा, सैंकड़ों इलाज कराने से भी उस को आराम न हुवा, तब वो महात्मा कबीरजी की बहुत बड़ी महिमा सुनकर उनके दर्शनों को आया, उस समय कबीरजी अपने मकानपर न थे, उनका पुत्र कमाल मौजूदथा, रोगीनें अपना हाल कमाल कबीर के लाल को कह सुनाया, कमाल ने यह कमाल दिखाया कि रोगी का हाल सुनकर उससें कहा कि यदि तू तीनबार रामका नाम ले तो तेरा रोग जातारहे।

रोगीने पूरा भरोसा करके तीनबार रामका नामलिया, तुरन्त उस रोगी का रोग जातारहा, इतने में कबीर साहब भी मकानपर पहुंचे और कमालने यह हाल रोगी के रोग मिटजाने का बडे घमंड से ज़ाहिर किया, कबीर साहब ने उस हालको सुनकर अपने लड़के के मुखपर दो तमांचे मारकर कहा कि तू मेरे घर में रहने लायक पुत्र नहीं है, तूने भगवंत नामकी अप्रतिष्ठा करदी कि तीनबार नाम लिवाया, अरे एकबार नामलेने से करोड़ों जन्म के पाप ताप दूर होजाते हैं, तूने इस बातपर भरोसा नहीं किया,

नतीजा यह निकला कि जिस दर्जेका निश्चय और विश्वास होता है उतनाही फल मिलता है ।

महारानी द्रौपदी को पूरा विश्वास था कि जिस समय भगवान् को याद कियाजावे और दृढ निश्चय के साथ उनका नामलिया जावे शीघ्रही वो प्रकट होकर रक्षा करलेते हैं, तथाही जिस समय उस अवला को दुर्योधनराजा के हुक्म से दसहजार हाथियों का वल रखने वाला वीर दुःशासन युवा वलात्कार से खैंचकर सभामें ले आया और उसके बड़े बड़े वहादुर वलवान पांचोपति और भीष्मजी जैसे पराक्रमी वृद्धों के सामने नंगाकरने के लिये, उसकी साड़ी को खैंचने लगा तो इस अवला स्त्री को सिवाय इसके कोई उपाय नज़र न आया कि भगवान श्रीकृष्णचन्द्र महाराजा का स्मरणकरे, उसने सच्चेदिल से पुकारना शुरूकिया ।

॥ लावनी की तर्ज़में पद ॥

हे कृपासिन्धु करुणा निधान गिरधारी ।
ऐ दीनवन्धु माधौ मुकुन्द वनवारी ॥ हे कृपा० ॥
तुम नाथ ग़रीवनवाज़ कहेजाते हो । जन रक्षाको तैयार खड़े पाते हौ ॥ भक्तों के औगुण दृष्टिमें नहिं लाते हो । निजजन के गुण श्रीमुख से तुम गाते हो ॥ अव वेगिपधारो नाथ भीर है भारी । हे कृपासिन्धु करुणानिधान० ॥ १ ॥
जिहि अलख अगोचर निराकार श्रुतिगावे । सोई भक्तकाज पुनि २ तनधर प्रकटावे ॥ दे दुष्ट जननको दंड सो धर्मरखावे । तुम्हरी लीलाको भेद विरलही पावै ॥ सर्वज्ञ नरोत्तम पूर्ण कला अवतारी । हे कृपासिन्धु करुणानिधान० ॥ २ ॥

तुम राम रूपधर ना ना भक्त उबारे। भिलनी और व्याधसे अधम नींचहू तारे॥ करिकृपा गीधपक्षी के बहु दुखटारे। सुग्रीव विभीषण के सब काज सुधारे॥ पदरज से तारी नाथ अहल्या नारी। हे कृपासिन्धु करुणानिधान०॥३॥ अति आतुर गजकी टेर सुनतही धाये। तजिं गरुड़हि प्यादे आकर फन्द छुडाये॥ प्रहलाद भक्तके प्राण तुरन्त बचाये। नरसी नामादिक कारज सिद्ध कराये। अब काहे देर लगावत मेरी बारी। हे कृपासिन्धु करुणानिधान०॥४॥ कोई आप सिवाय नहीं दुख भंजन प्यारे। शरणागत रक्षा हेत मनुजतन धारे॥ नहीं बने नाथ या अवसर हिम्मतहारे। मथुरेश हँसैंगे लोग बिरदको टारे॥ प्रभु बेग पधारिये रखिये लाज हमारी। हे कृपासिन्धु करुणानिधान०॥५॥

बस नामलेने की देरथी उधर श्रीकृष्णभगवान् के द्वारकापुरी से हस्तनापुर में जो सैंकड़ों कोसपर था पहुंचने में देर न थी, आपने द्रौपदी बिचारी आफ़तकी मारी की सारीमें प्रवेश करके उसको इतना बढ़ाया कि दुःशासन खैंचते २ हारगया सारी सामर्थ्य खर्चकरदेने परभी, उस सारीका अन्त न आया, आखिर यह चमत्कार देखकर दुशासन घबराया और वोही क्या राजा दुर्योधन खुद अपने करतब पर लजाया।

॥ दोहा ॥

कहाकरै बैरी प्रबल, जो सहाय यदुबीर।
दशहजार गजबलघट्यो, घट्यो न दशगज चीर॥

सारी सभाके लोगों ने निहायत अचरज के साथ देखा और कहा कि।

॥ कबित ॥

पाय अनुशासन दुःशासनसकोपधायो, द्रुपदसुता को चीरगहे भीरभारी है । भीषम करण द्रोणा बैठे व्रतधारी तहां, कामनी की ओर कोऊ नैक ना निहारी हैं । सुनके पुकार धायो द्वारका से जदुराई, वाढत दुकूल खेंचे भुजबल हारी है । सारीवीच नारी है कि नारीवीच सारी है, कि सारीही की नारी है कि नारीही की सारी है ॥

बस ख्याल करने की वात है कि स्मरण में कैसी करामात है, तारकी खबर इतनी जल्दी नहीं पहुंचती, जैसी कि शुद्ध अन्तः करण से भगवत् नाम उच्चारण की बिजली दोड़कर भगवान् को चेत करादेती है, सबब इसका यह है कि परमात्मा हरेक प्राणी के अन्तः करण में अंतर्यामी रूपसे मौजूद है, और जो शरीर ईश्वर परमात्मा धर्मकी रक्षाके लिये धारण करता है, उसका अंश हर जीवात्मा में मौजूद रहने से हरएक जीवकी चेष्टा का वो साक्षी है।

उसके नामकी महिमा हरमतका मनुष्य आस्तिक स्वीकार करता है, क्यों कि नामके दो फल बडेभारी हैं, एक मन चंचल की चंचलताई दूरहोकर उसका एकाग्र होजाना, दूसरे अन्तसमय भगवत् नामका जबानपर आजाने से कल्याण का प्राप्त होना, इसमे दृष्टान्त सुनो ।

॥ दृष्टान्त ॥

एक मनुष्यने किसी मंत्रशास्त्री से एक भूतका मन्त्र सीखा, जिससे भूत बसमें आकर उसके हुकमकी तामील करता रहै, चालीस रोजतक उस मंत्र का जाप करने से भूत प्रत्यक्ष सामने आकर खड़ा होगया और बोला कि

क्या चाहते हो, उसने जवाबदिया कि मैं जिसकाम के वास्ते कहा करूं कियाकरो, भूतने कहा जो कुछ तुम कहोगे करूंगा, परन्तु शर्त यह है कि विना कामके मैं खाली नहीं रहुंगा, काम न वतलाओगे तो तुमको मारकर चलाजाऊंगा, उसने मंजूर करलिया ।

हुक्मदिया कि कलकत्ते जाकर अमुक वस्तु ले आओ भूत उसी समय ले आया, फिर बम्बई भेजा वहांसे भी काम करके जल्द वापिस आगया, इसी तरह जहां जहां उसको भेजा जाता वो तुरन्तही काम करलाता और सवाल करता कि काम बतलाओ ।

एकमहीने तक तो उसने भूतसे कामलिया फिर तंग आगया कहांतक काम वतलावे, हरदम भूत यही सवाल करता कि काम वतलाओ, इसी सोचमें उस मनुष्य का रुधिर शुश्क होगया, इसी अर्से में एक महात्मा आनिकले उनसे मान्त्रिकने यह हाल कहा कि अब मुझे कोई काम तो नज़र आता नहीं और भूत कहीं जाता नहीं, काम न वतलाऊं तो प्राणका भय है क्या करूं ।

महात्माने कहा कि मकान के चौकमें एक बांस गाड़दो और भूतसे कहो कि इसपर चढो उतरो यही काम है, उसने ऐसाही किया, अबतो भूतजी बाँसपर चढ़ते उतरते घवरागये, और अन्तमें उस काम वतलाने वाले की शर्तको तोड़कर चुपचाप आमिल के कावूमें रहने लगे ।

इसी तरह मन एक बड़ाभारी चंचल भूत है, हज़ारों कोस एकदममें चलाजाता और वापिस आजाता है, फिर किसी न किसी कामकी इच्छा कियाही करता है ।

जब सांसके वासपर भगवत् नाम के जपका काम जो चढ़ना उतरना समझो इसको सौंप दियाजावे, याने हर सांसपर भगवत् नाम लेनेका अभ्यास रहे, तो मनरूपी भूत थककर वसमें आजाता है, और मनका स्वभाव है कि इंद्रियों के साथ रहता है, जब रसना इंद्रि भगवत् नाम लेगी तो मनका अवश्य रसना के साथ रहना ही होगा, इसलिये महात्माओं ने कहा है।

॥ दोहा ॥

सास सांस पर हरिभजो, वृथा स्वांस मतखोय।
ना जाने किस स्वांसपर, अन्त समैया होय॥

देखो यह बात सबकी मानी हुई और गीताजी में भगवान् के मुखसे बखानी हुई है, कि अन्त समय जो प्राणीका भावहोता है उसीके अनुसार उसको फल मिलता है।

॥ श्लोक ॥

यंयं वापिस्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमे वैति कौन्तेय सदा तद्भाव भावितः॥

श्रीमद्भागवत में महात्मा जड़भरतजी का चरित्र लिखा है कि बड़ेज्ञानी ध्यानी होनेपर भी उनका मन एक हिरनी के बच्चे में मरते समय चलागया, इसीकारण से उनको एकजन्म हिरणका लेनापड़ा और भी एक कहावत है।

किसी महात्मा ने अपने चेलों से यह आज्ञा की थी कि जिसदिन वो चोला छोडेंगे, नगाड़ा जो उसी स्थान में रखाहुवा था अपने आप वजने लगेगा, जबतक नगाड़ा न बजे हमारे शरीर का मृतक संस्कार न करना।

एकदिन महात्माजी के प्राण निकलगये और चेलों ने देखा कि शरीर में जान तो नहीं है, परन्तु नगाड़ा नहीं वजा, इसलिये चेलों ने उनके शरीर को कपड़े से ढकदिया संस्कार नहीं किया, तीनरोज इसी तरह लाश को पड़े होगये, चेले हैरान थे कि क्या करें गुरुजी की आज्ञा कैसे भंग करें।

इसी अर्से में एक और महात्मा आपहुंचे, चेलों ने उनसे अपने गुरुकी आज्ञाका हाल कहा, तो महात्माने विचार दृष्टिसे देखा तो उनको ज्ञातहुवा कि जिसस्थान में मरते वक्त उस महात्मा का आसन था, वहुत समीप उसके एक वेरका वृक्ष नज़र के सामने था और वहुत उमदा पकेहुये पैवन्दीवेर लटके हुये दीखरहे थे, योगी महात्माने उस वृक्षमें से एक वेर कि जो वहुतही समीप लटक रहाथा तोड़ा तो उस में एक कीड़ा निकला, उसको ज्योंहीं जमीनपर पटका कीड़ा मरगया, उधर नगाड़ा अपने आप वडे ज़ोरसे वजने लगा, तव उस महात्मा के शरीर का उत्तर कर्म चेलों ने किया।

इससे सिद्धहोगया कि मरते वक्त उस महात्मा का मन उस पके वेर में चलागया, इसकारण से उसका प्राण शरीर में से निकलकर वेरमें कीड़ा वनगया।

और सुनो जिस समय श्रीरघुनन्दन महाराज ने वडे वलवान वाली वंदरको वृक्षकी आड़में होकर मारा और वालीका प्राण निकलने लगा तो उसने श्रीरघुनाथजी से विनय करके कहा कि महाराज आपने समदर्शी परमेश्वर होकर सुग्रीवसे प्यार और मुझसे वैरकिया यह वात उचित

न थी, इस्का जवाव उसको देकर श्रीमहाराज ने फ़रमाया कि वाली तू चाहे तौ तेरा शरीर अचल और अमरकरदूं, इसके जवाव में वाली ने कहा।

जन्म जन्म मुनि जतनकराहीं। अन्त राम कह आवत नाहीं॥

अर्थात् मुनिलोग अनेक जन्मों में हज़ारों जतन करते हैं कि अन्त समय में भगवत् नाम ज़वान से निकले परन्तु नहीं वनपड़ता, क्यों कि अन्त समय में भगवान का नाम उच्चारण होने से फिर संसार में नहीं आता, और मुझे एसा औसर कव और क्यों कर मिलसकेगा कि आप मूर्तिमान राम इससमे मेरे सामने खड़े हैं, इसलिये नाथ अव शरीर को रखना यह जीव नहीं चाहता। इसपर श्री रघुनाथजी महाराज ने उसको कृपादृष्टि से देखकर परमधाम वख्शादिया।

इसलिये भगवत् नामका अभ्यास हरमनुष्य को करना चाहिये, जिससे अन्तसमय जिह्वा और दिलसे नाम निकले, क्यों कि जिस वस्तु का अधिक अभ्यास मनुष्य करता है, वोही मरते समय मनमें आती है।

अव रही यहवात कि नामकी महिमा वहुत वढ़कर कहीगई है कि उससे सारे तीर्थों और यज्ञों और दान और तपका फल केवल एकवार कहने में प्राप्त होजाता है, यह भी असत्य नहीं है।

जिसके दिलमें नामकी महिमा जितनी समाई हुई है उसको उतना ही फ़ल प्राप्त होता है, जैसा कि कवीरजी और कमाल के दृष्टान्त में वयान होचुका है।

दूसरे शुभगति के जितने साधन वेदों और शास्त्रों ने

यज्ञ, तप, दानादिक बतलाये हैं उनका फल सबसे बढकर यह मिलता है कि स्वर्ग में जाकर सुखभोगें परन्तु जबतक उन शुभकर्म के फल भोग की अवधि नहीं आती उस कालतक उन कर्मों का फल सुखभोग प्राप्त होता है, जहां अवधि पूरी होगई फिर चौरासी के चक्करमें पड़ना और कर्म बंधन में जकड़ना मौजूद है।

और भगवत् नामसे वो फल सिद्ध होता है कि आवागमन से मुक्ति और भगवत् चरणों में भक्ति प्राप्त होजाती है जिसके आगे स्वर्ग के अनित्य सुखभोग की कुछ भी तिथि नहीं, इस कारण से जो कुछ भी महिमा और बड़ाई भगवत् नामकी कहीजावे कम है, प्रेम - पूर्वक भगवत् नाम जपने का बडाभारी महात्म्य है।

सुमति—महाराज! आपकी जय हो!! यह दासी आपके उपदेश से कृतार्थ होगई, नामके बारे में जो शंका दासी के चित्तमें थी दूरहोगई, अब कृपा करके प्रेमलक्षणा भक्तिका प्रसंग जो शेष रहगया सुनाइये, इस दासी की धृष्टता को चित्तमें न लाइये।

इतना कहकर सुमति महात्मा सुन्दरदासजी के चरणों में गिरकर दंडवत् करती है और सुन्दरदासजी आगे का उपदेश आरंभ करते हैं।

सुन्दरदासजी—सुमति! तू यथार्थ में सुमति ही है, तेरी धर्ममें रति और उत्तम गति है; इसमें सन्देह नहीं कि तू पूरण अनुरागवति है, अब प्रेमलक्षणा भक्ति का अवशिष्ट प्रकरण सुनाता हूं।

जो भगवत् प्रेमके दीवाने मस्ताने हैं उनकी हालत जो जानै सोही बखानै, देखो-! जैसे मछली को पानी से जुदा होतेही विकलता है ऐसेही प्रेमीको भगवान् की यादमें हरदम आकुलता है, दूधपीनेवाला बच्चा जैसे दूधके विना व्याकुल होजाता है, वैसे ही प्रेमी अपने प्यारे मनमोहन की यादमें आंसू बहाता है, जैसे रोगी को औषधि दर्दकी दवा मिले विना चैन नहीं आता है, वैसेही प्रेमी का दिल प्यारे के दर्शनों को ललचाता है, जैसे चातक पपैया स्वाँत की बूंदको तरसता है, वैसेही प्रेमी का दिल उसकी यादमें पानी होकर आंखों के रास्ते से हरदम बरसता है, जैसे चकोर को चन्द्रमा की चाह है, वैसे ही प्रेम के दीवानों की हरदम प्यारेकी तरफ़ निगाह है, जैसे सर्प चन्दन के लिये अकुलाता है, वैसे ही प्रेमी हरदम अपने सनम के मिलने को ललचाता है, जिस तरह निर्धन कङ्गाल धनकी चाहमें भटकता है, वैसे ही प्रेमी के दिलमें प्यारा खटकता और दिल उसी की तरफ़ लटकता है, जैसे कामिनी को कन्त प्रिय लगता है, प्रेमीका मन हरघड़ी प्यारे की चाह में उमगता है, और जिस तरह कामी के दिलमें कामिनी बस्ती है, वैसे प्रेमी को प्यारे की याद में मस्ती है, ऐसी हालत को प्रेमलक्षणा भक्ति कहते हैं ।

॥ मनहर छन्द ॥

नीरबिन मीनदुखी क्षीरबिन शिशु जैसे पीरकी औषध-
बिन कैसे रह्योजात है ।। चातक ज्यों स्वाँतबून्द चंन्द्रको
चकोर जैसे चंदन की चाह कर सर्प अकुलात है ।।

निर्धन ज्यों धनचाहे कामनी को कन्तचाहे ऐसी जाकी चाहमें नाकछुहु सुहात है । प्रेमको प्रवाह ऐसो प्रेम तहां नेम कैसो सुंदरकहत यह प्रेमही की बातहै ॥ १ ॥

इस वार्ता को सुनकर अनुरक्ति देवी प्रेम में मगन होकर आंसू बहाती और वडे जोशमें आकर यह चीज़ गाती है ।

॥ पद ॥

हरिरंगराती प्रेमकी माती घड़ीपल कलना पावत है ॥ टेक ॥
अदांये यारका यह मुर्गे दिल शिकार हुवा ।
नज़र का तीर कलेजे में वारपार हुवा ॥
चला वो कहके कहो कैसा आज वार हुवा ।
हुई यह चूक कि उस वे वफ़ासे प्यार हुवा ॥
अव काहे सुनाऊं मनपछताऊं जियरा अति घबरावत है ॥ १ ॥
वो बांकी झांकी मेरे नैनों में समाई है ।
सलोनी सांवरी छब प्यारी मनको भाई है ॥
सितम है यह कि मुसीवत भरी जुदाई है ।
यहां तलब है वहां सख्त वे वफ़ाई है ॥
मथुरा तिहारी बाट निहारत आसतैं प्राण रखावत है ॥ २ ॥

अनुरक्ति देविका यह पद सुनकर सारे समाजी सुध बुध से विसारे प्रेम में मतवारे प्यारे नंददुलाऐ की यादमें मस्त होजाते हैं और कबीर साहब उमंग से कुछ कहने कौ तैयार खड़े नज़र आते हैं जो यों फ़रमाते हैं ।

कबीरजी—सुनौ ! प्रेमीजनौ !! प्रेमका घर बहुत दूर है प्रेमी मरने से नही डरता यह बात मशहूर है जो जीतेजी मरते वोही पक्के प्रेमी हैं, सदा उनकी लौ परमात्मा में

लगीहुई और विरह से व्याकुल उनका जी है, लगन बुरी बलाय है इसकी आपत्ति किससे सहीजाय, वोही जाने जिसके कलेजे में इश्क का तीर पार होजाय ।

॥ दोहा ॥

जबलग मरने से डरे, तबलग प्रेमी नाहि ।
बड़ी दूर है प्रेम घर, समझ लेहु मनमांहि ॥ १ ॥
लौ लागी कल ना पड़े, आप बिसरजें देह ।
अमृत पीवे आत्मा, गुरु से जुड़े सनेह ॥ २ ॥
लागी लागी क्या करे, लागी बुरी बलाय ।
लागी सोही जानिये, वारपार होजाय ॥ ३ ॥

इन दोहों के बोलते बोलते महात्मा कबीरजी के दिल में विरहकी आग भड़क उठी और अति आतुर होकर रोनेलगे, फिर कुछ सावधान होकर कहने लगे ।

कबीर हँसना दूरकर, रोने से करचित्त ।
बिनरोये नहि पाइये, प्रेमपियारा मित्त ॥ ४ ॥
हँस हँस कंतन पाइया, जिनपाया तिनरोय ।
हंसी खुशी जो हरिमिलै, तौ कौन दुहागनहोय ॥ ५ ॥
सुखिया सब संसार है, खावे और सोवे ।
दुखिया दास कबीर है, जागे और रोवे ॥ ६ ॥

इतना कहकर महात्मा कबीरदासजी गहरे स्वांस ले ले कर फिर रोने लगते हैं और सुमति यह हालत उनकी देखकर हाथ जोड़ सामने अर्ज़ करती है ।

सुमति—श्रीमहाराज! दासी को प्रश्न करते आती है लाज और चुप चाप रहने में होता है अकाज़ ।

माहात्मा सत्यसंकल्पजी—पुत्री! जल्दी न कर इस प्रेमकी मस्ती में विघ्न न डाल, जो कुछ तुझे पूछना है महात्माजी की वाणी समाप्त होजाने पर कहना अपने दिल का हाल, (सुमती चुप होजाती है कबीरदासजी फिर फ़रमाते हैं)-

॥ दोहा ॥

पिय बिन जिय तरसत रहे, पल पल बिरह सताय।
रैन दिवस है कल नहीं, सिसक सिसक दम जाय ॥ १ ॥
निशि दिन दाजे बिरहनी, अन्त बिरह की लाय।
दासकबीरा क्यों बुझे, सतगुरु गये लगाय ॥ २ ॥
हिरदे प्रगट दौं लगी, धुंवा न प्रगट होय।
जाके लागे सो लखे, कै जिन लाई होय ॥ ३ ॥
देखत देखत दिन गया, निशिभी देखत जाय।
बिरहन पिया पावे नहीं, बेकल जिया घबराय ॥ ४ ॥
बिरह तेज तन में तपे, अंग सभी अकुलाय।
घट सूना जी पीव में, मौत देख फिरजाय ॥ ५ ॥
बिरह कमंडल करलिये, वैरागी दो नैन।
मांगे दरस मधूकरी, छके रहें दिन रैन ॥ ६ ॥
नयनों अन्दर आवतू, नैन झांप तोय लूं।
ना मैं देखूं और कूं, ना तोये देखन दूं ॥ ७ ॥
कबीर सुन्दरि यों कहे, मिलियो कन्त सुजान।
बेग मिलो तुम आयके, नातो तज दूं प्रान ॥ ८ ॥
कै बिरहन को मौत दे, कै आपा दिखलाय।
आठ पहर का दाजना, मोसे सहा न जाय ॥ ९ ॥
सो दिन कैसा होयगा, पीव गहेंगे बांह।

अपना कर बैठावहिं, चरण कमल के मांह ॥ १० ॥
अबके जो सांई मिलै, सब दुख भाषों रोये ।
चरणों ऊपर सीसदे, कहूं जो कहना होये ॥ ११ ॥
जो जन प्रेमी राम के, सदा मगन मन माहिं ।
ज्यों दर्पन की सुन्दरी, किनहूं पकड़ी नाहिं ॥ १२ ॥

॥ चौपाई ॥

कंचन सों पाइये नहीं तोल । मनदे राम लिया है मोल ॥
अबमोयरामअपना करजाना । सहजस्वभाय मेरामन माना ॥
कहे कबीर चंचल मत त्यागी । केवल राम भक्त निजभागी ॥

अगन न दहै पवन नहीं मगने, तसकर नेरे न आवे ।
राम प्रेम धन कर संचोती, सोधन कितहु न जावे ॥
मेराधन माधौ गोविन्द, धरनीधर यह ही सारधन कहिये ।
जो सुख प्रभुगोविन्द की सेवा, सो सुख राज न लहिये ॥
इस धन कारण शिव सनकादिक, खोजत भये उदासी ।
मन मुकन्द जिव्हा नारायण, पडे न जमकी फांसी ॥
कहे कबीर मदन के माते, हृदय देख विचारी ।
तुम घर कोट अश्व हस्ती, मम घर एक मुरारी ॥

यह जोशीली प्रेम भरी वाणी फ़रमाकर महात्मा कबीरदासजी थोड़ी देरतक समाधी अवस्था में बिराजते और बादको चेत करके सुमति सेठानी की तरफ इशारा करते हैं कि क्या पूछना चाहती है, तब सुमति अर्ज़करती है ।

सुमति—धन्य है धन्य है मेरा भाग !!! प्रारब्ध मेरी उठी जाग, आज आपका दर्शन इस अधम शरीर ने पाया सत्संग का फ़ल हाथ आया, अब दासी अपनी ढिठाई की

क्षमा मांगकर कुछ अर्ज़करती है, अपना सीस महात्माजी के चरणों पर धरती है।

पहला सन्देह तो दासी के मन में यह है कि आपने जो यह आज्ञाकरी कि 'जबलग मरने से डरे, तबलग प्रेमी नांहि' यह क्या बात है, कोई आदमी किसी से प्रेमकरता है तो अपनी सहायता और रक्षा के लिये करता है, न कि मरने के वास्ते, परमात्मा की भक्ति और प्रीति भी इसीलिये कीजाती है कि वो हमारी सहायता और रक्षा करके बन्धन छुडाकर मुक्ति दे और पिछले सत्संगों में मैंने यह उपदेश भी सुना है कि भगवान् से जो कोई प्रेम करता है भगवान् हरदम उसके साथ रहकर रक्षा करते हैं, तो फिर प्रेम में मरने का क्या प्रसंग।

दूसरे आपने आज्ञा की कि 'कबीर हंसना दूरकर, रोने से कर चित्त' और आपने करभी दिखाया, सो इस में भी दासी को सन्देह है कि रोने से क्या लाभ होता है, हंसी खुशी रहने से क्यों परमात्मा नहीं मिलता, यदि रोने से ही भगवान् मिलजाय तो यह तो बहुत सहज उपाय है अपने किसी प्रियइष्ट की याद करके घन्टों रोना बनसक्ता है।

अतिरिक्त इसके परमात्मा तो परमानन्द रूप और सुख का भन्डार है उस्के ध्यान में आनन्द ही होना चाहिये, रोने धोने का उसमें क्या काम।

तीसरे आपने माधौ, गोविन्द, मुकन्द, मुरारी यह नाम लेकर उनकी सेवा को बडा बताया और मैंने सुनाथा कि कबीरजी महाराज निर्गुण निराकार ब्रह्म के उपासक और आत्मज्ञानी हैं, इसका क्या भेद है, कृपा करके यह

तीनों बातें समझा दीजिये और दासी की ढिठाई क्षमा कीजिये ।

कबीरजी—सुनो सुमति !! जिस किसी को किसी के साथ सच्चा प्रेम होजाता है तो अपने प्यारे के निहारे बिना उस को चैन नहीं आता अपने शरीर का सुखभोग कुछनहीं भाता, यहां तक बिरह सताता है कि प्यारेके विदून अपना शरीर ही नहीं सुहाता, उस अवस्था में जीने से मरना श्रेष्ठ नजर आता है ।

और जबतक अपने तनके सुधार में मनलगा हुआ है सच्चा प्रेमी नहीं कहाता है, पक्का प्रेमी वोही है जो मौत को माल नहीं समझता और आपे को इतना भूलजाता है कि जीतेजी मरजाता है इसमें एक दृष्टान्त सुनाते हैं ।

॥ दृष्टान्त ॥

एक पूरे महात्मा किसी जंगल में निवास करते थे, उनके पास एक जिज्ञासु गया बहुत दिनोंतक उन महात्मा को गुरु मानकर उनकी सेवा बन्दगी करता रहा ।

एकदिन महात्माजी प्रसन्न होकर उससे बोले कि क्या चाहता है, चेलेने हाथ जोड़कर कहा कि महाराज ! मैं कोई संसारी भोगकी इच्छा नहीं रखता केवल भगवान से मिलना चाहताहुं, कृपा करके दासको भगवान् से मिला दीजीये ।

महात्माजी उसी समय खड़े होगये और चेले को साथ लेकर बस्ती की तरफ चलदिये, बहुत देरतक चलते चलते एक नगर आया उसके दरवाज़े में चेले को प्रवेश कराके आज्ञादी कि इस नगर में चलाजा जो कोई जीव तुझे अंत्यन्त प्यारा लगे और तेरे दिलको पूरा पूरा भावे

उसी को भगवान् समझना उसी के दर्शन करते रहना उसी की आज्ञापालन करना, सालभर के बाद हम तुझे आकर संभाल लेंगे, चेलेने बहुत खुशी के साथ स्वीकार किया और गुरूजी को प्रणाम दंडवत् करके इतनी ही प्रार्थना की कि आप इस बात को भूल न जावें कृपारखें।

वस महात्माजी जंगल की ओर चलदिये और चेला नगर में घुसकर जौहरी बाजार में पहुंचा और बहुत विचार पूर्वक प्रत्येक मनुष्य और प्राणी को देखने लगा कि किसी जीव पर दिल ठहरे, परन्तु कहीं मन उसका न टिका, अन्त में चलते चलते एक जौहरी की दुकान पर एक सोलह बरस की उम्र के लड़के को बैठा देखकर ठहर गया।

ज्योंही दृष्टि जौहरी बच्चे पर पड़ी दिल उसका उसी में फंस गया लड़का उत्तम वस्त्र और भूषणों से शोभित होनेके उपरान्त सुन्दर भी उत्तम कक्षाकार था, साधूने उसी लड़के को अपने गुरुजी के उपदेश के अनुसार भगवान् मानलिया और उसकी दृष्टि इसपर पड़तेही इसने झुककर नमस्कार प्रणाम किया और दुकान के सामने कुछही दूर अपना डेरा जमादिया, वस अव दिल उसी भगवान् पर न्योछावर वोही प्राणाधार और असार सारा संसार है, यह दशा होगई, नखाने की सुध न पीने की चाह, हरदम उसी भगवान् के चरणों पर है निगाह।

दुकान से जौहरी बच्चा जब अपने मकान को जाता है यह भी कुछ अन्तराय से उस के पीछे पीछे चला जाता है और उसके निज भवन में प्रवेश कर जानेपर

मकान के सामने उसी के दरस की तरस में खड़ा रहता है, रात योंही दरस की लालसा में बिताता है, किसी ने साधु जान कर टुकड़ा देदिया तो खालिया नहीं तो किसी से सवाल न किया।

जब एक सप्ताह इसी तरह बीतगया तो दुकानदारों ने चर्चा आरंभ की और उस जौहरी को जिसका कि लड़का था बहकाया कि तुम्हारे लड़के को एक साधु नित्य घूरा करता है यह बात अच्छी नहीं है, तुम्हारी इस में अत्यन्त बदनामी है इस को मने करो, जौहरी ने साधु से कहा कि तुम यहां क्यों खड़े रहाकरते हो अपने रस्ते जाओ, साधुने जवाब दिया कि मैं तुम से कुछ नहीं चाहता न तुम्हारी कुछ हानि करताहूं, अपने भगवान् के दर्शन किया करताहूं, जौहरी ने सवाल किया भगवान कहां हैं, जवाब दिया कि (उसके लड़के की तरफ इशारा करके) यह क्या बैठा है, जौहरी बोला कि यह तो मेरा लड़का है भगवान् कहां है, जवाब दिया कि तुम्हारी दृष्टि में यह कोई हो हमारा तो भगवान् यह ही है।

जब इस बात चीत का कुछ भी असर साधु पर नहीं हुआ तो जौहरी लोगों ने संमति करके यह यत्न सोचा कि इस लड़के की जबान से कहलादियाजावे कि चलाजा तब यदि इस की आज्ञा न मानेगा तो इसको यह कहकर टालदिया जावेगा कि भगवान का हुक्म नहीं मानता और फिर मारपीटकरके निकालदेंगे और यदि लड़के के कहने से चलागया तो सहज ही बलाय टल जावेगी।

बस जौहरी ने अपने लड़के को बहुत समझाया कि

साधु को चलेजाने को कहदे, उसने स्वीकार भी करलिया परन्तु जब साधु को इस प्रयोजन से उस के पास बुलाया तो लड़का उसे देखकर चुपहोगया, कई बार जौहरी ने लड़के को बनाया परन्तु उसकी ज़बान से यह शब्द नहीं निकला कि यहां से चलाजा, फिर चार दिन इसी प्रकार बीत गये तब जौहरीयों ने सलाह करके उस साधु के दूर करनेकी यह जुगत निकाली कि लड़के की ज़बान से साधु को यह बात कहलाई जावे कि अंडे की समान बडे बड पांचसौ मोतियों की आवश्यकता है वो लादो, ऐसा ही लड़के ने साधु से कहदिया वो तुरन्त प्रणाम करके चलदिया और लोगों से पूछा कि मोती कहां मिलते हैं, तो विदित हुआ कि समन्दर के अन्दर सीप में मोती हुआ करते हैं, इतना मालूम करके साधुने समुद्र के किनारे पहुंच कर विचार किया कि मोतियों की सीप इसके अन्दर से निकालना इसके ख़ाली किये विना संभव नहीं नज़र आता इसलिये समुद्र को ख़ाली करदेना चाहिये।

ऐसा दृढ विचार करके इसने एक मिट्टी के पात्र से जो वहीं पड़ा मिलगया था समुद्र का पानी बाहर फेंकना आरम्भ करदिया, और दिन रात यह ही काम करता रहा जब तीन दिन और तीन रात बराबर पानी फेंकते गुज़र गये तो लोगों ने कारण इस चेष्टा का पूछा, साधू ने जवाब दिया कि समुद्र को खाली करके इसके अन्दर से मोती निकालूंगा, लोगों ने हँसकर कहा कि तू मूर्ख है समुद्र भी कभी खाली होसक्ता है, इसने जवाब दिया कि तुमको क्या प्रयोजन मैं तो ख़ाली करके छोडूँगा, लोग पागल

समझ कर चलेगये, एक सप्ताह भर इसको बीतगया शरीर इसका सूखगया तो भी बराबर पानी बर्तन में भरकर बाहर फेंकता रहा ।

इसी अन्तर में अगस्त मुनी का आगमन उस मार्ग से हुवा और उन्हों ने साधू की यह चेष्टा देखकर उस से प्रश्न किया कि ऐसा क्यों करता है तो उनको भी इसने वोही जवाब दिया, तब अगस्तजी ने फ़रमाया कि तू अज्ञानी मनुष्य है अपनी सामर्थ्य को नहीं देखता तेरा शरीर तो दो चार दिन का पाहुना प्रतीत होता है तू इससे इतना बडा काम क्योंकर करसकेगा, साधू ने जवाब दिया कि इस शरीर से यदि समुद्र ख़ाली न हुवा तो दूसरे शरीर से यह ही काम करूंगा, जो जो शरीर मुझे मिलैगा उससे यह ही काम करता रहुंगा कभी तो ख़ाली होवे हीगा ।

ऐसी दृढताई इसकी देख कर अगस्त मुनि को दया आगई यह वोही मुनि थे जिन्हो ने अपने तप के बल से समुद्र को तीन चुल्लू में पानकरलिया था ।

इन्हों ने समुद्र को याद किया, पहाड़ और नदी और समुद्रों के दो रूप माने गये हैं, जड़ रूप से तो यह शिला और जलरूप नज़र आते हैं और चैतन्य रूप इनका दूसरा है, समुद्र एक ब्राह्मण की सूरत में अगस्तजी के सामने आया और डरता हुवा बोला कि क्या आज्ञा है, इन्हों ने जवाब दिया कि तू बडा निर्दई है कि एक साधू की हत्या अपने सरपर लेरहा हैं, इस साधू को जैसे मोती चाहियें देदो, समुद्र ने सर झुका कर अंगीकार किया और अन्तर्यान

होगया, थोड़ी देर के पश्चात् एक लहर आई जिसमें हज़ारों मुर्ग अण्डे के बराबर मोटे मोती थे, साधूने अगस्तमुनि की आज्ञा से एक गांठ मोतियों की बांधली और मुनिजी को धन्यवाद देकर चलदिया ।

देखो जिसकाम के लिये मनुष्य हिम्मत बांधकर आरम्भ करता है वो अवश्य सिद्ध होता है ।

॥ फ़ारसी पद्य ॥

बहर कारे कि हिम्मत बस्ता गर्दद,
अगर ख़ारे बुवद गुलदस्ता गर्दद ।

ऐसी कोई बात कठिन नहीं है जो यत्न करने से सुगम न होजावे ।

॥ फ़ारसी पद्य ॥

मुश्किले नेस्त कि आसाँ न शवद
मर्द बायद कि हिरासाँ न शवद ।

साधू गिरता पड़ता अपने प्यारे भगवान् के दीदारकी आसमें भूक प्यासकी कुछ परवाह न करके मोतियों की पोट सरपर रक्खेहुये पंद्रह दिनमें ही उस शहर में पहुंचगया और भगवान् को दुकानपर बैठाहुवा देखकर सारी आपत्ति और कष्टों को भूलकर खुशी से फूलगया, मोतियों का ढेर दुकान पर लगादिया ।

अवतो तमाम बाज़ार के जोहरी एकत्र होगये और मोतियों को देखकर दातों में उँगली दवाने लगे, क्योंकि हरएक मोती उनमें लाखों रुपये की क़ीमत देने पर भी नहीं मिलसकता ऐसा अमूल्य था, कोई कहने लगा ऐसे मोतियों

का लाना मनुष्यकी सामर्थ्य से बाहर है, यह साधू कोई जिन मालूम होता है, किसी ने कहा यह कोई फ़रिश्ता है, किसी ने भूत किसी ने योगी अवधूत बतलाया और जोहरी को जिसके हाथ यह दौलत सहजमें आगई डराया कि अब तेरे लड़के की कुशल नहीं है, जिस प्रकार यह जन ऐसे मोती लेआया तेरे लड़के को भी उड़ालेजायगा तू रोता रह जायगा, जैसे होसके इस साधूको टलाना चाहिये ।

जोहरी सर्वथा मूर्ख और केवल संसारी था अपने इकलौते बेटेकी प्रीतिसे उसके वियोग के भयसे घबरागया और उस बेचारे साधूको उसने रातके समय मरवाडाला मांस उसका खटीकों और क़साइयों के हाथ बेचडाला ।

दैवयोगसे साधूके शरीरका वो टुकड़ा मांसका जो दिल कहलाता है खटीक के यहां से राजाके रसोईख़ाने में जापहुंचा, रसोईदारने ज्यों मांसको देगमें रखकर पकाना आरम्भ किया वो दिलका टुकड़ा आंच लगतेही इतने ज़ोर से उछला कि मकानकी छतसे टकराकर उलटा देगमें आपड़ा, रसोईदारने देगपर, एक मज़बूत ढक्कन रखकर आंच लगाई तो फिर वो टकराकर बहुतवेग से ढक्कन को हटा करके उतनाही उछला, जब कईबार ऐसाहुवा तो रसोइदार ने राजाजी को सूचनादी और उन्हों ने स्वयं आकर यह तमाशा अपनी आंखों से देखकर बहुत अचरज मान-कर पंडितों और मौलवियों से प्रश्न किया उन सबने सम्मति करके जवाबदिया कि यह मांस का टुकड़ा किसी

प्रेमीका दिल मालूम होता है, यद्यपि देहसे न्यारा होगया है तथापि किसी प्रियतम की चाहमें प्राण उसके इस में रहगये हैं, इसको बाजार में लटकवा दियाजावे तो भेद खुल जाना संभव है।

ऐसाही कियागया कि उस टुकड़े को एक रस्सी में भरेबाज़ार लटकवा दिया, परन्तु यह तमाशा और होगया कि उस रस्सी के नीचे होकर जब वो जोहरी पुत्र जाता था यह टुकड़ा भी रस्सीमें लटकाहुवा ही कुछ दूरतक उस के पीछे चलकर हट आता था।

जब वो समय आपहुंचा कि साधूके गुरु महात्मा को ध्यान में मालूम हुवा कि हमारा चेला बड़ी आपत्ति में फंसकर जानदेचुका है यह, महात्मा सिद्ध पुरुष थे तुरन्त शहर में आये और रस्सी में लटके हुये मांसका तमाशा देखकर ताड़गये कि यह उसी साधू का दिलहै, राजाके पास पहुंचकर इन्होने क्रोधमें आंखेंलाल करके कहा कि राजा तेरी राजधानी में बड़ेभारी अत्याचार होते हैं, निरपराधी मनुष्यों की जान लीजाती है, अब तेरी कुशल नहीं है।

राजा उस महात्मा के तेज प्रतापसे कांप उठा और हाथजोड़कर विनय करने लगा कि अपराध क्षमा हो, जो आज्ञाहोय उसका पालन करने को हाज़िरहूं, महात्माने फ़रमाया कि वो मांसका टुकड़ा जो रस्सी में लटक रहा है इसी समय मँगाओ तुरन्त वो टुकड़ा मँगायागया, महात्मा ने फिर ध्यानकरके अच्छितरह जानलिया कि यह उसी साधू का दिल है, राजाको हुक्म दिया कि अभी निर्णय कराके

इसका निश्चय करो कि जिस मनुष्य का दिल ये टुकड़ा है वो किसतरह मारागया और उसकी हड्डियां कहां हैं ।

राजाने अत्यन्त शीघ्रतासे तहक़ीकात की तो साबित होगया कि एक साधूको जोहरी ने मरवादिया था और उस की हड्डियां अमुकस्थान पर ज़मीन में गाड़दीगई हैं ।

हड्डियां भी आगई महात्माने उन हड्डियों को एकत्र करके वो गोश्तका टुकड़ा भी उनके शामिल करदिया और चादरसे उसको ढांकक़र परमात्मा से प्रार्थना करने लगे ।

थोड़ी देर के बाद उन्होंने अपने कमंडल से जललेकर उसपर छिड़का तुरन्त ही वो साधू जीवित होकर अपनी असली सूरत में खड़ाहोगया, महात्मा ने उसे छाती से लगाया और दोनों गुरु चेले कुछ देरतक आंसू बहातेरहे, फिर गुरुजी ने शिष्य से पूंछा कि भगवान् मिला या नहीं चेले ने जवाब दिया कि मिलगया दुकानपर बैठा है, महात्मा ने समझ लिया कि पक्का प्रेमी होगया, उसी समय उस के हृदय में ज्ञानका प्रकाश करके असली महबूब के दर्शन करादिये और चेला भी कामिल महात्मा बनगया ।

इस दृष्टांत से नतीजा यह निकला कि प्रेमी को कैसी २ आपत्तियें झेलनी पडती हैं, इस दर्जे का प्रेमी मौत से कदापि नहीं डरता वोही परमात्मा का प्यारा होता है इसी लिये हमने कहा है ।

(जबलग मरने से डरे, तबलग प्रेमी नांहि)

अब सुमति कहो तुम्हारे पहिले प्रश्नका उत्तर हुवा या नहीं ।

सुमति—महाराज! मैंने अच्छी तरह जानलिया कि प्रेमका दर्जा बड़ा है, और सच्चेप्रेमी को मौत का कुछ डर

नहीं होता, अब कृपाकरके दूसरे प्रश्न का उत्तर दीजिये।

महात्मा कबीरजी—दूसरे प्रश्नका उत्तर यह है कि जब संसारी जीवों को किसी अपने प्यारे की याद और वियोग दशा में बेक़रारी होती है तो उसको ऐश आराम सुखचैन कुछ नहीं सूझता और हँसी ख़ुशी चैन की हालत में हुवाकरती है, गायसे बछड़ा और बछड़े से गायको अलहदा कियाज़ावे तो दोनों बेतरह पुकारते और डकराते आँखों से आंसू बहाते हैं, खाने पीने की सुध भूलजाते हैं, तो मनुष्य जिस में प्रीतिका अंश अधिक है, कब अपने प्यारे की जुदाई सहनकरसक्ता है, अन्तःकरण में विरहकी आग जलती और प्यारे के मिलेबिना और किसी उपाय से नहीं बुझती है और जिसतरह पर चूल्हे में आग जलने के समय उस में पकनेवाली चीज पानी की सूरत में वाहिर आती है, उसी तरह मनुष्य के शरीर का अंश पानी होकर आंखों के रास्ते से बहने लगता है इसी को आंसू बोलते हैं।

रोने के समय चित्त एकाग्र रहता है, सिवाय इसके कि जिसकी याद में रोना होता है, दूसरी तरफ़ मन नहीं जाता है, जो मनुष्य परमात्मा की सच्ची प्रीति मनमें रखता है वो जिस समय अपने प्यारे महबूब परमेश्वर की विरह में व्याकुल हो रोता है, उसको दूसरा ध्यान नहीं रहता इसलिये रोना मनकी एकाग्रता का कारण है, जैसे रोतेहुये बच्चे को देखकर माता दौड़कर उसके पास आती और सब धन्दों को त्याग देती है, इसी तरह परमात्मा उसकी याद में होनेवाले विरही जनके झट्ही सन्मुख होजाता है, अतः

महात्माओं ने परमात्मा की याद में रोनेको बड़ाभारी द्वार उससे मिलने का समझा है।

और तुमने जो यह बात कही कि चाहे जिस इष्टमित्र को याद करके आदमी को रोना सुगम है, इस में विचार करने की जगह यह है, कि जिसके वास्ते मनुष्य रोता है, वोही उसके ध्यानमें आता है, यदि अपने संसारी नातेदार की याद में रोवेगा तो परमात्मा क्यों उस के ध्यान में आयेगा।

तीसरा प्रश्न जो तुमने किया कि माधो, गोविन्द, मुरारी आदि शब्दों का उच्चारण करने से निर्गुण निराकार ब्रह्मकी उपासना सिद्ध नहीं होती, इस का उत्तर यह है कि नादान लोग ऐसा भेद मानते हैं, हमको निर्गुण निराकार और साकार परमात्मा में कोई भेद प्रतीत नहीं होता।

देखो माया के तीन गुण–सत्, रज, और तम हैं, इन तीन गुणों से सारी सृष्टि का व्योहार होरहा है, परमात्मा इन तीन गुणों से परे है, इस कारण से निर्गुण कहाता है।

पंच महाभूत–जल, अग्नी, वायु, पृथ्वी, आकाश से सब सृष्टि चर और अचर बनी है; जितने आकार और व्यक्तियां सृष्टि में हैं, इन्हीं पांच पदार्थों से रचीहुई हैं, और परमात्मा पंचमहाभूतों के आकारवाला नहीं है, इस लिए उसको निराकार कहते हैं, जब वोही निर्गुण निराकार ज्योतिस्वरूप ब्रह्म सच्चिदानन्द अपने भक्तों और धर्म की रक्षा और दुष्ट पापियों को शिक्षा देने के लिये किसी सूरत शकल में प्रगट होजाता है, तो उस का शरीर और

संसारी जीवों की तरह पंचमहाभूत का नहीं होता वो अलौकिक और दिव्य शरीर धारण करता है, श्रीराम या श्रीकृष्ण यह दो रूप जो परमात्मा ने मनुष्य आकार धारण किये वो भौतिक या माया के गुणों से रचेहुये नहीं थे, इसलिये देहधारण करने पर भी परमात्मा के निर्गुण और निराकार होने में कोई हानी नहीं हुई, इसलिये जितने नाम और रूप परमात्मा के हैं सब कल्याण करने वाले और दुःख का मूल जो पाप है उसको हरनेवाले हैं, हमको इनमें कोई भी भेद नहीं मालूम होता, प्रत्युत हम को तो सारी सृष्टि में कोई पदार्थ भी परमात्मा से भिन्न नहीं नज़र आता हरएक ज़र्रे में उसी का जल्वा दिखाई देता है, अब कहो तुम्हारे मन का सन्देह दूर हुवा या नहीं।

सुमति—श्रीमहाराज! यह दासी आप को धन्यवाद देती है, अब मेरे प्रश्नों का यथार्थ उत्तर होचुका, दासी ने आप को परिश्रम दिया इस की क्षमा चाहती है।

इतना कहकर सुमति दण्डवत् प्रणाम करती है।

अब गुरु नानकजी भगवत् के प्यारे ज्ञान और प्रेम की मूरत धारेहुये अपने आसन से खड़े होकर फ़रमाते और परमात्मा की भक्ति का रङ्ग बरसाते हैं।

महत्पुरुषो! प्रेमभक्ति की महिमा अपरम्पार है इस का प्राप्त होना बडा कठिन विचार है, परमात्मा प्रेम का भण्डार और उस को प्रेमियों से अत्यन्त प्यार है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि संसार में प्रेम ही सार और सब असार है हमारे तो एक प्रेमही जीवन आधार है, प्रभु से प्रेमपदार्थ की भिक्षा मांगते हैं।

॥ बिहाग राग ॥

(प्रेमसे यह पद गाते हैं)

मोरे प्रीतम प्यारे प्रभुजी मोरे प्रीतम प्यारे ।
प्रेमभक्ति अपनो नामदीजे दयाल अनुग्रह धारे ॥
प्रभुजी मोरे प्रीतम प्यारे ।
सुमरों चरण तुम्हारे प्रीतम हृदय तुम्हारी आसा ।
सन्त जनां पे करूँ बीनती मन दर्शन की प्यासा ॥
प्रभुजी मोरे प्रीतम प्यारे ।
बिछुरत मरन जीवन हरि मिलते जनको दर्शन दीजै ।
नाम अधार जीवन धन नानक प्रभु मोरे कृपा कीजै ॥
प्रभुजी मोरे प्रीतम प्यारे ।

॥ दूसरा पद ॥

अब हम चलीं ठाकुर पे हार ।
जब हम शरण प्रभुकी आये राख प्रभु भावे मार ॥ अब० ॥
लोकन की चतुराई उपमातें बैसंदर जार ।
कोई भलाकहो भावे बुरा कहो हमतन दीनो है ढार ॥
अबहम चलीं ठाकुर पे हार
जो आवत शरण ठाकुर प्रभुतुम्हरी तस राखो कृपा धार ।
जन नानक शरण तुम्हारी हरिजी राखो लाज मुरार ॥
अबहम चलीं ठाकुर पे हार ।

॥ तीसरा पद ॥

हे गोविन्द हे गोपाल हे दयाल लाल ।
प्राणनाथ अनाथ सखे दीन दरद निवार । हे गो० ॥

हे समर्थ अगम पूरण मोहि दया धार ।
अन्धकूप महा भ्यान नानक पार उतार ॥ हे गो० ॥

॥ चौथा पद ॥

भक्तबछल हरि बिरद आप बनाइया ।
जेहि जेहि सन्त अराधहि तहिं तहिं प्रघटाइया ॥ भक्तब० ॥
प्रभु आपलये समाय सुभाय भक्तकारज साधिया ॥ भक्तब० ॥
आनन्द हरिजस महामङ्गल सर्वदुख विसराइया ॥ भक्तब० ॥
चमत्कार प्रकाश दहदिश एकतहीं दरसाइया ॥ भक्तब० ॥
नानकप्रेमसे नामजपे भक्तबछल हरि बिरदआपबनाइया । भ०

इतना फरमाकर गुरु नानकजी विराजगये, सुमतिने दंडवत् करके उनको धन्यवाद दिया, और हाथ जोड़कर प्रश्न किया ।

सुमति—श्रीमहाराज ! आपने जो कुछ इस समय आनन्द और प्रेमका रस वरसाया दासी को बहुतही भाया, परन्तु आपने जो यह फ़रमाया कि जहां २ प्रभुकी सन्तों ने आराधना की तहिं २ भगवान् ने प्रकट होकर झाँकीदी, इस में किसी दृष्टान्त सुनने की ज़रूरत दासी के मन में हुईहै, कृपा करके श्रीमुखसे आज्ञाकरें, दासी के हियेके अन्धकार को हरें ।

गुरु नानकजी—हां २ पुत्री इसमें एक दृष्टान्त क्या अनेक मौजूद हैं, शंका करना बे सूद है, नर्सीभक्त का चरित्र तुझे सुनाताहूं, भगवत् की भक्तवत्सलता का नमूना दिखलाताहूं. सावधान होकर सुनो ।

॥ नर्सी चरित्र ॥

जूनागढ में एक भगवान् के प्रेमी भक्त नर्सीजी हुए हैं, जिनके मनोरथ सिद्ध करने को एकवार नहीं कईवार

भगवान् प्रत्यक्ष हुये हैं, उनकी स्त्री ने एकबार उनसे प्रार्थना की कि हे प्राणनाथ गृहस्थ आश्रम बड़े क्लेशसे भरा है, धन के विना इसमें किसी को नहीं सरा है, न साधू सेवा धन विना बनसकै है, न निर्धन का मन भजन में लग सकै है, आप निचींते होकर कैसे विराज रहे हैं, दासी ने निहायत तंग होकर यह वचन कहे हैं, कृपाकरके श्रीभगवान् से प्रार्थना कीजिये, काम चलने लायक तो धन माँग लीजिये, इस के जवाब में नर्सीजी बोले ।

(ग़ज़ल)

सुनो प्राणप्यारी मेरी एकबात ।
भजन से सकल सिद्ध फल होयजात ॥
सकल सुखका साधन है हरिका भजन ।
वो धन है जिसे प्राप्त हो यह रतन ॥
जतन सारे तज के भजन जो करें ।
मनोरथ हरी उस के पूरण करें ॥
हरी को रहै उस की चिन्ता सदा ।
निपट आसरा जिसने हरिका लिया ॥
भजो रैन दिन उस दया धाम को ।
करौ याद मथुरेश घनश्याम को ॥

(पद)

(भरके जाम भर के जाम इस थियेटरकी चाल में)

श्यामाँ श्याम श्यामाँ श्याम, यह ही रटेजाओ याही में चितलाओ करो अनन्द, जितना जितना लागे यह रंग, हिये में दिन दूनी बाढे उमंग, वो छवि देखके होजाना मस्तान ।

वाही के गुनगाना यह ही रतन, अनमोला धन, राधेरमन, धन, धन, हो । मोहन मिलन को यह ही जतन, साधिये सतन हरिको भजन कियेजा । श्यामां श्याम० ॥ १ ॥ सुख में दुख में छाडे न संग, रङ्गीला छबीला सजीला अङ्ग, श्रीमनुरेश की देशविदेश में राखो हमेशा ही सांची लगन, आनन्दघन, शोभा सदन, धन, धन, हो । सुन्दर बदन, मन्दगी हसन, सोहन मोहन, वाही को मनन कियेजा । श्यामाँ श्याम, श्यामाँ श्याम० ॥ २ ॥

नर्सीजी यह वचन सुनाकर भजन और ध्यान में मगन होगये, आगे हरि की प्रेरणा से यह कौतुक हुआ कि किसी सेठ ने एक साधुमण्डली के महन्त की भेट सातसौ ७००) रुपये किये वो मण्डली द्वारकाजी को जाती थी, महन्त ने अपने चेलों को वो रुपये देकर शहर जूनागढ में भेजा कि किसी मोतबर साहूकार से इस रुपये की हुण्डी द्वारकाजी के किसी साहूकार के नाम करालाओ ।

चेलों ने शहर में जाकर साहूकार का पता पूंछा वहां किसी मस्खरे ने हँसी में कहदिया कि इस शहर में नर्सीजी सब से बढ़िया हुण्डीवाल सेठ हैं, उनके मकान पर चले जाओ, परन्तु वो इन दिनों में हुण्डी पत्री का काम कम करते हैं, प्रायः बातों में टाल बतादिया करते हैं, इस बात का खयाल रखना ।

चेले नर्सीजी का मकान पूंछते हुये पहुंचे और कहा कि महाराज यह रुपया लीजिये और हमको द्वारकाजी की हुंडी करदीजिये, नर्सीजी बोले कि साधूजी मैं कोई हुंडी-वाल साहूकार नहीं हूं, किसी ने आपको बहका दिया है,

साधू कहने लगे कि सेठजी आप हम को टालते हैं हम कदापि नहीं मानेंगे आपही से हुंडी करावेंगे, नहीं करोगे तो तुम्हारे ऊपर प्राणदेदेंगे ।

साधुओं का इतना हट देखकर नर्सीजी ने सोचा कि यह कुछ प्रेरणा भगवत् की मालूम होती है, यह लोग ऐसे किसी के बहकायेहुये हैं कि जानदेनेको तैयार हैं, अब उत्तम यही है कि रुपया इन से लेकर साधूसेवा में खर्च कियाजावे, हुंडी पत्री का व्योहार भगवत्जानें वो सँभाल लेंगे ।

ऐसा विचार करके नर्सीजी ने एक ठीकरी पर हुंडी का कुछ मज़मून लिखदिया और सांवलिया साह के नाम द्वारकापुरी को हुण्डी करदी, वो ठीकरी लेकर साधूलोग महन्तजी के पास आये और साधूमण्डली द्वारकाजी को चलदी और कईदिन में द्वारकापुरी पहुंचगई ।

वहां साधुओं ने बहुधा सांवलिया साह की दुकान का खोजकिया कुछ पता नहीं चला, साहूकारों ने कहा कि तुमलोगों को किसी ने ठगलिया, न यह हुंडा रीत के अनुकूल है और न सांवलिया साह कोई साहूकार यहां है ।

साधूलोग यह सुनकर अतिपश्चात्ताप करनेलगे कि रुपया हमारा उसने ठगलिया, अब क्या करें? महन्तजी भी अपने चेलों से बहुत अप्रसन्न हुये कि कैसी हुण्डी कराके लाये ।

लाचार सबकेसब शहर के बाहर आकर एक स्थान में ठहरगये और रसोई बनाने खाने में लगगये, परन्तु सब अति घबराये व्याकुल होरहे थे, उधर अन्तर्यामी

श्रीकृष्णचन्द्र द्वारिकानाथ महाराज को बडीभारी चिन्ता इस बातकी हुई कि हमारे भक्त नर्सीजी की हुंडी न पटने से उनकी बात जाती रहेगी, प्रतिष्ठा भंगहोने का भय है, आप आराम फरमाते २ एकदम चोंककर उठबैठे और उदास होकर विराज गये, श्रीरुक्मिणीजी महारानी पाटरानी ने इस अचानक उदासीका कारण पूछा, तो आपने फ़रमाया कि मेरी उदासी का हेतु यह है।

॥ दोहा ॥

होय निरादर जो मेरो, सहूं ताहि सौ बार।
भक्त निरादर सहसकूं, ना मैं एकहु बार ॥ १ ॥
हरिजन हैं ममआत्मा, जीवनप्राण अधार।
मैं तिनको ऋणिया प्रिये, कहूं पुकार पुकार ॥ २ ॥
वे केवल मोकों भजें, तजें विषय आनन्द।
ममसुमिरन में मगलमन, दूरसकल छलछन्द ॥ ३ ॥
जहां भरे अनुराग से, करें भक्त ममगान।
तहांरहूं योगिन हियो, न वैकुन्ठ ममथान ॥ ४ ॥
हरिजन द्वेषी शत्रुमम, जनप्रेमी मम मित्र।
जनको अपने से अधिक, जानों परम पवित्र ॥ ५ ॥
हुंडी मेरे भक्त की, साधू लायो कोय।
पटेविना हाँसि है जगत, यही सोच है मोय ॥ ६ ॥

यह फरमाकर भक्तवत्सल भगवान् आंखों में आंसू भरलाये, तब रुक्मिणीजी हाथजोड़कर कहने लगीं कि त्रिलोकीनाथ आप सर्वशक्तिमान् भगवान् होकर क्यों इतना सोच करते हैं कोई उपाय करके अपने भक्त की बात रख लीजिये।

महारानी की बात सुनकर आप तुरन्त उठे और साहूकारका भेष धारनकर बगल में बही और कंधेपर सातसौ रुपये की थैली रखकर उस स्थान पर पहुंचे जहां साधू लोग ठहरे हुयेथे और बहुत पुकारकर कहने लगे कि जूनागढ से नर्सी महता की हुंडी लेकर कौन आया है।

साधूलोग दोड़कर गये और कहनेलगे कि हम हुंडी लाये हैं, सांवलिया साहका पता न मिलने से घबराये हुये यहां ठहरे हैं, आपबोले कि मैं नर्सीजी महाराज का आड़तिया और उनका गुमाश्ता भी हुं, मैं स्वयं तुम्हारे खोज में फिरूंहूं मेरेपास हुंडी का बीजक और चिट्ठी आ पहुंची है, सांवलिया साह मेराही नाम है, हुंडी भरपाई करके दीजिये और रुपया गिनलीजिये।

यह बात सुनकर साधूओं के शरीर में जान आगई और बडे आनन्द में आकर वो ठीकरी सांवलसाह के हाथ में दी, सांवलिया साहने उसको छाती से लगाया और सरपर चढाया, फिर रुपया साधूओं को गिनदीया और एक चिट्ठी इस मजमून की नर्सीजी के नाम लिखदी।

॥ पद ॥

जय जय नर्सी महता साह, सांवल साह तिहारो प्यारो।
वन्दों विनती करि करजोर, रखियो सुनज़र मेरी ओर,
तुम्हरी आड़त है सबठौर, नाकोई तुमसो हुंडीवारो॥ जय० ॥
मोकों निज गुमाश्तो जान, हाज़िर हरठाईं पहिचान;
शङ्का कभून उरमें आन, लिखिये कामकाज निजसारो॥ ज०॥
हुंडी भरपाई करलीन, रुपये सगरे हैं गिनदीन तुमहो

[illegible] साहमवीन, मोपर दयामया नितधारो ॥ जय जय [illegible] ॥ ३ ॥

[illegible]लोग साँवलसाह के दर्शन और उनकी मधुर वाणी के श्रवण से ऐसे आनन्द में मगन होगये कि असली भेद को बिलकुल नहीं जानसके, परन्तु जब वापिस जूनागढ़ पहुंचे और नर्सीजी से सारा हाल कहकर उनको साँवलसाह की लिखीहुई चिट्ठी दी तो नर्सीजी प्रेम में डूबकर तन बदन की सुध भूलगयें और साधुओं के चरणों में लोटने लगे, उस समय साधुओं के दिल में ख़याल आया कि यह तो भेद कुछ औरही था ।

इसी तरह नर्सीजी की लड़की जो एक बडेघर ब्याही गई थी उसकी सास्ने नर्सीजी के यहांसे छोछक जिसको (माहरा भी कहते हैं) न पहुंचने पर बहुत कुछ ताने मारे और कहा कि तेरा बाप कङ्गाल और भिखारी है वो माहरा कहां से भेजता, लड़की ने अपने पिता नर्सीजी को चिठी लिखकर यह हाल ज़ाहिर किया ।

नर्सीजी उस के जवाब में कहलादिया कि हम माहिरा लेकर आते हैं, और एक टूटीसी गाढी में बैठकर ठाकुरजी के सिंहासन को साथ लेकर समधी के घर पहुंचे ।

समधन को सूचना हुई कि ऐसी हालत में नर्सीजी आये हैं, कुछ सामान नहीं लाये हैं, उसने क्रोध में आकर ठहरने को एक छप्पर का मकान बतलाया, उसमें नर्सीजी ने ठाकुरजी को विराजमान करदिया, आप उस झोंपड़ी के बाहर हाथ में करताल लेकर नन्दलाल का भजन करने लगे और आदमी भेजकर समधन से कहलाया कि जितने

जोड़े ज़नाने मरदाने चाहियें उनकी फ़हरिस्त भेजदो ।

समधन ने गुस्से में लाल होकर एक बड़ी भारी फ़हरिस्त लिखादी और उसके नीचे दोचांदी सोने की ईंटें भी लिखा दीं ।

नर्सीजीने फ़हरिस्त ठाकुरजी के सिंहासन पर रखकर प्रार्थना शुरू की ।

॥ मूंगेकी चालमें पद ॥

सांवरिया तोरी शरण गही ॥ रे हां० ॥
वेगी मोपे करिये महर नज़रिया ॥ सांवरिया० ॥ रे हां० ॥
अति अगाध भवसागर माहीं, नैयाहै जात बही ॥ रे हां० ॥
करुणानिधि मेरीबिथाहै भारी, मुखसे न जातकही ॥ रे हां० ॥
पीर कठिन बलवीर हियेकी, अब नहीं जात सही ॥ रे हां० ॥
राधेश्याम धाम करुणा के, यह सुन शान्तिलही ॥ रे हां० ॥
दृढ बिश्वास आस दम्पतकी, औरकी चाह नहीं ॥ रे हां० ॥
ममअवगुन देखेनहीं बनिहै, निजप्रणदेखोतोसही ॥ रे हां० ॥
मथुरानाथ लाज तुमही को, लगन है लागरही ॥ रे हां० ॥

॥ दूसरा पद ॥

(अँखियां लागीं मोहन मन बसगयो इसके वजनपर)
रसिया मोहन सो दूसरो कृपाल नहीं रे ॥ सभा में द्रोपदी ने दीनह्वे पुकारकरी, हरीने चीर बढा पीर वाकी सारीहरी, जाके दर्शन से सुदामा की है बिपत्तिटरी, गजको उद्वार कियो ग्राह से वो धन्य घरी, दीन दुखियान पै गोबिन्द सो

कृपाल नहीं रे ॥ रसिया० ॥ जो एकबार कहै नाथहूं शरण तेरी, वो प्राणी पावे अभय दान हो नहीं देरी, ऐसे स्वामी के चरन की है मैं शरन हेरी, दीन के बंधु दया सिंधु को लज्जा मेरी, कौन मथुरेश को भजके हुओ निहाल नहीं रे ॥ रसिया मोहन सो दूसरो कृपाल नहीं रे ॥

इधर प्रार्थना की देरथी उधर श्री द्वारिकानाथ महाराज को अपने भक्त की चिन्ता में देर न थी, आप फिर उदास होकर श्री रुक्मिणी महारानी से फ़रमाने लगे कि मेरे भक्तपर बडीभारी आपत्ति आन पड़ी है यह आराम करने की घड़ी नहीं, महारानीजी ने नर्सीजी का हाल श्री महाराज के मुख से सुनकर अर्ज़ किया कि महाराज आप क्या चिंता करते हैं माहरा वग़ैरा का काम हम स्त्रीलोग अच्छी तरह जानती हैं, अभी उस फ़हरिस्त के अनुकूल सामान लेकर मैं आपके साथ चलती हूं ।

तथा हि सब सामग्री माहिरे की उस फहरिस्त से भी बहुत ज्यादा लेकर जुगल सरकार उसी झोंपड़ी में जहां नर्सीजी ठहरे हुयेथे प्रकट होगये और श्री द्वारकानाथ महाराज ने समधी को अपने हाथ से पोशाक पहनाई और महारानीजी ने समधन से मिलकर उनको जोड़ा पहनाया फिर हर एक मर्द व औरत बालक बच्चे यहां तक कि उस नगर के सारे निवासियों को कपड़े पहनाये और दो ईंटें सुवर्ण की और रत्नोंका थाल समधन की नज़र किया ।

इसी प्रकार के हज़ारों मौकों पर आप भक्तों के लिये

प्रकट होते हैं, इतना फरमाने पर सुमति और सारे समाज को अतिही आनन्द आया, प्रेमका समुद्र उमंग उठा, गुरु नानक जी भी प्रेमके समुद्र में गोते खाने लगे और सब समाजी नेत्रों से आंसू बहाने लगे ।

उसी क्षणमें श्री दादूदयालजी खड़े होकर यह अमृत वाणी प्रेम रसमें सानी अपनी जवान से फ़रमाने लगे ।

॥ श्रीदादूजी महाराजकी वाणी ॥

॥ दोहा ॥

पीव पुकारे विरहनी, निस दिन रहे उदास ।
राम राम दादू कहे, ताला वेली प्यास ॥
विरहन दुख कासों कहे, कासों दे सन्देस ।
पन्थ निहारे पीवका, बिरहन पलटे केस ॥
विरहन रोवे रात दिन, झुरवे मनही माहिं ।
दादू अवसर चलगया, प्रीतम पाये नाहिं ॥
ज्योंचातक चित जलवसे, ज्यों पानीबिनमीन ।
जैसे चन्द्र चकोर त्यों, दादू हरिसों लीन ॥

इतना कहते २ दादूजी का कन्ठ गद गद होगया, आगे कुछभी शब्द जवान से न कह सके, अनुराक्ति देविके अनुराग की हालत तो वयान में नहीं आती वो विरह में तड़प तड़प कर नेहनीर बरसाती है ।

स्वामी चरन्दासजी महात्माने जब यह हालत प्रेमियों की देखी तो आपभी प्रेमकी मस्ती में कुछ फ़रमाने को

तैयार हुये परन्तु अनुरक्तिदेवी ने महात्मा सत्य संकल्पजी से विनय पूर्वक निवेदन किया कि इन महात्माजी का कुछ जीवन चरित्र आप कृपाकरके सुमति सेठानी को सुनावें और इसके बाद यह महात्माजी फ़रमावें तो सुमति को विदित होजावे कि इन्होंने श्री वृन्दावन विहारी की साक्षात झांकी करके निकुन्ज की बाग बहारी और रासलीला की चमत्कारी निहारी है, और प्रेमलक्षणा भक्ति की महिमां विस्तारी है, इस पर महात्मा सत्य संकल्पजी फ़रमाने लगे।

महात्मा सत्यसङ्कल्पजी देखो! सुमति!! पुत्री!!! यह महात्मा केवल प्रेमी ही नहीं हैं इन्होंने गुरु शुकदेवजी महाराज की कृपा से योगसिद्धि और तत्वज्ञान सरोदय आदि विद्या की निधि बाल अवस्था में प्राप्त करके सबसे आला दर्जेकी दौलत प्रेमलक्षणा भक्ति पाई और हज़ारों मनुष्यों को प्रिया प्रीतम के मिलने की राह बतलाई और प्रेमियों को युगल सरकार की झांकी कराई, इनका जीवन धन्य और परम सुखदाई है।

सुमति श्री महाराज! कुछ इन महात्माजी का प्रिया प्रीतम से मिलने और रासविहार की झांकी का वृत्तान्त कृपा करके और सुना दीजिये।

महात्मा सुनो! एक भक्त ने इस विषय में यों वर्णन किया है।

(नज़्म)

बृन्दावन आये सफ़र करते करते * वहां आगये वो विचरते विचरते ॥
कहा देखकर यह अजब सरजमीं है * झुका जिसके सिजदे में चर्खे बरीं है ॥
सरापा लताफ़त हैं सब कुञ्ज गलियां * दिखाती हैं घनश्यामकी रङ्गरलियां ॥
पसन्द आई वो कुञ्ज सेवाहै जिसमें * गुसांई ने रक्खा क़दम अपना उसमें ॥
इसी पर थे शैदा इसी पर थे मफ़तूँ * सुनाहै जो कुछ अपनी आंखोंसे देखूँ ॥
पुजारीकी आंखोंसे छिपकर रह वो * नज़रही न आये तो फिर क्याकहै वो ॥
न देखा किसी को तो बाहरवो आया * लगाया सरे शाम ताला लगाया ॥
तब आये चरन्दास बारह दरी में * लगाये हुयें ध्यान अपना हरी में ॥
श्री बृजराज अपने सन्तों के प्यारे * गये जान महिमान आये हमारे ॥
गई रात आधी तो आकर अचानक * युगलरूप अपना दिखाकर अचानक ॥
किये अपने शैदाके अरमान पूरे * रखे अपने महिमान के मान पूरे ॥
दिखाया यह जोश अबदिली आरजूने * चरन्दास दौड़े चरन उनके छूने ॥
लगाकर गले उनको घनश्याम प्यारे * लगे कहने हो अंश तुमतो हमारे ॥
तुम अब जाओ दुनियामें भक्तिबिढाओ * जो गुमराह हैं राहपर उनको लाओ ॥
यह सुनकर हुये अश्क आंखोंसे जारी * कहा थाम कर दिल बसद बेक़रारी ॥
बमुश्किल हुये हैं यह दीदार मुझको * बमुश्किल मिलाहै यह दरबार मुझको ॥
नहीं है नहीं अबतो फ़ुरक़त गवारा * नहीं अब तो सब्रो तहम्मुलकी यारा ॥
रखो साथ अपने रखो पास हरदम * चरन में रहै यह चरन्दास हरदम ॥
जो प्यारे ने पाया ये प्रेम उनका ऐसा * कहा हम करेंगे कहा तुमने जैसा ॥
मगर अब करो तुमभी कहना हमारा * करो और कुछदिन जुदाई गवारा ॥
रहे रास्त पर तुम ज़माने को लाओ * ज़माने में भक्ती का डण्का बजाओ ॥
जुदाईका खटका न अब दिलमें लाओ * करो ध्यान फ़िल फ़ौर मौजूद पाओ ॥
कहा दस्त बस्ता बजा है बजा है * मुझे इस से इनकार क्यों कर रवा है ॥
मगर एक यह अर्ज़ मंजूर हो अब * तो दिल से मेरे फ़िक्र सबदूर हो अब ॥
वो निजधाम अपना रंगीं दिखाओ * वहां की मुझे रासलीला दिखाओ ॥
किया श्याम सुन्दर ने मंजूर दिलसे * किया अपने प्यारेको मशकूर दिलसे ॥

करो बन्द आंखें करो और खोलो * यहां देरही क्या है जी चाहे सो लो ॥
वहां सब दिखाने थे मन्जूर जल्वे * नज़र आये--नूरन अलानूर जल्वे ॥
ज़मीं है कि फ़र्शे ज़मुर्रद अमोला * फ़लक या जड़ाऊ है गुंबः का गोला ॥
अजब है ज़मीं और अजब आस्मां है * निराला है आलम निराला समां है ॥
न सर्दीमें सर्दी न गर्मीमें गर्मी * न सख्तीमें सख्ती न नर्मी में नर्मी ॥
दुनफ़ां मुजल्ला मुसफ़्फ़ा वो नहरें * कि लेताहै आबे हयात उसमें लहरें ॥
बहुत खुशनुमा फूल हर रङ्ग के हैं * शजर भी वहां कुछ नये ढङ्ग के हैं ॥
अजब दिलकशी उस मुकामे फ़िज़ामें * अजब है दिला बेज़ खुशबू हवा में ॥
वहां एक चौंसठ सितूनों का ऐवां * मलायकहों और देवता जिसपे कुर्बां ॥
उस ऐवान में इक जड़ाऊ सिंहासन * बिछाजिसपेकुदरतीहीकुदरतकाआसन
जुगल रूप सरकार उसपर विराजे * सुहाने थे सखियों के राग और बाजे ॥
खड़ी सामने नृत्य करतीथीं सखियां * लड़ाती थीं मुरलीमनोहर से अंखियां
चरन्दास ने भी सखी रूप पाया * तो सरकार ने पास अपने बिठाया ॥
दिखाने लगे दास को अपने जौहर * उठे रास करने को मुरलीमनोहर ॥
उठीं राधिका दाहिने हाथ आईं * चरन्दास प्यारी सखी को भी लाईं ॥
लगी लेने वो भांवरी साथ उन के * अदा से लिये हाथ में हाथ उन के ॥
वोसखियोंहीं सखियोंकाथा पासमंडल * दिखाया यह आनंदका रासमंडल ॥
है किसको नसीब ऐसा गाना बजाना * अजब लुत्फ़का नाचना और नचाना
मनोहर मनोहर वो लीला दिखाई * कभी देखने में न आयें न आई ॥
दिखाकर यह लीला सुनाकर वो बाजे * सिंहासन पे सरकार फिर आविराजे
कहा होके खुश क्यों चरन्दास प्यारे * हुयेखुश कहो देखकर रास प्यारे ॥
किया अर्ज़ देखा समां मैंने अद्भुत * कहां मेरी ताकत करूं मैं जो अस्तुत ॥
कहा अपनी आंखोंको अब बंद करलो * जो देखा यही ध्यान में अपनेधरलो ॥
करो तुमभी लोगों से भक्ती कराओ * तरो तुमभी डूबे हुओं को तराओ ॥
बहुत जल्द आवोगे फिर पास मेरे * सदा पास हो तुम चरन्दास मेरे ॥
जुदाहमको अपनेसे हरगिज़ न जानो * यकीं करके मानो यकीं करके मानो ॥
सरो चश्म पर दास यह हुक्म धरके * खड़े होगये बन्द आंखों को करके ॥
खुली आंख जब रूप अगला ही पाया * नज़र बृज में आके बंसीवट आया ॥

जब इन महात्माजी ने अपने को वन्सीवट पर पाया तो उस प्रिया प्रीतम के रूप अनूप के दुबारा दरस परस की चाह में विरहने आ सताया, दिल उनका ऐसा घबराया कि क़यामत का समा दिखाया उस समय की विरहकी हालत बयानमें कैसे आसक्ती है, वोही कहसक्ता है कि जिसको प्राप्त प्रेमलक्षणा भक्तिहो और जिसको परमात्मा में पूरण आसक्ति हो ।

उसका वर्णन और किसी से कब कियाजावे, वोही कहें जिसने प्यारे के इश्क़ में प्राण दियाजावे ।

इतना कहकर महात्मा सत्यसंकल्पजी चुप होजाते हैं, और महात्मा चरन्दासजी खड़े होकर यों फ़रमाते हैं ।

॥ महात्मा चरन्दासजी की बाणी ॥

* दोहा *

हृदय माहीं प्रेमजो, नयनों झलके आय ।
सोई छका हरिरस पगा, वा पग परसूं धाय ॥ १ ॥
गद गद बाणी कण्ठ में,, आंसू टपकै नैन ।
वो तो विरहन राम की, तलफत है दिन रैन ॥ २ ॥
हाय हाय हरि कब मिलें, छाती फाटी जाय ।
ऐसा दिन कब होयगा, दर्शन करें अघाय ॥ ३ ॥
बिन दर्शन कल ना पड़े, मनवा धरै न धीर ।
चरन्दास की श्याम बिन, कौन मिटावे पीर ॥ ४ ॥
पीव बिना ना जीवना, जग में भारीजान ।
पिया मिले तो जीवना, नहीं तो छूटै प्रान ॥ ५ ॥
मुख पीरो सूखे अधर, आंखें खरी उदास ।
आहहु निकसे दुख भरी, गहरे लेत उसास ॥ ६ ॥

वो बिरहनि बौरी भई, जानत ना कछु भेद ।
अग्नि बरी हियरा जरे, भये कलेजे छेद ॥ ७ ॥
आपने बस वो ना रही, फसी विरह के जाल ।
चरनदास रोवत रहे, सुमरि सुमरि नँदलाल ॥ ८ ॥

इतना कहकर महात्मा चरन्दासजी विरह में डूबगये और उनकी वाणी ने ऐसा असर किया कि सारे समाजी ज़ार २ रोने लगे, अनुरक्तिदेवी प्रेममें मगन होकर नाचने लगी तब सुमति ने हाथजोड़ कर अनुरक्तिदेवी से प्रश्नकिया।

सुमति–देवीजी ! चरन्दासजी महाराज को जिस-प्रकार प्रिया प्रीतम ने दर्शन दिये और उनके मनोरथ पूरण किये वैसे इस समय और भी किसी को भगवान् प्रत्यक्ष हुये हैं ।

अनुरक्ति–सेठानीजी ! एक दो नहीं सैकड़ों हजारों भक्तों के लिये श्रीकृष्ण भगवान् और राधिकाजी महारानी तथा रुक्मिणीजी महारानी ने प्रत्यक्ष होकर उनके मनोरथों को पूरण किया है, एक महात्मा का चरित्र मैं तुम्हैं सुनाती और सच्चे प्रेम का फल दर्साती हूं ।

॥ महात्मा तुकारामजी ॥

यह महात्माक़ोम के महाजन पूना के समीप एक देहु ग्राम के निवासी थे, उनके बड़ों के समय से किराने की दुकान जारी थी, पहिलेतो काम अच्छा चलता रहा, परन्तु जब से स्वयं तुकारामजी ने कार्य आरम्भ किया दिन प्रति दिन टोटा रहने लगा क़ारण यह कि ।

प्रथमतो तुकारामजी झूंठ नहीं बोलते थे, जिस भाव माल दिसावर से मंगाते उसी भावपर बेचदेते थे, दूसरे दीन

कंगालों को विना मोल लिये देदेते थे, और जिन लोगों को उधार देते थे, उनसे तक़ाज़ा नहीं करते थे परिणाम यहहुवा कि दुकान टूटगई और तुकारामजी दरिद्री होगये परन्तु वो परमात्मा के भक्त थे इसवात से अतिही प्रसन्नहुये, और परमात्मा को धन्यवाद देनेलगे, एक छन्द उस समय उन्हों ने रचा जिसका अर्थ यह था।

हे भगवान्! आपने वड़ी कृपाकरी जो मेरी सम्पदा हरी सुख सम्पति में आप याद नहीं आते, प्राणी विषयभोग में फँसजाते, आप के चरणों में चित्त नहीं लगाते हैं, और आपतकाल में आप का स्मरण वारम्वार वनि आता ध्यान सहजमें हीं आप में लगजाता और चित्त दूसरी ठोर नहीं जाता है, मैं आप को धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझ को अपना वनाने के वास्ते यह उपाय किया कि मुझे माया मोह में नहीं फंसने दिया।

इसके उपरान्त इन को स्त्री ऐसी कुटिल और दुष्टा मिली कि हरदम लड़ती झगड़ती और भूतनी की तरह महात्मा के पीछे पड़ती थी, इनको भजन से प्यार उसको भगवत् नाम से पूरी घृणा थी, वो वारम्वार कहाकरती कि वाहर जाओ धन कमा कर लाओ वढिया वस्त्र और भूषण वनाओ, यह उसकी वातों पर कुछ भी ध्यान न देकर हरि= भजन में लगे रहते और उसकी कठोर वाणी को सहते थे।

दिल से इस वात का भी धन्यवाद परमात्माको देते थे कि आप ने वहुत अच्छा किया जो ऐसी स्त्री मुझे दी, यदि आज्ञाकारी प्यारी स्त्री होती तो मेरा दिल उस में अवश्य फंसता, और केवल आपके चरणोंमें ही न अटकता

संसार में रहकर भी यह भक्तजी जगत से विरक्त और हरि भजन में अनुरक्त थे सचकहा है ।

॥ दोहा ॥

घरके घूमर घेरमें रामचरण लौलीन ।
तुलसी ऐसे सन्तको क्या करवा कोपीन ॥

इनकी दिनदूनी पलक सवाई लौ परमात्मा में बढ़ने लगी, जब यह हरिकीर्तन करते तो प्रेमका ऐसा प्रवाह जारी होजाता कि बेसुध होजाते और श्रोतालोग भी प्रेम में विह्वल होजाते थे, विरह दशामें कई २ रातें रोते और जागते बीतजाती थीं, जैसी प्रेमकी बाणी महात्माओं ने सुनाई इसीके अनुसार तुकारामजी की दशा होजाती थी ।

अनुरक्तिदेवी इसके आगेका हाल कहना चाहती थी कि महात्मा रामसनेही स्वामी रामचरणदासजी के दिलमें बड़ीभारी उमंग और प्रेमकी तरंग उठी जो अपने आसन से उठकर फरमाने लगे ।

॥ दोहा ॥

ज्यों चातक घनको जपे शशिको जपे चकोर ।
रामचरन रामहि जपै जैसे पंथी भोर ॥
सीप जपे रति स्वांतको आरत बन्ती पीव ।
रामचरण रामहि जपे तुमबिन तलफे जीव ॥
रैनदिवस तलफत रहे रामवैद्य तुम आव ।
रामचरण बाढ़ी बिरह कियो कलेजे घाव ॥
कोयल चाहे विविधबन मोरा पावस ऋत्त ।
रामचरन यों बिरहनी चहे रमैया मित्त ॥

विरह अग्नि अपटी अधिक डपती रहती नाहिं ।
रोम रोम पर जलरही रामचरन तन माहिं ॥
रामचरन ब्रहरोग की पीर न जाने कोय ।
कै विरहन का पीतमा कै जाघट लागी होय ॥
दुखी तुमारे दरसविन तुम क्यों रहे लुकाय ।
कै दर्सो कै तनतजूं तुमविन रह्यो न जाय ॥
विरहअग्नि जव परजुली करम होगया छार ।
फुंस कजोड़ा जलगया रह्या सारही सार ॥
रामचरन ई विरहकी महीमा कहीन जाय ।
भरम करम सव दग्धकर दिया पीवपिछनाय ॥
कर्मछार सव वहगये आई प्रेम हिलूर ।
रामचरन अव दरसिया तनमें उज्जल नूर ॥

रामचरनजी इतना फरमाकर प्रेमसे गद गद होगये और सुरतरामजी फरमाने लगे ।

॥ दोहा ॥

नयनां झरना झरत हैं विरहन आठों जाम ।
सुरतराम सांची कहै दर्सोगे कव राम ॥
निशिदिन रहे पुकारती पलभर रहती नाय ।
सुरतराम विरहन तने खवर लीजियो आय ॥
मनलागे भागे भरम करम रहै नहीं कोय ।
सुरतराम यह विरहका लक्षण कहिये सोय ॥
कन्थ पधारो महल में है आनन्द अनन्त ।
सुरतराम सांची कहै कहैं यही सव सन्त ॥
सुरत मिलाई पीवसों सबसों हुये निसंक ।
सुरतराम सांची कहे तोड़ जगत की शंक ॥

तुरतरामजी प्रेमकी मस्ती में चूर होकर विराजगये, और अनुरक्तिदेवी ने उसी महात्मा तुकारामजी का हाल कहना आरंभ करदिया ।

अनुरक्ति—सुमतिजी ! तुमने देखा इस समय जो दशा इन दोनो महात्माओं की होगई और उन्हों ने प्रेमकी वाणी में अद्वितीय रस बरसाया यहही हालत तुकारामजी की होजाती थी ।

एकदिन स्वप्न में तुकारामजी को दर्शन हुये कि श्री जगवन्दन वसुदेवनंदन श्रीनामदेवजी भक्तका हाथ पकड़े हुये सामने आये और फ़रमाने लगे कि तुकाराम तुम नामदेवजी के ढंगपर हरिकीर्तन के भजन बनाओ और जगत में भक्तिरस फैलाओ तुम्हारे में यह सामर्थ होगई है कि पतित और नीच जीवों को मेरी समान उद्धार करसक्ते हो, मैं तुम्हें वहुत प्यारकरता और तुम्हारे साथ हरदम रहता हूं, तुम मेरी भक्तिका प्रचार कररहे हो, इसका ऋणिया अपने को मानता हूं, उस दिनसे तुकारामजी ने भगवत् आज्ञाके अनुसार भजन बनाने आरंभ करदिये, हरिकीर्तन के हजारों पदरचे और सैकड़ों का उद्धार करदिया ।

एकदिन तुकारामजी गाऊंके बाहिर जारहे थे, मार्गमें एक खेत आया जिसमें चिड़ीयां और कबूतर आदि पक्षी अन्नके दाने चुग रहे थे ।

पक्षी इनको देखकर उड़गये, इसपर इनको वहुत सोच हुवा और चिन्ता करने लगे कि मेरे शरीरसे सैकड़ों जीवों को दुख पहुंचा, निदान यह यत्नकिया कि बखेरे हुये दानों

को इकठ्ठा करके आप प्राण बायू को ब्रह्मांड में चढ़ाकर चित्त लेटगये और वो दाने अपने शरीर के ऊपर और इधर उधर बखेर लिये।

पक्षियों को मालूम हुवा कि कोई मुरदा पड़ा है उन में से एक दो समीप आकर दाने चुगने लगे, फिर दोचार और आगये, जब आधाघन्टा वीतगया तो सारे पक्षी जो उड़गये थे उलटे आकर उस शरीर को मुर्दा समझकर देहके ऊपर के दानेभी बेखटके खानेलगे यहांतक कि इनके होटों के बीचमें सेभी पक्षियों ने दाने चुगलिये, यद्यपि उनके पंजों से शरीर में फड़ फड़ी आने की तैयारी होगई तथापि भगवत् नाम जपने में दिलको लगाये रहे और देहको हिलने न दिया जब एकघन्टा गुजरगया और धूपकी तेजी से शरीर बहुत व्याकुल होगया तोभी उसकाल तक उस कष्ट को सहन कर के भी पड़े रहे, तबतक कुलदाने चुगकर वो परन्दे उड़गये।

नितान्त इनको दूसरे किसी जीवका दुख सहन नहीं होताथा और कुल जीवों को परमात्मा का अंश मानकर उनमें प्रेम रखते थे।

(यहही महात्माओं का लक्षण है)

एकदिन इनकी स्त्री जिसका नाम जेजाबाई था महात्माजी को तंग कररही थी कि मनको कमाई की तरफ लगाना चाहिये, यह समझा रहे थे कि मन ईश्वर परमात्मा में लगाने की वस्तु है. संसारी तुच्छ पदार्थों में नहीं लगाना चाहिये, इसी समे में भूकप्यास से व्याकुल बच्चे सामने आकर रोने लगे, परन्तु घरमें कोई चीज नहीं रही थी

जिसको बेचकर नाज लायाजावें, कलही एकसाड़ी बेचकर जेजाबाई ने अपने बच्चों को खिलाया था, इसी औसर पर श्रीमहारानी रुक्मिणीजी ने अपने भक्तकी परीक्षा लेने के अर्थ एक कंगाल महरी का रूप बनाकर तुकारामजी के पास आकर विलाप करके कहा कि थोड़ासा कपड़ा दो, महात्माजी को दया आगई अन्दर जाकर अपनी स्त्रीका पहनाहुवा कपड़ा पड़ा देखकर उसमें से टुकड़ा फाड़कर महरी को देकर विदाकिया, जेजाबाई उस समे तो कुछ न बोली परन्तु थोड़ी देर के बाद बच्चों को भूख प्यास से घबराते और पुकारते हुये देखकर क्रोधसे लालहोगई और मारे क्रोध के आपे से बाहिर होकर अपने पतिको बहुत सी गालियाँ सुनाईं, परन्तु महात्मा सुनी अनसुनी करके भजनही में लगेरहे, अब जेजाबाई ने यह बात सोची कि मेरे पतिका मन हरदम इष्टदेव की सेवा और भजन में लगा रहता है, इसलिये ठाकुरजीकाही काम तमाम करदिया जावे तो उत्तम होगा, ऐसा विचार करके उसने बड़ाभारी पत्थर हाथ में लिया और अपने पतिसे अपनी इच्छा भी प्रकट करदी कि ठाकुरकी मूरत खंडित करती हूं, यह बात सुनकर भक्तजी के होश उड़गये और स्त्री को समझाने लगे परन्तु वो कब मानती थी, पत्थर लेकर मन्दिर के अन्दर प्रविष्ट होगई और यहभी पीछे २ भागे और इतने व्याकुल थे कि तड़फ कर प्राण देनेको तैयार होगए।

उधर महारानी श्रीरुक्मिणीजी को चिन्ता उत्पन्न होगई कि यदि मूरत खंडित होगई तो हमारा भक्त तुरन्त प्राण छोड़देगा, इन्हों ने साक्षात् लक्ष्मी रूपसे मन्दिर में प्रकट

होकर मन्दिर के किवाड़ वन्दकर लिये।

उधर महात्मा को दरवाज़ा मन्दिरका वन्द होजाने और अपने वाहिर रहजाने का और भी क्रोध वढ़गया।

(अव अन्दर का हाल सुनिये)

महारानी ने जेजाबाई से पूछा कि क्या करती हो, उसने जवाव दिया कि ठाकुरजी की मूरत को खँडित करती हूं, क्या करूँ बालबच्चे भूकों मरते हैं, स्वामी मेरे इनकी ही सेवामें रातदिन लगे रहते हैं और कमाई नहीं करते हैं।

महारानी बोली कि यदि मूरत खंडित किये विनाही तुम्हारा मनोरथ पूरा हो जावेतौ क्यों ऐसा करती हौ।

इस बात को सुनकर जेजाबाई रुकगई और देखने लगी कि मंदिर में यह नूरानी सूरत लक्ष्मीमूरत कहां से आई, वोह इसी तरह अचम्बे में खड़ी थी कि महारानीजी ने एक बहुत बढ़िया रेशमीसाड़ी और एक ऊमदा चोली जेजाबाई को पहनाई और उस की गोद में इतनी अशरफियाँ डालदीं कि सारीउम्र को काफ़ीहोजावें अब तो जेजाबाई अति-प्रसन्न होगई और महारानी को प्रणामकिया, महारानीजी ने फ़रमाया कि अपने घरजाओ और हमारे भक्तजी को कदाचित भी न सताना, और महाराणी वहीं अन्तर्धान होगईं।

तुकारामजी ने यह हाल सुनकर आनन्द मनाने के स्थान में शोक किया कि प्रथम तो माताजी ने मुझे दर्शन क्यों नहीं दिये, दूसरे मेरे निमित्त उनको इतना कष्ट उठाना पड़ा।

और फिर अपने काममें लगगये, अभंग भजन रचना करके उन्हों ने हज़ारों मनुष्यों को तारदिया।

कहो सुमति ! ऐसे कृपालु दयालु परमात्मा भक्तहित-कारी में क्योंकर प्रेम नहो, इस समय जो महात्माओं ने वचनों का अमृत पिलाया है उससे यह सिखलाया है कि इस कृपासिन्धु दीनबन्धु अनाथ सहायक सवसुख दायक परम हितकारी मुरारि में इस दर्जेका प्रेमहोना चाहिये।

जव ऐसा प्रेम मनुष्यका परमात्मा के साथ होजावे तो वो दूर कहां हैं परमात्मा तो प्रेमियों के पीछे पीछे फिरता है।

सुमति—अनुरक्ति महारानीजी आपने कही जो बानी वो मेरे मनने मानी, परंतु एक सन्देह और उत्पन्न होगया जिसने पैदाकरदी बड़ी हैरानी, वो यह है कि स्वामी चरन्दासजी महाराज को जो कृष्ण भगवान् ने दर्शन दिये वो राधिका महारानी के साथ वृन्दावन में दिये, और नर्सी भक्त और तुकारामजी को महारानी रुक्मिणी के साथ द्वारकाधीशजी के रूपमें कृतार्थ किया, यह क्या बात है ? क्या वृन्दावन वाले श्रीकृष्ण और हैं और द्वारकाजी वाले दूसरे हैं, यदि एकहि हैं तो यह भेद क्यों हुवा ! और जो पृथक २ हैं तो क्या परमेश्वर परमात्मा भी कई हैं।

अनुरक्ति—इस प्रश्न का उत्तर तो महात्मा सत्यसंकल्पजी ही अच्छा देंगे मैं भी प्रार्थना करती हूं।

सुमति और अनुरक्ति दोनों मिलकर महात्मा सत्यसंकल्पजी से प्रार्थना करती हैं; महात्माजी उत्तर देते हैं।

महात्माजी—सुनो सुमति, परमात्मा दो चार दस वीस नहीं एकही है उनको भक्तलोग जिसरूप से ध्यान और स्मरण करते हैं उसी रूपसे दर्शन देकर रक्षा करते हैं, गीताजी में श्रीभगवान् ने फ़रमाया है।

(ये यथामां प्रपद्यन्तेतांस्तथैव भजाम्यहम्)

कि मुझको जो कोई जिसभाव से भजता है मैं उसी भाव से प्राप्त होता हूं।

वोही परमात्मा अपने भक्त प्रहलाद के निमित्त नरसिंहरूप से प्रकट हुवा, वहुत से सन्त उसकी नरसिंहरूप से सेवाकरते और प्रत्यक्ष फलपाते हैं।

वोही परमात्मा परशुरामजी के रूपमें प्रकट हुवा, इसीने चक्रवर्त्ति अवधनरेश दशरथ महाराज के घरमें प्रकट होकर धर्मकी मर्यादका पालन और रावणआदि दुष्ट पापात्मा राक्षसों का दमन करके धर्मका पुल बांधदिया, हजारों लाखों मनुष्य उनके भजन स्मरण से जीवन सफल करके जब प्रेममें मगन होजाते हैं तो उनके प्रत्यक्ष दर्शन पाते हैं।

इसी प्रकार से पूरण परमेश्वर पुरुषोत्तम दयानिधान करुणाखान श्रीकृष्ण भगवान् ने इसरूप से प्रेमको प्रधान रखकर नानाप्रकार की लीला दिखलाकर भक्तों को परमानन्द दान दिया।

व्रजमें वाल लीला और रासविलास का सुखदिया, मथुरापुरी में कुछ दिनों कंसवध करके वहां के निवासियों को कृतार्थ किया, फिर समुद्रके किनारे द्वारकापुरी वसाकर किरोड़ों भक्तों को तारदिया, उनको जिसरूप से जिसभक्त ने यादकिया उसी स्वरुप से दर्शन दिया।

चरनदासजी महाराज ने व्रज की रासलीला देखने की इच्छा की उनको उसही रूपसे झांकीदी।

और नर्सीजी को पहिले रासलीला दिखलाई ही थी;

बादको उन्हों ने इसकारण से कि द्वारकापुरी का जूनागढ से इतना अन्तर नहीं है जितना ब्रजसे है, श्रीद्वारकाधीश महाराज और महारानी रुक्मिणीजी का सुमरणकिया तो हुंडी सिखारने और माहिरा देनेके समय उनको श्रीद्वारकाधीश महाराज के रूपमें दर्शन देकर निहाल करदिया।

इसी भांत भक्त तुकारामजी को श्रीकृष्ण द्वारकानाथ के स्वरूप में प्रेम था तो उनको रुक्मिणीजी के द्वारा लाभ हुवा, इसमें सन्देह का अवसर ही क्या है वो परमात्मा हरजगह भक्तों की सहायता के लिये तैयार खड़ा है।

सुमति! तुझको ही क्या बड़े २ ऋषियों और देवताओं को इस विषेमें सन्देह हुवा है।

एकबार नारद महर्षिको यह ही सन्देह हुवाथा कि सोलह हज़ार एकसो आठ रानियों के साथ अकेले श्रीकृष्ण भगवान् क्योंकर रहते होंगे।

यदि एक २ दिन एकरानी के पास बारीसे जावें तो हरएक रानीकी बारी कई बर्सों के पीछें आती होगीं।

ऐसा विचार करके परीक्षा के निमित्त श्रीनारदजी द्वारकापुरी में पहुंचे और हरएक रानी के न्यारे न्यारे महल देखकर और भी अचरज करने लगे, इनका किसी जनाने महल में परदा तो थाही नहीं न किसी प्रकार की रोकटोक थी, तुरन्तही सबसे पहिले महारानी श्रीरुक्मिणीजी के महल में प्रविष्ट होगये, वहां जाकर क्या देखा कि श्रीभगवान्‌पलंगपर आराम कररहे हैं और रुक्मिणीजी चरण सेवा कररही हैं।

नारद मुनि को देखकर आप झटही खड़े होगये, और मर्यादा अनुसार श्रीनारदजी का पूजन सत्कार करके उनको

ऊंचे सिंहासन पर बिराजमान कराया और बातचीत करके विदा किया।

फिर नारदजी ने सत्यभामाजी के महल में जाकर देखा तो वहां आपको स्नान ध्यान करते हुये पाया।

फिर जाम्बवती नाग्नजिती इत्यादि महारानियों के महलों में जाकर कहीं देखा कि आपकोई राजकाज कर रहे हैं, कहीं बालबच्चों को खिलाते हुये, कहीं चौसर खेलते हुये, कहीं उपदेश करते हुये, कहीं सवारीकी तैयारी में दत्त चित्त, कहीं कुछ कहीं कुछ करते कराते पाये।

अबतो नारदजी अत्यन्त लज्जित होकर पछताने लगे कि मैंने भगवान् के प्रभावको न जानकर क्यों परीक्षाली।

यहभी निश्चय होचुका है कि रासके समय आपने हजारों रूपधारण करके हरएक गोपी के साथ नृत्य विहार किया था, और ब्रह्माजी जब बछड़े और ग्वालबालों को चुराकर लेगयेथे तो सालभरतक आपने बछड़ों और ग्वालों का रूप बनारक्खा, एसा कि बछड़ों की माताओं और ग्वालों की माओं तक को पहचान नहीं हुई कि यह अस्ली बछड़े ग्वालबाल हैं या बनावटी हैं, इसलिये कहा है कि—

(अनेक रूपरूपाय बिष्णवे प्रभ बिष्णवे)

यहीं तक नहीं पूरे महात्माओं को सारी सृष्टि में हरएक शरीर में भगवान् नज़र आते हैं।

गीता में भगवान् ने फ़रमाया है कि जो मुझे सब जगह देखता है और सबको मुझमें देखता है उससे मैं कभी दूर नहीं होता, न वो मुझसे भिन्न है।

योमां पश्यति सर्वत्र सर्वंच मयि पश्यति ।
तस्याऽहं न प्रणश्यामि सचमे न प्रणश्यति ॥

अब कहो सुमति तेरा सन्देह निवृत्त हुवा या नहीं ।

सुमति—हां महाराज यह संदेह मेरा निवृत्त होगया अब और महात्माओं की बाणी सुनवाइये

महात्मा—देखो पुत्री आज प्रभात समय से अब तक सत्सङ्ग में चार पहर बीत गये, तुम लोगों को न भोजन प्रसाद की सुध रही न हमसे मध्यान्ह संध्या बनी, और यह सब महात्मा लोग भी प्रेममें तन बदन की सुध भूले हुये हैं, आज तो इतना सत्सङ्ग होचुका है कि चिरकाल में भी प्राप्त नहीं होसकता, अब कल हम प्रभात के समय आवेंगे और सब सन्तमहात्मा पधार कर अमृतवाणी सुनावेंगे ।

चौथा सत्सङ्ग समाप्त होता है, अनुरक्तिदेवी यह पद गाती हुई विदा होती है और सारे महात्मा अपने अपने स्थानों को पधारते हैं ।

॥ पद ॥

(परदेसी ढोला नयना लगाय दुख देगयो । इसके वज़न पर)

रँगभीनो कान्हा मन हरलीनो भई बावरी ॥ रँगभीनो० ॥
हेरत फिरूं गिरूं धरनी पर, हरि हरि करूं पुकार,
दीदार दिखलावरी ॥ रँगभीनो० ॥
तीखे नयन बाण हिय सालत, व्याकुल जिया अकुलाय,
उपाय बतलावरी ॥ रँगभीनो० ॥
सुनो सयानी राधे रानी, रस बस तुम्हरे गुमानी,
मनाय इत लावरी ॥ रँगभीनो० ॥

हूँ गुण हीन दीन दुखियारी, अतिही कठिन मलीन,
कृपासे अपनावरी ॥ रँगभीनो० ॥
देश कहै मथुरेश दयालू, प्रभुको बिरद लजाय,
जताय समझावरी ॥ रँगभीनोकान्हामनहरलीनोभईबावरी ॥

॥ विचित्र रात्री ॥

चौथा सत्सङ्ग समाप्त होने के बाद सेठ जीवाराम और सुमति सेठानी भोजन प्रसाद करके जब आराम करने को गये तो सुमति को फिर स्वप्न दीखा, क्या देखती है कि वोही कलिराज महाराज सर पर सोने का ताज रखे हुये सिंहासन पर विराज रहे हैं, शाही दरबार बड़ी शान से होरहा है, परन्तु ६ छे मुसाहिबों की जगह आज केवल पांच मुसाहिब हाज़िर हैं, छटे मुसाहिब जो सब से बड़े कामदेवजी थे आज उनकी जगह खाली है और यह बात चीत होरही है।

महाराजा—अरे चोवदार कहां है चुगलचन्द सूचकों का सरदार।

चोवदार—श्रीहुजूर अभी हाज़िर लाता हूं।

चोवदार जाता है और तुरन्त चुगलचन्द अफ़सर महक्मे ख़बर को साथ लाता है, चुगलचन्द सर झुका कर प्रणाम करके सामने आता है।

महाराजा—क्योंरे ख़बरखबरदार तू किस सबब से हो रहा है अचेत और बेकार, कहां है कामदेव सरदार, क्या हुआ उसका अंजामकार, परचा ख़बर देनेमें क्योंभई अँवार।

चुगलचन्द—हुज़ूर! मैं अभी पर्चाख़बर ख़िदमतमें हाज़िर लानेको था तैयार, इतने में पहुंच गया हुजूरी चोवदार, लीजिये, पूरी ख़बर सुनलीजिये।

॥ मज़मून पर्चा ख़बर ॥

जिस समय मुसाहिब आला कामदेवजी मौक़े कुसङ्ग पर, जिसको सत्सङ्ग के नाम से जगत् के ठगनेवाले दिल के काले भक्त क्या बगलाभक्त पुकारते हैं, पहुँचे उन्हों ने सेठ जीवारामके नौकर विवेकीराम को अपने तीखे ज़हरीले बाणों से घायल करके उसके दिल पर ऐसा असर पैदा करदिया कि वो अपने मालिकसे हट करने लगा कि उसे घर जाने और उसकी औरत से मिलने की आज्ञा दीजिये, इसी प्रकार सुमति सेठानी की दो दासियां एक स्फूर्ती दूसरी धृति को घायल करके उनको अपने पतियों के पास जल्द पहुंचने को ललचादिया, यहां तक कि कामदेवजी ने अपनी वाणी सत्यकर दिखाई कि विवेकी के विवेक और स्फूर्ती की फुर्ती और धृति की दृढताई धूल में मिलाई ।

परन्तु आगेका हाल अर्ज़ करते हुये लज्जा आती है, और लेखिनी रुकीजाती है, इस पर भी अपना धर्म समझ कर निवेदन कियाजाता है, कि जब कामदेवजी के दो दो हाथ सुमति सेठानी से हुये तो उस ज़नानी सूरत मर्दानी सीरत ने इनको पानी पिला २ कर छोड़ा, जो बहस और दलीलें उसने कीं उनके आगे आप के मुसाहिब आला दुम दबाकर भागे, इनको तीर चलाने तक का वार उसने नहीं आनेदिया, और बातोंही बातों में ऐसा लज्जित किया कि (क़सूर माफ़ हो) कामदेवजी आपके सामने हाज़िर होकर मुँह दिखलाने लायक़ नहीं रहे, यहही सबब है कि वो वहां से आकर कहीं छिपे हुये हैं, हुज़ूर के क़दमों में

हाज़िरी की ताब नहीं रखते, यह हाल बहुत सही पूरा निश्चय करके अर्ज़ किया है, हस्ताक्षर चुग़लचन्द सूचकके।

महाराजा—हैं, हैं, यह क्या हुवा? क्या कामदेवजी एक बनियानी से हारकर मुँह छिपाये हुये हैं? बड़ा भारी चकमा खाये हुये हैं, कहां उनको त्रैलोक्य विजयी होने का दावा था कहां यह फल मिला कि अपने आपे को हारकर मुँह दिखा नहीं सके।

वो औरत अबला नहीं सबला, बल्के कोई बड़ी भारी बला है, उसमें न मालूम क्या कला है जिसने कामदेवजी से महाबली को दला और उसकी बुद्धिको छला है, न जाने कोन पाप उसका फला है, जिसका नतीजा हुवा बरमला है।

अच्छा चुग़लचन्दजी हम तुम्हारी काररवाई से खुश होकर प्रश्न करते हैं कि तुम्हारी नज़र में कोई ऐसा बहादुर है जो उस बनियानी अभिमानी को परेशानी और हैरानी में डालकर क़ैदकरलावे।

चुग़लचन्द—सरकार क्या अर्ज़करूं आपके पांच मुसाहिब क्रोधमल, लोभीराम वग़ैरातो पहिलेही उस सेठ के नौकर बिवेकीराम और दोनों दासियों धृति और स्फुर्ति से हारकर भागआये वोतो उस सेठानी दीवानी, मस्तानी तक पहुंचभी न सके।

अब आपकी राजधानी में और कोई सूरमा ज्ञानी दिखाई नहीं देता जो उस मस्तानी सेठानी को बसमें कर लावे, परन्तु एक उपाय है जिसको यह ताबेदार अर्ज़ नहीं करसका लाचार है क़सूरकी माफ़ी का तलबगार है।

महाराजा—नहीं २ चुग़लचन्दजी तुम कहते हो बहुत सही, तुमसे निहायत ख़ुश है हमारा जी, फ़ौरन् वो बात कहो जो तुम्हारे दिलमें थी।

चुग़लचन्द—महाराज क्या अर्ज़करूं, इस आपके तावेदार के एक कन्या कुमारी है, जिसने चौदह बरसकी उम्रमें सीखली विद्या सारी है, उसमें एक चमत्कारी है कि संसारमें सबको बहुत प्यारी है, चुग़ली उसका नाम है दिलों में असर करजाना उसका काम है, उचित होतो उससे इस मामले में सलाह लीजावे।

महाराजा—हां, हां, जी, तुमने बहुत अच्छी बात कही, पहिले उस कन्या को हमारे पास लाओ, उसकी परीक्षा दिलाओ, फिर इस काम पर उसको भेजना उचित होगा।

चुग़लचन्द—जो हुक्म सरकारका।

यह कहकर रुख़सत होता है और बहुत थोड़ी देरमें अपनी बेटी चुग़लीको साथ लेकर हाज़िर होता है, लीजिये मुलाहिज़ा कीजिये, यह आपकी दासी हाज़िर है।

महाराजा—(उस लड़की को देखकर दिलही दिलमें) अहा! यह तो कोई इन्सान नहीं है परी है, इसमें सुन्दरताई कूट २ कर भरी है, (ज़ाहिरमें) आओ बीबी, बताओ तुम अबतक हमारे दरबारमें क्यों नहीं आई, अब हमारे वास्ते क्या भेट लाई, और कौन २ विद्या तुमने कमाई, सो कहो।

चुग़ली—(हाथजोड़कर निहायत अदब से) अन्नदाता, आप हैं पितामाता, आप ने जब यह दासी याद फ़रमाई, तुरन्त हाज़िर आई, भेट मेरेपास सिवाय इस तन

के और क्या है, वो आपकाही है, क्यों कि आप मेरे पिता के स्वामी और अन्नदाता हैं, विद्या थोड़ी बहुत जो इस दासी ने सीखी है उस की परीक्षा कोई सेवा सुपुर्द करके लीजावे तो सारा नतीजा रोशन होजावे ।

महाराजा—इनदिनों में एक बड़ा भारी काम सर पर सवार है, उस का अंजाम बहुत दुशवार है, तू कुमारी कन्या अगरचे दीखती हुशियार है, तोभी ना तजुर्बेकार है उस का तुझपर ज़ाहिर करना भी असार और बेकार है।

चुग़ली—यह तो अन्नदाताजी को अख़्तियार है फरमायें न फ़रमायें, दासी तो हुक्म उठाने को पूरी तैयार है, जो छोटी अवस्थाही का विचार है, तो मेरी समझ में ये बात बेसार है, पांच बरस के ध्रुवजी का करतब और छोटे से बावन स्वरूप भगवान् की करतूत प्रसिद्ध अपरम्पार है।

देखिये छोटी सी अशरफ़ी के बदले रुपये और पैसे कितने हाथ आजाते हैं, और छोटे हीरे मोती कितनी क़ीमत पाजाते हैं।

बड़े कड़ाही में भूनेजाते हैं, छोटे बहुत आराम और सुख पाते हैं।

महाराजा—ओहो ! चुग़लीबाई तूने बड़ी हिम्मत हमारी बँधाई, अब तू कमर बाँधकर तैयार होजा, हमारा यह काम करके जल्द वापिस आ, एक महाजनी महाजिनी सुमति नामवाली अपनी बुद्धि के बल में मतवाली ऐसी ज़ोरदार है, जिस से कामदेवजी ने भी मानी हार है, उसने एक कुसंग को सत्संग नाम धर के चारदिन से उपद्रव

मचारक्खा है, अपने पतिको भी लूलू बनारक्खा है, तुझ से होसके तो ऐसा जतन कर उस स्थानसे वो सब भागजावें और हमारी शरण आजावें।

चुगली–अन्नदाता, यह कितनीसी बात है, मुझमें कई तरहकी भरी करामात है, अभी जातीहूं और उस रंडा को फन्देमें फँसातीहूं, केवल थोड़ीसी सहायता यह चाहती हूं कि आपके मुसाहिब क्रोधमलजी को आज्ञा देदीजावे कि वो अपने कुँवर बहुमन्यु को मेरे साथ करदेवें।

क्रोधमल–(अपनी जगह से उठकर,) हां हां चुगल कुमारीजी इसमें हजूर के हुक्म की ज़रूरत तुमने क्या बिचारी, वो तुम्हारे साथ सरकारी कामकेलिये जानेको सर और आंखों से हाज़िर है।

(चुगलकुमारी और बहुमन्यु साथ होकर विदाहोते हैं) यह सुप्ना सुमतिने देखा और दिलमें बिचार किया कि आज फिर कोई विघ्न आनेवाला मालूम होता है, इसलिये उस ने उठकर देखा तो उसके पति अपने बिस्तर पर और नौकर और दासियां सबके सब गहरी नींद सोरहे हैं किसी को गाढ़ी निद्रा से जगाना अनुचित समझकर यहभी सोगई।

(चुगलकुमारी और बहुमन्यु की बातचीत)

(अक्षर च, चुगलकुमारी का और अक्षर ब, बहुमन्यु का समझना चाहिये)।

च०–चलो भैया बहुमन्यु विचार करैं कि कौनसी विद्या के द्वारा सुमति वशमें आवैगी।

ब०–बहन क्या तमको दस बीस विद्या याद हैं।

चु०—इसमें क्या सन्देह है, विद्याओं से भरा यह मेरा देह है।

ब्रु०—अच्छा पहिले यह देखो कि सुमति क्या कर रही है और उसका पति कहां है।

चु०—मैंने एक विद्या से जानलिया कि इस समय दोनों सोरहे हैं, और सेठका विस्तर सेठानी के विस्तर से दोहाथ दूर है।

ब्रु०—तो तुमही सोचो कि ऐसी हालत में वो कैसे वसमें आसक्ती है।

चु०—भैया मैंने तो यह जतन सोचा है कि स्वप्न विद्या के द्वारा हम तुम दोनों इन दोनों शरीरों के मनोराज्यमें प्रवेश करके इन स्त्री पुरुषों की आपस में खटपट करादेवें, जहां दोनों के दिल फटे, सत्सङ्ग से हटे जरूर समझना चाहिये।

ब्रु०—तौ मैं तो यह विद्या जानताही नहीं कैसे मनोराज्य में प्रवेश करूंगा।

चु०—चिन्ता न कर मैं अपने साथ तुझको भी लिये चलतीहूं, परन्तु यह शर्त है कि मैं जो कुछ करूं और कहूं उसी के अनुसार तू कृत करना, मैं एक लड़की आठ बरस की उम्र की बनतीहूं और तू आठ नो बरस का बालक बनजा।

यह कहकर चुगली ने अपने और बहुमन्यु के शरीर पर ज्यों हाथ रखकर संकल्प किया दोनों आठ २ बरस के लड़के लड़की बनगये, और चुगलकुमारी ने अपने को

सेठ जीवाराम के मनोराज्य में प्रवेश किया, जीवाराम मनोराज्य में (स्वप्नअवस्था में) देखता है कि एक निहायत खूब सूरत आठ बरस की कन्या उसके पास आबैठी है ।

॥ जीवाराम और कन्या की बातचीत ॥

जी०—अरी बाई तू क्यों आई और किस की बाई है ।

कन्या—सेठजी ! मैं सेठ धनरूपमल करोड़ पती के मुनीब की लड़कीहूं, जो तुम्हारी सुसराल के मकान के पासही रहते हैं ।

जी०—फिर यहां कैसे आनाहुवा ।

कन्या—हमारी बाईजी महाराज जो तुम्हारे साथ ब्याही हैं उनसे कछु काम है बताओ वो कहां है ?

जी०—वो तुमको यहां ही मिलजावेगी, परन्तु बताओ काम क्या है ।

कन्या—काम उन्हीं से कहने का है, दूसरे को कहने को मना करदिया है ।

जी०—नहीं २ बाई ज़रूर कहो, हमसे क्या परदा है, जब तुम्हारी बाईजी हमारी घरवाली हैं तो हममें उनमें फ़र्कही क्या है, तेरे वास्ते दोनों बराबर हैं ।

कन्या—महाराज जीजाजी ! आप मेरानाम जीजी बाई से न लो तो कहदूं, नहीं तो वो मुझे मारेंगी ।

जी०—अच्छा उन से नहीं कहूंगा, पर मुझे सच्ची बात हो वो बतलाना ।

कन्या–जीजाजी ! मेरे पिता जिस सेठके मुनीब हैं उस सेठके कुँवर सुन्दरस्वरूपजी ने एक चिट्ठी मेरे हाथ भेजी थी, वो मेरे भाई के पास है, भाई पीछे पीछे आरहा है, बहुमन्यु को चिट्ठी देकर चुगलकुमारी कह आई थी कि थोड़ी देरमें आजाना, वो आपहुंचता है।

जी०–(लड़के को देखकर बहुत खुश होकर) अहा यहही तेरा भाई है

कन्या–जी हां।

जी०–वो चिट्ठी कहां हैं जो सेठ धनरूप के कुँवर सुन्दर स्वरूप ने भेजी है।

(लड़का चिट्ठी चुगलकुमारी को देता है)

कन्या–सेठजी ! यह चिट्ठी तो मैं आपको नहीं दिखासक्ती क्यों कि सुन्दर स्वरूप ने मुझे बहुत बड़ी सौगन्द दिलाई है।

जी०–नहीं बेटी तू कुछ चिन्ता न कर न किसी से डर, सौगन्द दूसरे के दिलाने से नहीं लगती तू ने तो नहीं खाई है.

(यह कहकर लड़की के हाथ से चिट्ठी लेकर पढ़ता है)

(चिट्ठी का मज़मून इश्क से भरा हुवा और ऐसा था जिस से सुन्दरस्वरूप का अनुचित सम्बन्ध सुमति के साथ पायाजाता है उर्दू पुस्तक में पूरा लिखा है)।

इस मज़मून को पढ़तेही जीवाराम जाग उठा और देखा कि सचमुच वो लड़का और लड़की सामने मौजूद है चिट्ठी को लड़के के हाथ से लेकर फिर गौरसे पढ़ा और

बहुमन्यु का सूक्ष्मशरीर जीवाराम के शरीर में प्रवेश करगया, उस को मालूम हुआ कि लड़का कहीं गायब होगया, अबतो सेठ जीवाराम क्रोध से व्याकुल होगये और चाहते थे कि इसी समय सुमति को मारना पीटना शुरू करें आंखें अंगारे जैसी लाल होगई, शरीर कांपने लगा, लड़की से कहा कि जा यह चिट्ठी अब तुझे नहीं मिलेगी।

कन्या—हाथ जोड़कर आंखों में आंसू भरकर कहने लगी कि जीजाजी आपने मेरी मौत का सामान करलिया, अब हम दोनों बहन भाइयों को सुंदरस्वरूप जिन्दा नहीं छोड़ेगा, इसलिये कृपा करके हमारी बिनती मानलीजिये हत्या हमारी सरपर न लीजिये, इतना सब्र कीजिये कि यह चिट्ठी सुमतिजी के हाथ में पहुंचा ने दीजिये, पीछे जो जीचाहे सो कीजिये।

जीवाराम दिल में सोचता है कि यह बात भी देखलूं कि सुमति इस चिट्ठी को लेकर क्या जवाब देती है, इस लिये चिट्ठी उस लड़की के हाथ में वापिस देकर कहने लगे कि अच्छा तेरी बाल अवस्था पर मुझे दया आगई, इसलिये वापिस देताहूं मैं बनावटी तोरपर सोये जाता हूं, तू यह चिट्ठी सुमति को देकर उस से इस का जवाब लिखा ले।

चुगली दिल में सोचती है कि काम तो बनगया परन्तु सुमति को भी जाल में फँसाना जरूरी बात है, अब उस की स्वप्न अवस्था में ही उस के साथ बातचीत करके फिर जगाना चाहिये, ऐसा बिचार कर के चुगल कुमारी सुमति के मनोराज्य में प्रवेश करती और सुमति से यों बातचीत करती है।

सुमति-(ख्वाब में उस खूब सूरत बला को देख कर) अरी कुमारी तू कौन है ?

कन्या-सेठानीजी! मैं आप की सुसराल के मकान की पड़ोसनहूं सेठ जीवाराम के पास आई हूं वो कहां हैं ?

सुमति-उन से क्या काम है मुझे भी बताओ ?

कन्या-आप से कहने की बात नहीं उन्हीं से कहूंगी।

सुमति-(हटकरके) ऐसी कोनसी बात है जो दूसरे से कहनेकी नहीं, बाईजी! मैं किसीसे नहीं कहूंगी, तुम्हें मेरी सौगन्द मुझे तो कहही दो।

कन्या-अच्छा कौरानीजी! तुमको मेरे गले की सौगन्द है किसी से ज़िकर न करना, तुम्हारी सुसरालके मकान के पास एक बड़ी हवेली तुमने ब्याहमें गई जब देखी होगी, उसमें एक कश्मीरन मांजी रहती हैं, उन मांजी के एक कन्या बहुत सुन्दरी सोलह वर्ष की है उसका नाम चंचला है, तुम्हारे पतिके साथ उसकी बहुत प्रीति है, उसने एक चिठ्ठी सेठजी को लिखी है. वो मैं सेठजी को ही दूंगी।

(सुमति उस चिट्ठी को जबरदस्ती कन्याके हाथसे छीनकर पढती है,)

मज़मून-चिठ्ठी का ऐसा है जिससे जीवारामका अशुद्ध प्रेम चंचला से प्रगट होता है, उस चिट्ठी को पढकर सुमति चोंककर जाग उठती है और उस कन्याको सामने बैठा देखकर अचरज करती है कि क्या बात है, अन्तःकरण में कुछ क्रोध भड़कना चाहता है, परन्तु पतिव्रत धर्म उस

को रोकेहुये है ।

सुमति–(उस लड़की से) अच्छा बाईजी मैंने चिट्ठी बांचली, इसीको वापिस जाकर देदो ।

कन्या चिट्ठी लेकर गायब होजाती है और सेठ जीवारामका गुस्सा और भी ज्यादा बढता है क्योंकि उसको निश्चय होगया कि यह वोही चिट्ठी थी जो सुमति के यारने उसे लिखी थी, इसने चिट्ठी पढकर लड़की को वापिस देकर उसे भगादिया है ।

॥ स्त्री पुरुषा की आपस में वार्ता ॥

जीवाराम–(बिस्तरसे उठकर) यह कौन लड़की थी और कैसी चिट्ठी लाई थी ।

सुमति–प्राणनाथ! बिलकुल वाहियात बातथी मैं ऐसी बातपर कब ध्यान देतीहूं, यह लड़की भी कोई माया की मूरत मालूम होती थी मैंने उसे फटकार दिया, आपतो आराम कीजिये एक नींद और लेलीजिये, फिर प्रभातकी संध्या का समय आनेवाला है और सत्संग का लाभ लेने के लिये जल्दी खटके से निबड़ना होगा ।

जीवाराम–बस होचुका सत्सङ्ग डेराडण्डा उठाकर चलनेकी तैयारी करो, हमने तुम्हारा सारा भेद जानलिया; तुम मेरे साथ बनावटकी प्रीत दिखलाकर मुझे छलती हो मैंने मरम पहिचानलिया, अब ज्यादा बाते न बनाओ; मेरी गुस्सेकी आग न भड़काओ. स्त्रियों का कभी भरोसा न करना चाहिये. यह बात बहुत सच है मैंने तुमपर भरोसा किया बड़ाभारी धोका खाया ।

सुमति–(हाथजोड़कर) स्वामी आप जो कुछ आज्ञा करते हैं सत्य और सार है, यह शरीर तो अपराधों से भरा हुआ बाल २ गुनहगार है, परंतु सत्य और असत्य का अवश्य कर्त्तव्य निर्णय है, दासीने आज क्या अपराध किया ज़रा उसको कृपा करके प्रकट तो करें।

जीवाराम–बस बस मीठी मीठी बात न बनाओ, अब किसी और को फन्दे में फँसाओ मैंने वो चिट्ठी सुन्दर स्वरूप की बांचली, तुम्हारी और उस की जैसी दृढप्रीति है जाँचली, इसी कारण से तुमने उस चिट्ठी को पास नहीं रक्खा ना मुझे देखने दिया, अब चुप होजाओ इसी में खैर है।

सुमति–हे स्वामी क्या फ़रमाते हैं, कैसा सुन्दर स्वरूप और किस को उस के साथ प्रीति ?

जीवाराम–वो धनरूपमल किरोड़पति का कुँवर जो तुम पर मरता है।

सुमति–महाराज ! क्या फ़रमा रहे हैं, इस दासी के अखंड सत् और धर्म को क्यों वृथा कलंक लगारहे हैं, न यह दासी धनरूपमल को जानती है न सुंदर स्वरूप को।

जीवाराम–अच्छा तुम्हारे मयके की हवेली के पास पड़ोस में इस नामका कोई सेठ नहीं है।

सुमति–कृपानिधान ! दासी ने तो कभी यह नाम तक भी नहीं सुने, आपको किसने बहकादिया।

अब सुमतिने जो कलियुग महाराज का दर्बार ख्वाबमें

[illegible] वो उसे याद आगया, तव कहने

[illegible] प्राणपतिजी आप वहुतही भोले सरद[illegible] हैं, यह सव लीला कलियुग महाराज के दूतों की है, मैंने आज पहिलेही स्वपना देखा था कि कलियुग ने कामदेवको भेजाथा वो यहां से [illegible]रकर अवतक उनके पास नहीं पहुंचा, तव चुग़लचंद अफ़सर ख़बर की संमति से यह माया रची गई है, मैं भी धोके में आगईथी, एक कश्मीरन की चिठी आप के नामकी जो लड़की लाई थी, मैंने वापिस करके कहदिया कि उसी को देदे, आपके पड़ोसमें कौन कश्मीरन रहती है, क्या किसी से आपकी प्रीति है सत्य फ़रमादीजिये ।

जीवाराम–(क्रोध शांत करके) कौन कश्मीरन ? हमारे पड़ोस में तो कोई कश्मीरन नहीं है न किसीसे मेरी प्रीति है, अव मालूम होगया कि यह कारर्वाई कलियुगी की है मैं धोका खागया, प्राणप्यारी, तुम धन्य हो जो खुद सँभलजाती हो और मुझे भी इन दूतों के पंजेसे निकाल लेती हो, मैंने जो कठोर शब्द मुँहसे निकालदिये उसकी क्षमा चाहता हूं । फिर दोनों आराम करते हैं ॥

प्रथम भाग सम्पूर्ण हुवा ।

* इति शुभम् *